वैदिकपुस्तकमाला—षष्ठ पुष्प

ऋग्वेद-संहिता

[सरल-हिन्दी-टीका-सहित]

षष्ठ अष्टक (दोनों खण्ड)

टीकाकार

पण्डित रामगोविन्द त्रिवेदी वेदान्तशास्त्री

("दर्शन-परिचय," "हिन्दी-विष्णु-पुराण," "हिन्दीपुस्तक-कोष," "राजर्षि प्रह्लाद," "भक्त ध्रुव," "महासती मदालसा," "रत्नावली" आदिके लेखक, 'आर्यमहिला" (बनारस), "विश्वदूत" (रंगून), "सेनापति" (कलकत्ता), "गङ्गा" (सुल्तानगंज) आदिके भूतपूर्व सम्पादक, "गीताप्रचारक-महामण्डल" (मोरिशस) के जन्मदाता, "दक्षिण अफ्रीकन सनातनधर्म-महामण्डल" (डरबन, नेटाल) के आजीवन सभापति तथा भारतधर्ममहामण्डल (बनारस) के महोपदेशक)

—* और *—

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

(प्राइवेट सेक्रेटरी, बनैलीराज्याधिपति साहित्य-विभूषण कुमार कृष्णानन्द सिंह बहादुर तथा "गङ्गा" और "वैदिकपुस्तकमाला"के अन्यतम जन्मदाता एवम् अध्यक्ष)

—\\\\|/—

प्रकाशक

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

सञ्चालक, "वैदिकपुस्तकमाला," सुल्तानगंज (ई० आई० आर०)

मूल्य २) } कार्त्तिक, १९९२ विक्रमीय { प्रथम संस्करण २०००

ऋग्वेद-संहिता

[सरल-हिन्दी-टीका-सहित]

षष्ठ अष्टक (दोनों खण्ड)

टीकाकार

पण्डित रामगोविन्द त्रिवेदी वेदान्तशास्त्री

("दर्शन-परिचय," "हिन्दी-विष्णु-पुराण," "हिन्दीपुस्तक-कोष," "राजर्षि प्रह्लाद," "भक्त ध्रुव," "महासती मदालसा," "रत्नावली" आदिके लेखक, 'आर्यमहिला" (बनारस), "विश्वदूत" (रंगून), "सेनापति" (कलकत्ता), "गङ्गा" (सुलतानगंज) आदिके भूतपूर्व सम्पादक, 'गीताप्रचारक-महामण्डल" (मोरिशस) के जन्मदाता, "दक्षिण अफ्रीकन सनातनधर्म-महामण्डल" (डरबन, नेटाल) के आजीवन सभापति तथा भारतधर्ममहामण्डल (बनारस) के महोपदेशक)

—* और *—

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

(प्राइवेट सेक्रेटरी, बनैलीराज्याधिपति साहित्य-विभूषण कुमार कृष्णानन्द सिंह बहादुर तथा "गङ्गा" और "वैदिकपुस्तकमाला"के अन्यतम जन्मदाता एवम् अध्यक्ष)

प्रकाशक

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

सञ्चालक, "वैदिकपुस्तकमाला," सुलतानगंज (ई० आई० आर०)

मूल्य २) | कार्त्तिक, १९९२ विक्रमीय | प्रथम संस्करण २०००

मिथिला प्रेस,
खलीफाबाग, भागलपुरमें मुद्रित

वैदिक-पुस्तकमालाकी नियमावली

(१) इस "माला"में हिन्दी-अनुवाद-सहित चारो वेद और विशेषतः वैदिक-ग्रन्थ-पुष्प ही गूँथे जायँगे।

(२) ॥) भेजकर "माला"के स्थायी ग्राहक बननेवालोंको किसी भी पुस्तकपर डाकखर्च नहीं देना पड़ेगा।

(३) स्थायी ग्राहकोंको "माला"में प्रकाशित सभी पुस्तकोंको खरीदना होगा।

(४) "माला"में प्रकाशित पुस्तकें वी० पी० से भेजी जायँगी।

सचालक, "वैदिक-पुस्तकमाला," सुलतानगंज (ई० आई० आर०)

षष्ठ अष्टक (दोनों खण्डों) की कुछ जानने योग्य बातें

- इन्द्र द्वारा अभ्रिगु और सूर्यका बचाया जाना ८।१०।२
- इन्द्रने सहस्र संख्यक वृत्र आदि असुरोंका बध किया ८।१२८
- सूर्य किरणोंसे शत्रुओंका जलाया जाना ८।१२।९
- हरि नामक अश्वों द्वारा इन्द्रका वहन होना ८।१२।२५
- त्रिकद्रुक नामक यज्ञमें देवों द्वारा इन्द्रका सम्मान ८।१३।१८
- इन्द्र द्युलोकमें मेघको सुलाते हैं और पृथ्वीको वृष्टिदानसे सुस्थिर करते हैं ८।१४।५
- इन्द्रने गौओंको चुरानेवाले पणियोंके नेता बल असुरको अधोमुख किया ८।१४।८
- जलके फेनोंके द्वारा इन्द्रने नमुचिके सिरको छिन्न किया ८।१४।१३
- इन्द्रने आयु और मनुके लिये सूर्य आदि ज्योतियोंको प्रकट किया था ८।१५।५
- शचीपति इन्द्र ८।१५।१३
- इन्द्रका शिरस्त्राण ८।१७।४
- शृङ्गवृषाके पुत्र इन्द्र ८।१७।१३
- त्रसदस्यु द्वारा अग्निकी स्तुति ८।१९।३२
- त्रसदस्युका गोदान ८।१९।३७
- हिरण्मय रथके मध्यमें मरुतोंकी वीणा ८।२०।८
- जड़ी-बूटीसे चिकित्सा ८।२०।२६
- त्रसदस्युके पुत्र तृक्षिका प्रचुर धन प्राप्त करना ८।२२।७
- पक्थ राजाकी रक्षा और बभ्रुका सोमपान ८।२२।१०
- विश्वमना और स्थूलयूप ऋषिकी अग्नि-पूजा ८।२३।२५
- व्यश्वके पुत्र विश्वमना ही इन्द्र हैं ८।२४।२३
- राजा वरुका गोमतीके तटपर निवास ८।२४।३०
- मरुतों द्वारा नौकाकी रक्षा ८।२५।११
- युद्धकर्ता विष्णु ८।२५।१२
- त्वष्टाके जामाता ८।२६।२२
- तैंतीस देवता ८।२८।१
- मरुतोंके सात प्रकारके आयुध ८।२८।५
- त्वष्टाका लौहमय कुठार ८।२९।३
- विष्णु द्वारा तीन पैरोंसे तीनों लोकोंका प्रक्रमण ८।२९।७
- स्वर्णालंकृत कुमार ८।३१।८
- सन्तति-लाभके लिये रोमश और ऊधका संयोग ८।३१।९
- सृबिन्द, अनर्शनि, पिप्रु, दास और अहीशुवका बध ८।३२।२
- इन्द्रने हजारों शत्रुओंको विदारित किया ८।३२।१८
- तुषारजलसे मेघका फूटना ८।३२।२६
- पीले रूपवाले और गोमान् अन्नकी याचना ८।३३।३
- इन्द्रका सोने (स्वर्ण) का रथ ८।३३।४
- प्रायोगिका पुरुषसे स्त्री बनना, स्त्रीका अवश मन और उसकी छोटी बुद्धि ८।३३।१७
- पर्दा-प्रथाका उल्लेख ८।३३।१९
- बाज, तेदुआ और भेड़ ८।३४।२ और ३
- हंस, शुक, हारीत और भैंस ८।३४।७ और ८
- वैश्यका उल्लेख ८।३४।१८
- जलमध्यके विजेता इन्द्र ८।३६।५ और ६
- सात नदियाँ, मान्धाता और यौवनाश्व ८।३९।८

ऋग्वेद-संहिता

[हिन्दी-टीका-सहित]

६ अष्टक । ८ मण्डल । १ अध्याय । २ अनुवाक ।

१२ सूक्त

इन्द्र देवता । कण्वगोत्रीय पर्वत ऋषि । उष्णिक् छन्द ।

य इन्द्र सोमपातमो मदः शविष्ठ चेतति ।
येनाहंसि न्यत्रिणं तमीमहे ॥१॥

---

१ इन्द्र, तुम अत्यन्त सोमका पान करनेवाले हो। बलवानोंमें श्रेष्ठ इन्द्र, सोमपान-जनित मदसे प्रसन्न होकर तुम अपने कार्योंको भली भाँति जानते हो। तुम जैसे सोम-जन्य मदसे राक्षसोंको मारते हो, वैसे ही मदसे युक्त होनेपर तुमसे हम याचना करते हैं।

येनादशग्वमध्रिगुं वेपयन्तं स्वर्णरम् ।
येनासमुद्रमाविथा तमीमहे ॥२॥
येन सिन्धुं महीरपो रथाँइव प्रचोदयः ।
पन्थामृतस्य यातवे तमीमहे ॥३॥
इमं स्तोममभिष्टये घृतं न पूत मद्रिवः ।
येना नु सद्य ओजसा ववक्षिथ ॥४॥
इमं जुषस्व गिर्वणः समुद्रइव पिन्वते ।
इन्द्र विश्वाभिरूतिभिर्ववक्षिथ ॥५॥
यो नो देवः परावतः सखित्वनाय मामहे ।
दिवो न वृष्टिं प्रथयन्ववक्षिथ ॥६॥
ववक्षुरस्य केतव उतवज्रो गभस्त्योः ।
यत् सूर्यो न रोदसी अवर्धयत् ॥७॥

---

२ तुमने सोमके जिस प्रकारके मदसे युक्त होकर अङ्गिरागोत्रीय अध्रिगुको और अन्धकार-विनाशक तथा सबके नेता सूर्यको बचाया था और जैसे मदसे युक्त होकर तुमने समुद्र (वा अन्तरीक्ष) को बचाया था, वैसे ही मदसे सम्पन्न होनेपर हम तुमसे (धनकी) याचना करते हैं।

३ जैसे सोमपान-जन्य मदके कारण (रथीके) रथके समान प्रचुर वृष्टि-जलको तुम समुद्रकी ओर भेजते हो, तुम्हारे वैसे ही मदसे युक्त होनेपर हम, यागपथकी प्राप्तिके लिये, याचना करते हैं।

४ वज्री इन्द्र, जिस स्तोत्रसे स्तुत होकर तुम अपने बलसे तुरत हमारा मनोरथ पूर्ण करते हो, अभीष्ट-प्राप्तिके लिये घृतके समान उसी पवित्र स्तोत्रको जानो (ग्रहण करो)।

५ स्तुति द्वारा आराधनीय इन्द्र, इस स्तोत्रको ग्रहण करो। वह स्तोत्र समुद्रके समान बढ़ता है। इन्द्र, उस स्तोत्रसे तुम सारी रक्षाओंके साथ हमें कल्याण देते हो।

६ दूर देशसे आकर इन्द्रने हमारी मैत्रीके लिये धन दिया है। इन्द्र, द्युलोकसे वृष्टिके समान हमारे धनका विस्तार करते हुए तुम हमें श्रेय देनेकी इच्छा करते हो।

७ जब इन्द्र सबके प्रेरक आदित्यके समान द्यावापृथिवीको वृष्टि आदिसे बढ़ाते हैं, तब इन्द्रकी पताकाएँ और इन्द्रके हाथोंमें अवस्थित वज्र हमें कल्याण देते हैं।

यदि प्रवृद्ध सत्पते सहस्रं महिषाँ अघः ।
आदित्त इन्द्रियं महि प्र वावृधे ॥८॥
इन्द्रः सूर्यस्य रश्मिभिर्न्यर्शसानमोषति ।
अग्निर्वनेव सासहिः प्र वावृधे ॥९॥
इयं त ऋत्वियावती धीतिरेति नवीयसी ।
सपर्यन्ती पुरुप्रिया मिमीत इत् ॥१०॥
गर्भो यज्ञस्य देवयुः क्रतुं पुनीत आनुषक् ।
स्तोमैरिन्द्रस्य वावृधे मिमीत इत् ॥११॥
सनिर्मित्रस्य पप्रथ इन्द्रः सोमस्य पीतये ।
प्राची वाशीव सुन्वते मिमीत इत् ॥१२॥
यं विप्रा उक्थवाहसोऽभिप्रमन्दुरायवः ।
घृतं न पिप्य आसन्यृतस्य यत् ॥१३॥

८ प्रवृद्ध और अनुष्ठाताओंके रक्षक इन्द्र, जिस समय तुमने सहस्र-सङ्ख्यक वृत्र आदि असुरोंका बध किया, उसके अनन्तर ही तुम्हारा महान् बल भली भाँति बढ़ा ।

९ जैसे आग (दावानल) वनोंको जलाती है, वैसे ही इन्द्र सूर्यकी किरणोंके द्वारा बाधक शत्रुको जलाते हैं। शत्रुओंको दबानेवाले इन्द्र भली भाँति बढ़ते हैं।

१० मेरी यह स्तुति तुम्हारे पास जाती है। वह स्तुति वसन्त आदिमें किये जाने योग्य यज्ञ-कार्य-वाली, अतीव अभिनव, पूजक और बहुत ही प्रसन्नताकारक है।

११ स्तोता इन्द्रके यज्ञका कर्त्ता है। वह इन्द्रके पानके लिये अनुषङ्गी सोमको "दशापवित्र"से पवित्र करता है। वह स्तोत्र द्वारा इन्द्रको वर्द्धित करता है और स्तोत्रोंसे इन्द्रके गुणोंकी सीमा बाँधता है।

१२ मित्र स्तोताके लिये दाता इन्द्रने गुण-गान करनेवाले अभिषव-कर्त्ताके वाक्यकी तरह धन-दानके लिये अपने शरीरको बढ़ा लिया। यह स्तुत वाक्य इन्द्रके गुणोंकी सीमा करता है।

१३ विप्र अथवा मेधावी और स्तोत्र-वाहक मनुष्य जिन इन्द्रको भली भाँति प्रमत्त करते हैं, इन इन्द्रके मुखमें घृतके समान यज्ञका हव्य सिक्त करूँगा।

उत स्वराजे अदितिः स्तोममिन्द्राय जीजनत् ।
पुरुप्रशस्तमूतय ऋतस्य यत् ॥१४॥
अभि वह्नय ऊतयेऽनूषत प्रशस्तये ।
न देव विव्रता हरी ऋतस्य यत् ॥१५॥
यत् सोममिन्द्र विष्णवि यद्वा घ त्रित आप्त्ये ।
यद्वा मरुत्सु मन्दसे समिन्दुभिः ॥१६॥
यद्वा शक्र परावति समुद्रे अधि मन्दसे ।
अस्माकमित् सुते रणा समिन्दुभिः ॥१७॥
यद्वासि सुन्वतो वृधो यजमानस्य सत्पते ।
उक्थे वा यस्य रण्यसि समिन्दुभिः ॥१८॥
देवन्देवं वोऽवस इन्द्रमिन्द्रं गृणीषणि ।
अधा यज्ञाय तुर्वणे व्यानशुः ॥१९॥

१४ अदितिने स्वयं शोभमान (स्वराट्) इन्द्रके लिये, रक्षाके निमित्त, अनेकोंके द्वारा प्रशंसित सत्य-सम्बन्धी स्तोत्रको उत्पन्न किया ।

१५ यज्ञ-वाहक ऋत्विक् लोग रक्षा और प्रशंसाके लिये इन्द्रकी स्तुति करते हैं । देव इन्द्र, इस समय त्रिविध कर्मा हरि नामक दोनों अश्व, यज्ञमें जो है, उसके लिये तुम्हें वहन करते हैं ।

१६ हे इन्द्र, विष्णु, आमन्त्रित (राजर्षि) अथवा मरुतोंके आनेपर दूसरोंके यज्ञमें उनके साथ सोम पीकर प्रमत्त होते हो, तथापि हमारे सोमसे भली भाँति प्रमत्त होओ ।

१७ इन्द्र, यद्यपि दूर देशमें द्रवशील सोमपानसे प्रमत्त होते हो, तथापि हमारा सोम प्रस्तुत होनेपर उसके साथ भली भाँति रमण करो ।

१८ सत्य पालक इन्द्र, तुम सोमाभिषव-कर्ता यजमानके वर्द्धक हो । तुम जिस यजमानके उक्थ मन्त्रसे प्रसन्न होते हो, उसके सोमसे प्रसन्न होओ ।

१९ ऋत्विको, तुम्हारे रक्षणके लिये जिन इन्द्रकी मैं स्तुति करता हूँ, उन्हीं इन्द्रको मेरी स्तुतियाँ, शीघ्र भजन और यज्ञके लिये, व्याप्त करें ।

यज्ञेभिर्यज्ञवाहसं सोमेभिः सोमपातमम् ।
होत्राभिरिन्द्रं वावृधुर्व्यानशुः ॥२०॥

महीरस्य प्रणीतयः पूर्वीरुत प्रशस्तयः ।
विश्वा वसूनि दाशुषे व्यानशुः ॥२१॥

इन्द्रं वृत्राय हन्तवे देवासो दधिरे पुरः ।
इन्द्रं वाणीरनूषता समोजसे ॥२२॥

महान्तं महिना वयं स्तोमेभिर्हवनश्रुतम् ।
अर्केरभि प्र णोनुमः समोजसे ॥२३॥

न यं विवक्तो रोदसी नान्तरिक्षाणि वज्रिणम् ।
अमादिदस्य तित्विषे समोजसः ॥२४॥

यदिन्द्र पृतनाज्ये देवास्त्वा दधिरे पुरः ।
आदित्ते हर्यता हरी ववक्षतुः ॥२५॥

२० हव्य, स्तुति और सोम द्वारा यज्ञमें लाने योग्य और सबसे अधिक सोम पान करनेवाले इन्द्रको स्तोता लोग वर्द्धित और व्याप्त करते हैं।

२१ इन्द्रका धन-प्रदान प्रचुर है, इन्द्रकी कीर्ति बहुत है। वह हव्य-दाता यजमानके लिये सारा धन व्याप्त करते हैं।

२२ वृत्र-वधके लिये देवोंने इन्द्रको (स्वामि-रूपसे) धारण किया था। समीचीन बलके लिये स्तुति-वचन इन्द्रका स्तव करते हैं।

२३ महिमामें महान् और आह्वान सुननेवाले इन्द्रको, स्तोत्र द्वारा और पूजा-मन्त्र द्वारा, समीचीन बलकी प्राप्तिके लिये, बार-बार स्तुति करते हैं।

२४ जिन वज्रधर इन्द्रको द्यावापृथिवी और अन्तरीक्ष अपने पाससे अलग नहीं कर सकते, उन्हीं इन्द्रके बलसे बल लेनेके लिये संसार प्रदीप्त होता है।

२५ इन्द्र, जिस समय युद्धमें देवोंने तुम्हें सम्मुख धारण किया था, उसी समय कमनीय हरि नामक अश्वोंने तुम्हें वहन किया था।

यदा वृत्रं नदीवृतं शवसा वज्रिन्नवधीः ।
आदित्ते हर्यता हरी ववक्षतुः ॥२६॥

यदा ते विष्णुरोजसा त्रीणि पदा विचक्रमे ।
आदित्ते हर्यता हरी ववक्षतुः ॥२७॥

यदा ते हर्यता हरी वावृधाते दिवेदिवे ।
आदित्ते विश्वा भुवनानि येमिरे ॥२८॥

यदा ते मारुतीर्विशस्तुभ्यमिन्द्र नियेमिरे ।
आदित्ते विश्वा भुवनानि येमिरे ॥२९॥

यदा सूर्यममुं दिवि शुक्रं ज्योतिरधारयः ।
आदित्ते विश्वा भुवनानि येमिरे ॥३०॥

इमान्त इन्द्र सुष्टुतिं विप्र इयर्ति धीतिभिः ।
जामिं पदेव पिप्रतीं प्राध्वरे ॥३१॥

२६ वज्रधर इन्द्र, जिस समय तुमने जलको रोकनेवाले वृत्रको बलके द्वारा मारा था, उसी समय कमनीय हरि तुम्हें ले आये थे ।

२७ जिस समय तुम्हारे (अनुज) विष्णुने अपने तीन पैरोंसे तीनों लोकोंको (वामनावतारमें) नापा था, उसी समय तुम्हें दोनों कमनीय हरि ले आये थे ।

२८ इन्द्र, जब तुम्हारे दोनों कमनीय हरि प्रतिदिन बढ़े थे, उसके बाद ही तुम्हारे द्वारा सारा संसार नियमित होता है ।

२९ इन्द्र, जिस समय तुम्हारी मरुद्रूप प्रजा सारे भूतोंको नियमित करती है, उसी समय तुम सारे संसारको नियमित करते हो ।

३० इन्द्र, जिस समय इन निर्मल-ज्योति सूर्यको तुम द्युलोकमें स्थापित करते हो, उसी समय तुम सारा संसार नियमित करते हो ।

३१ इन्द्र, जैसे लोग संसारमें अपने बन्धुको उच्च स्थानमें ले जाते हैं, वैसे ही मेधावी स्तोता इस प्रसन्नता-दायक सुन्दर स्तुतिको, परिचर्य्याके साथ, यज्ञमें तुम्हारे पास ले जाता है ।

यदस्य धामनि प्रिये समीचीनासो अस्वरन् ।
नाभा यज्ञस्य दोहना प्राध्वरे ॥३२॥
सुवीर्यं स्वश्व्यं सुगव्यमिन्द्र दद्धि नः ।
होतेव पूर्वचित्तये प्राध्वरे ॥३३॥

३ अनुवाक । १३ सूक्त

इन्द्र देवता । कण्वगोत्रीय नारद ऋषि । उष्णिक् छन्द ।

इन्द्रः सुतेषु सोमेषु क्रतुं पुनीत उक्थ्यम् ।
विदे वृधस्य दक्षसो महान् हि षः ॥१॥
स प्रथमे व्योमनि देवानां सदने वृधः ।
सुपारः सुश्रवस्तमः समप्सुजित् ॥२॥
तमह्वे वाजसातय इन्द्रं भराय शुष्मिणम् ।
भवा नः सुम्ने अन्तमः सखा वृधे ॥३॥

३२ यज्ञमें इन्द्रके तेजके प्रीत होनेपर एकत्र स्तोता लोग जिस समय उत्तम रीतिसे स्तुति करते हैं, उस समय इन्द्र, नाभि-स्वरूप यज्ञके अभिषव-स्थान (वेदी) पर धन दो।

३३ इन्द्र, उत्तम वीर्य, उत्तम गौ और उत्तम अश्वसे युक्त धन हमें दो। मैंने प्रथम ही ज्ञान-लाभके लिये होताकी तरह यज्ञमें स्तव किया था।

१ सोमके प्रस्तुत होनेपर इन्द्र यज्ञ कर्त्ता और स्तोताको पवित्र करते हैं। इन्द्र ही वर्द्धक बलकी प्राप्तिके लिये महान् हुए हैं।

२ इन्द्र प्रथम विस्तीर्ण व्योम (विशेष रक्षक) देवसदन (स्वर्ग) में यजमानोंके वर्द्धक हैं। वह प्रारम्भ किये हुए कर्मके समापक हैं। अतीव यशसे युक्त जल-प्राप्तिके लिये वृत्रको जीतते हैं।

३ बलवान् इन्द्रको मैं बल-प्राप्ति-कर युद्धमें बुलाता हूँ। इन्द्र, धनके अभिलषित होनेपर तुम वर्द्धनके लिये हमारे सखा होओ।

इयन्त इन्द्र गिर्वणो रातिः क्षरति सुन्वतः ।
मन्दानो अस्य बर्हिषो विराजसि ॥४॥

नूनं तदिन्द्र दद्धि नो यत्त्वा सुन्वन्त ईमहे ।
रयिं नश्चित्रमाभरा स्वर्विदम् ॥५॥

स्तोता यत्ते विचर्षणिरतिप्रशर्धयद्गिरः ।
वया इवानु रोहते जुषन्त यत् ॥६॥

प्रत्नवज्जनया गिरः शृणुधी जरितुर्हवम् ।
मदेमदे ववक्षिथा सुकृत्वने ॥७॥

क्रीलन्त्यस्य सूनृता आपो न प्रवता यतीः ।
अया धिया य उच्यते पतिर्दिवः ॥८॥

उतो पतिर्य उच्यते कृष्टीनामेक इद्वशी ।
नमोवृधैरवस्युभिः सुते रण ॥९॥

४ स्तुतियों द्वारा भजनीय इन्द्र, तुम्हारे लिये सोमाभिषव-कर्त्ता यजमानकी दी हुई आहुति जाती है। मत्त होकर तुम उस यज्ञमें विराजो।

५ इन्द्र, सोमाभिषव-कर्त्ता जिस धनकी तुमसे प्रत्याशा करते हैं, वह धन तुम अवश्य मुझे दो। विचित्र और स्वर्ग-प्रापक धन भी हमारे लिये ले आओ।

६ इन्द्र, विशेषदर्शी स्तोता जिस समय तुम्हारे लिये शत्रुओंकी पराजय-समर्थ स्तुति करता है और जब सकल वाक्य तुमको प्रसन्न करते हैं, तब शाखाके समान सारे गुण तुमपर आरोहण करते हैं।

७ इन्द्र, पहलेके समान स्तोत्र उत्पन्न करो और स्तोताका आह्वान सुनो। जिसी समय सोमके द्वारा प्रमत्त होते हो, उसी समय शोभन कार्य करनेवाले यजमानके लिये फल देते हो।

८ इन्द्रके सत्य वचन निम्नगामी जलके समान विहार करते हैं। स्वर्ग-पति इन्द्र इस स्तुतिके द्वारा कीर्त्तित होते हैं।

९ वशवाले एक इन्द्र ही मनुष्योंके पालक कहे गये हैं। वही तुम इन्द्र स्तोत्र द्वारा वर्द्धकों और रक्षणेच्छुओंके साथ सोमाभिषवमें रमण करो।

स्तुहि श्रुतं विपश्चितं हरी यस्य प्रसक्षिणा ।
गन्तारा दाशुषो गृहं नमस्विनः ॥१०॥

तूतुजानो महेमतेऽश्वेभिः प्रुषितप्सुभिः ।
आयाहि यज्ञमाशुभिः शमिद्धि ते ॥११॥

इन्द्र शविष्ठ सत्पते रयिं गृणत्सु धारय ।
श्रवः सूरिभ्यो अमृतं वसुत्वनम् ॥१२॥

हवे त्वा सूर उदिते हवे मध्यन्दिने दिवः ।
जुषाण इन्द्र सप्तिभिर्न आ गहि ॥१३॥

आ तु गहि प्र तु द्रव मत्स्वा सुतस्य गोमतः ।
तन्तुं तनुष्व पूर्व्यं यथा विदे ॥१४॥

यच्छक्रासि परावति यदर्वावति वृत्रहन् ।
यद्वा समुद्रे अन्धसोऽवितेदसि ॥१५॥

---

१० स्तोता, तुम विद्वान और विख्यात इन्द्रकी स्तुति करो । इन्द्रके शत्रुजेता दोनों अश्व नमस्कार और हविवाले यजमानके घरमें जाते हैं ।

११ तुम्हारी बुद्धि महाफल-दायिका है । तुम स्निग्ध हो । शीघ्रगामी अश्वके साथ यज्ञमें आगमन करो; क्योंकि उस यज्ञमें ही तुम्हें सुख है ।

१२ श्रेष्ठ, बली और साधु-रक्षक इन्द्र, हम स्तुति करते हैं; हमें धन दो । स्तोताओंको अविनाशी और व्यापक अन्न या यश दो ।

१३ इन्द्र, सूर्योदय होनेपर मैं तुम्हें बुलाता हूँ; दिनके मध्य भागमें तुम्हें बुलाता हूँ । प्रसन्न होकर गतिशील अश्वोंके साथ आओ ।

१४ इन्द्र, शीघ्र आओ और सोम जहाँ है, वहाँ शीघ्र जाओ । दुग्ध-मिश्रित अभिषुत सोमसे प्रीत होओ । अनन्तर मैं जैसा जानता हूँ, वैसे ही पूर्व-कृत विस्तृत यज्ञको निष्पन्न करो ।

१५ हे शक्र और वृत्रघ्न, यदि तुम दूर देशमें हो, यदि समीपमें हो, यदि अन्तरीक्षमें हो, तथापि उन सब स्थानोंसे आकर और सोमपान करके रक्षक होओ ।

इन्द्रं वर्धन्तु नो गिर इन्द्रं सुतास इन्दवः ।
इन्द्रे हविष्मतीर्विशो अराणिषुः ॥१६॥
तमिद्विप्रा अवस्यवः प्रवत्वतीभिरूतिभिः ।
इन्द्रं क्षोणीरवर्द्धयन्वया इव ॥१७॥
त्रिकद्रुकेषु चेतनं देवासो यज्ञमत्नत ।
तमिद्वर्धन्तु नो गिरः सदावृधम् ॥१८॥
स्तोता यत्ते अनुव्रत उक्थान्यृतुथा दधे ।
शुचिः पावक उच्यते सो अद्भुतः ॥१९॥
तदिद्रुद्रस्य चेतति यह्वं प्रत्नेषु धामसु ।
मनो यत्रा वि तद्दधुर्विचेतसः ॥२०॥
यदि मे सख्यमावर इमस्य पाह्यन्धसः ।
येन विश्वा अति द्विषो अतारिम ॥२१॥

१६ हमारी स्तुतियाँ इन्द्रको वर्द्धित करें। अभिषोत सोम इन्द्रको वर्द्धित करें। हविष्मान् मनुष्य इन्द्रके प्रति रत हुए हैं।

१७ मेधावी और रक्षाभिलाषी उन इन्द्रको ही तृप्तिकर आहुतियों द्वारा वर्द्धित करते हैं। पृथिवीके समस्त प्राणी इन्द्रको वृक्ष शाखाकी तरह वर्द्धित करते हैं।

१८ "त्रिकद्रुक" नामक यज्ञमें देवोंने चैतन्य-दाता इन्द्रका मान किया था; हमारी स्तुतियाँ उन्ह सदा वर्द्धक इन्द्रको वर्द्धित करें।

१९ इन्द्र, तुम्हारे स्तोता अनुकूलकर्मा होकर समय-समयपर उक्थोंका उच्चारण करते हैं तुम अद्भुत, शुद्ध और पावक (दूसरोंको पवित्र करनेवाले) होनेसे स्तुत होते हो।

२० जिनके लिये विशिष्ट ज्ञानवाले व्यक्ति स्तोत्र उच्चारण करते हैं, वे ही रुद्र-पुत्र मरुद्गण अपने प्राचीन स्थानोंमें हैं।

२१ इन्द्र, यदि तुम मुझे मैत्री प्रदान करो और इस सोम-रूप अन्नका पान करो, तो हम सारे शत्रुओंका अतिक्रमण कर सकते हैं।

कदा त इन्द्र गिर्वणः स्तोता भवाति शन्तमः ।
कदा नो गव्ये अश्व्ये वसौ दधः ॥२२॥

उत ते सुष्टुता हरी वृषणा वहतो रथम् ।
अजुर्यस्य मदिन्तमं यमीमहे ॥२३॥

तमीमहे पुरुष्टुतं यह्वं प्रत्नाभिरूतिभिः ।
नि बर्हिषि प्रिये सददध द्विता ॥२४॥

वर्धस्वासु पुरुष्टुत ऋषिष्टुताभिरूतिभिः ।
धुक्षस्व पिप्युषीमिषमवा च नः ॥२५॥

इन्द्र त्वमवितेदसीत्था स्तुवतो अद्रिवः ।
ऋतादियर्मि ते धियं मनोयुजम् ॥२६॥

इह त्या सधमाद्या युजानः सोमपीतये ।
हरी इन्द्र प्रतद्वसू अभि स्वर ॥२७॥

२२ स्तुति-पात्र इन्द्र, कब तुम्हारा स्तोता अत्यन्त सुखी होगा ? तुम कब हमें गौ, अश्व और निवास-योग्य धन दोगे ?

२३ अजर इन्द्र, भली भाँति स्तुत और काम-वर्षक हरि नामक दोनों अश्व तुम्हारा रथ हमारे पास ले आवें। तुम अतीव मदसे युक्त हो; हम तुम्हारे पास याचना करते हैं।

२४ महान् और अनेकों द्वारा स्तुत उन्हीं इन्द्रसे तृप्तिकर आहुतियोंके द्वारा हम याचना करते हैं। वह प्रसन्नता-दायक कुशोंपर बैठें। अनन्तर द्विविध (सोम और पुरोडाश) हव्य स्वीकार करें।

२५ बहुतों द्वारा स्तुत इन्द्र, तुम ऋषियों द्वारा स्तुत हो। अपने रक्षणोंके द्वारा हमें बाढ़त करो और हमारे सामने प्रवृद्ध अन्न दान करो।

२६ वज्रधर इन्द्र, इस प्रकार तुम स्तोताके रक्षक हो। सत्यभूत, तुम्हारे स्तोत्रसे युक्त तुम्हारे प्रसन्नता-दायक कर्मको मैं प्राप्त करता हूँ।

२७ इन्द्र, प्रसिद्ध, प्रसन्न और विस्तीर्ण धनवाले दोनों अश्वोंको रथमें जोत करके इस यज्ञमें, सोम-पानके लिये, आओ।

अभि स्वरन्तु ये तव रुद्रासः सक्षत श्रियम् ।
उतो मरुत्वतीर्विशो अभि प्रयः ॥२८॥
इमा अस्य प्रतूर्तयः पदं जुषन्त यद्दिवि ।
नाभा यज्ञस्य सन्दधुर्यथा विदे ॥२९॥
अयं दीर्घाय चक्षसे प्राचि प्रयत्यध्वरे ।
मिमीते यज्ञमानुषग्विचक्ष्य ॥३०॥
वृषायमिन्द्र ते रथ उतो ते वृषणा हरी ।
वृषा त्वं शतक्रतो वृषा हवः ॥३१॥
वृषा ग्रावा वृषा मदो वृषा सोमो अयं सुतः ।
वृषा यज्ञो यमिन्वसि वृषा हवः ॥३२॥
वृषा त्वा वृषणं हुवे वज्रिञ्चित्राभिरूतिभिः ।
वावन्थ हि प्रतिष्टुतिं वृषा हवः ॥३३॥

२८ तुम्हारे जो रुद्र-पुत्र मरुद्गण हैं, वे आश्रय-योग्य इस यज्ञमें आवें और मरुतोंसे युक्त प्रजाएँ भी हमारे हव्यके पास आवें।

२९ इन्द्रकी ये हिंसक मरुत् आदि प्रजाएँ द्युलोकमें जिस स्थानमें हैं, उसकी सेवा (आश्रय) करते हैं। हम लोग जैसे धन प्राप्त कर सकें, इस प्रकार यज्ञके नाभिप्रदेश (उत्तर वेदी) पर रहते हैं।

३० प्राचीन यज्ञ-गृहमें यज्ञ आरम्भ होनेपर ये इन्द्र द्रष्टव्य फलके लिये यज्ञको क्रम-बद्ध देखकर यज्ञको सम्पादित करते हैं।

३१ इन्द्र, तुम्हारा यह रथ मनोरथ-पूरक है, तुम्हारे ये दोनों घोड़े काम-वर्षक हैं। शत-क्रतु (बहु-कर्मा) इन्द्र, तुम अभीष्ट-वर्षी हो और तुम्हारा आह्वान भी ईप्सित-फल-दाता है।

३२ अभिषव करनेवाला पत्थर अभीष्ट-वर्षी है, मत्तता मनोरथ-दायिनी है। यह अभिषुत सोम भी काम-वर्षक है। जिस यज्ञको तुम प्राप्त करते हो, वह भी अभिलषित-वर्षक है। तुम्हारा आह्वान ईप्सित-फल-दाता है।

३३ वज्रधर, तुम अभीष्ट-वर्षक हो। मैं हविका सेचन-कर्त्ता हूँ। मैं नानाविध स्तुतियों द्वारा तुम्हें बुलाता हूं। तुम अपने लिये की गयी स्तुतिको ग्रहण करते हो; इसलिये तुम्हारा आह्वान अभीष्ट-दाता है।

१४ सूक्त

इन्द्र देवता। कण्व-गोत्रीय गोसूक्ति और अश्वसूक्ति ऋषि। गायत्री छन्द।

यदिन्द्राहं यथा त्वमीशीय वस्व एक इत्। स्तोता मे गोषखा स्यात् ॥१॥
शिक्षेयमस्मै दित्सेयं शचीपते मनीषिणे। यदहं गोपतिः स्याम् ॥२॥
धेनुष्ट इन्द्र सूनृता यजमानाय सुन्वते। गामश्वं पिप्युषी दुहे ॥३॥
न ते वर्तास्ति राधस इन्द्र देवो न मर्त्यः। यद्दित्ससि स्तुतो मघम् ॥४॥
यज्ञ इन्द्रमवर्धयद्यद्भूमिं व्यवर्तयत्। चक्राण ओपशं दिवि ॥५॥
वावृधानस्य ते वयं विश्वा धनानि जिग्युषः। ऊतिमिन्द्रा वृणीमहे ॥६॥
व्यन्तरिक्षमतिरन्मदे सोमस्य रोचना। इन्द्रो यदभिनद्वलम् ॥७॥
उद्गा आजदङ्गिरोभ्य आविष्कृण्वन्गुहा सतीः। अर्वाञ्चं नुनुदे वलम् ॥८॥

१ इन्द्र, जैसे तुम्हीं केवल धनाधिपति हो, वैसे ही यदि मैं भी ऐश्वर्य-युक्त हो जाऊँ, तो मेरा स्तोता गो-युक्त हो जाय।

२ शक्तिमान् इन्द्र, यदि तुम्हारी कृपासे मैं गोपति हो जाऊँ, तो इस स्तोताको दान देनेकी इच्छा करूंगा और प्रार्थित धन दूंगा।

३ इन्द्र, तुम्हारी सत्यप्रिय और वर्द्धक स्तुति-रूप धेनु सोमाभिषव-कर्त्ताको गौ और अश्व देती है।

४ इन्द्र, तुम स्तुत होकर धन-दान करनेकी इच्छा करते हो। उस समय तुम्हारे धनका निवारक देवता वा मनुष्य नहीं है।

५ यज्ञने इन्द्रको वर्द्धित किया है। इसलिये कि, इन्द्रने द्युलोकमें मेघको सुलाते हुए पृथिवीको वृष्टि-दानसे सुस्थिर किया है।

६ इन्द्र, तुम वर्द्धन-शील और शत्रुओंके सारे धनोंके जेता हो। हम तुम्हारी रक्षा प्राप्त करेंगे।

७ सोम-जन्य मत्तताके होनेपर इन्द्रने दीप्तिमान् अन्तरीक्षको वर्द्धित किया है; क्योंकि उन्होंने बली मेघको भिन्न किया है।

इन्द्रने गुहामें छिपाई हुई गायोंको प्रकट करके अङ्गिरा लोगोंको प्रदान किया था और गायें चुरानेवाले पणियोंके नेता "वल" असुरको अधोमुख किया था।

इन्द्रेण रोचना दिवो दृह्लानि दृंहितानि च। स्थिराणि न पराणुदे ॥९॥
अपामूर्मिर्मदन्निव स्तोम इन्द्राजिरायते। वि ते मदा अराजिषुः ॥१०॥
त्वं हि स्तोमवर्धन इन्द्रास्युक्थवर्धनः। स्तोतॄणामुत भद्रकृत् ॥११॥
इन्द्रमित् केशिना हरी सोमपेयाय वक्षतः। उप यज्ञं सुराधसम् ॥१२॥
अपां फेनेन नमुचेः शिर इन्द्रोदवर्तयः। विश्वा यदजयः स्पृधः ॥१३॥
मायाभिरुत्सिसृप्सत इन्द्र द्यामारुरुक्षतः। अव दस्यूंरधूनुथाः ॥१४॥
असुन्वामिन्द्र संसदं विषूचीं व्यनाशयः। सोमपा उत्तरो भवन् ॥१५॥

१५ सूक्त

इन्द्र देवता। गोसूक्ति और अश्वसूक्ति ऋषि। उष्णिक् छन्द।

तम्वभि प्र गायत पुरुहूतं पुरुष्टुतम्। इन्द्रं गीर्भिस्तविषमा विवासतम् ॥१॥

९ इन्द्रने द्युलोकके नक्षत्रोंको बल-युक्त और दृढ़ किया था। नक्षत्रोंको उनके स्थानोंसे कोई गिरा नहीं सकता।

१० इन्द्र, समुद्रकी तरङ्गोंके समान तुम्हारी स्तुतियाँ शीघ्र गमन करती हैं। तुम्हारी प्रमत्तता विशेष रूपसे दीप्ति प्राप्त करती हैं।

११ इन्द्र, तुम स्तोत्र द्वारा वर्द्धनीय हो और उक्थ (शस्त्र नामक मन्त्र) द्वारा भी वर्द्धनीय हो। तुम स्तोताओंके कल्याण-कर्ता हो।

१२ केशवाले हरि नामके दोनों अश्व सोमपानके लिये शोभन दानवाले इन्द्रको यज्ञमें ले आते हैं।

१३ इन्द्र, जिस समय तुमने सारे शत्रुओं (असुरों) को जीता था, उस समय जलके फेनके द्वारा ही नमुचिके सिरको छिन्न किया था।

१४ तुम मायाके द्वारा सर्वत्र फैलनेवाले हो। तुमने द्युलोकमें चढ़नेकी इच्छा करनेवाले शत्रुओं (दस्युओं) को निम्नाभिमुख प्रेरित किया था।

१५ इन्द्र, सोमपान करनेसे उत्कृष्टतर होते हुए तुम सोमाभिषवसे हीन जन-समुदायको, परस्पर विरोध कराकर, विनष्ट किया था।

१ अनेकोंके द्वारा बुलाये गये और अनेकोंके द्वारा स्तव किये गये उन्हीं इन्द्रकी स्तुति करो। वचनोंके द्वारा महान् इन्द्रकी परिचर्या करो।

यस्य द्विबर्हसो बृहत् सहो दाधार रोदसी ।
गिरीँरज्राँ अपः स्वर्वृषत्वना ॥२॥

स राजसि पुरुष्टुतँ एको वृत्राणि जिघ्नसे ।
इन्द्र जैत्रा श्रवस्या च यन्तवे ॥३॥

तं ते मदं गृणीमसि वृषणं पृत्सु सासहिम् ।
उ लोककृत्नुमद्रिवो हरिश्रियम् ॥४॥

येन ज्योतींष्यायवे मनवे च विवेदिथ ।
मन्दानो अस्य बर्हिषो वि राजसि ॥५॥

तदद्याचित्त उक्थिनोऽनु ष्टुवन्ति पूर्वथा ।
वृषपत्नीरपो जया दिवेदिवे ॥६॥

तव त्यदिन्द्रियं बृहत्तव शुष्ममुत क्रतुम् ।
वज्रं शिशाति धिषणा वरेण्यम् ॥७॥

२ दोनों स्थानोंमें इन्द्रका पूजनीय महाबल द्यावापृथिवीको धारण करता है । वह शीघ्रगामी मेघ और गमनशील जलको वीर्य द्वारा धारण करते हैं ।

३ अनेकोंके द्वारा स्तुत इन्द्र, तुम शोभा पाते हो । जीतने और सुनने योग्य धनको स्वाधीन करनेके लिये तुम अकेले ही वृत्र आदिका वध करते हो ।

४ वज्रधर इन्द्र, तुम्हारे हर्षकी हम प्रशंसा करते हैं । वह मनोरथ-पूरक, संग्राममें शत्रुओंके लिये अभिभव-कर्त्ता, स्थान विधाता और हरि नामक अश्वोंके द्वारा सेवनीय है ।

५ इन्द्र, जिस मद (हर्ष)के द्वारा "आयु" और "मनु"के लिये सूर्य आदि ज्योतियोंको तुमने प्रकाशित किया था, उसी हर्षसे प्रसन्न होकर तुम प्रवृद्ध यज्ञके कर्त्ता हुए हो ।

६ इन्द्र, प्राचीन समयके समान आज भी उक्थ मन्त्रोंका उच्चारण करनेवाले तुम्हारे उस बलकी प्रशंसा करते हैं । जिस जलके स्वामी पर्जन्य हैं, उसको तुम प्रतिदिन स्वाधान करो ।

७ इन्द्र, स्तुति तुम्हारे उस महान् वीर्यको और तुम्हारा बल तुम्हारे कर्म और वरणीय वज्रको तीक्ष्ण करते हैं ।

तव द्यौरिन्द्र पौंस्यं पृथिवी वर्धति श्रवः ।
त्वामापः पर्वतासश्च हिन्विरे ॥८॥
त्वां विष्णुर्बृहन् क्षयो मित्रो गृणाति वरुणः ।
त्वां शर्धो मदत्यनु मारुतम् ॥९॥
त्वं वृषा जनानां मंहिष्ठ इन्द्र जज्ञिषे ।
सत्रा विश्वास्वपत्यानि दधिषे ॥१०॥
सत्रा त्वं पुरुष्टुतँ एको वृत्राणि तोशसे ।
नान्य इन्द्रात् करणं भूय इन्वति ॥११॥
यदिन्द्र मन्मशस्त्वा नाना हवन्त ऊतये ।
अस्माकेभिर्नृभिरत्रा स्वर्जय ॥१२॥
अरं क्षयाय नो महे विश्वा रूपाण्याविशन् ।
इन्द्रं जैत्राय हर्षया शचीपतिम् ॥१३॥

८ इन्द्र, द्युलोक तुम्हारे बलको बढ़ाता है पृथिवी तुम्हारे यशको वर्द्धित करती है। अन्तरीक्ष और मेघ तुम्हें प्रसन्न करते हैं।

९ इन्द्र महान् और निवास-कारण विष्णु, मित्र और वरुण तुम्हारी स्तुति करते हैं। मरुद्गण तुम्हारी मत्तताके अनन्तर मत्त होते हैं।

१० तुम वर्षक और देवोंमें सर्वापेक्षा दाता हो। तुम सुन्दर पुत्रादिके साथ सारा धन धारण करते हो।

११ बहु-स्तुत इन्द्र तुम अकेले ही महान् शत्रुओंका विनाश करते हो। इन्द्रकी अपेक्षा कोई भी अधिकतर कर्म (वृत्र-बधादि) नहीं कर सकता।

१२ इन्द्र, जिस युद्धमें तुम रक्षाके लिये स्तोत्र द्वारा नाना प्रकारसे स्तुत होते हो, उसी युद्धमें हमारे स्तोताओं द्वारा आहूत होकर शत्रु-बलको जीतो।

१३ स्तोता, हमारे महान् गृहके लिये पर्याप्त और परिव्याप्त रूप (इन्द्रगुण-जात) को स्तुति द्वारा व्याप्त करते हुए कर्म-पालक (शचीपति) इन्द्रकी, जीतने योग्य धनके लिये, स्तुति करो।

१६ सूक्त

इन्द्र देवता। इरिम्बिठि ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र सम्राजं चर्षणीनामिन्द्रं स्तोता नव्यं गीर्भिः। नरं नृषाहं मंहिष्ठम् ॥१॥
यस्मिन्नुक्थानि रण्यन्ति विश्वानि च श्रवस्या। अपामवो न समुद्रे ॥२॥
तं सुष्टुत्या विवासे ज्येष्ठराजं भरे कृत्नुम्। महो वाजिनं सनिभ्यः ॥३॥
यस्यानूना गभीरा मदा उरवस्तरुत्राः। हर्षुमन्तः शूरसातौ ॥४॥
तमिद्धनेषु हितेष्वधिवाकाय हवन्ते। येषामिन्द्रस्ते जयन्ति ॥५॥
तमिच्च्यौत्नैरार्यन्ति तं कृतेभिश्चर्षणयः। एष इन्द्रो वरिवस्कृत् ॥६॥
इन्द्रो ब्रह्मेन्द्र ऋषिरिन्द्रः पुरू पुरुहूतः। महान्महीभिः शचीभिः ॥७॥
स स्तोम्यः स हव्यः सत्यः सत्वा तुविकूर्मिः। एकश्चित् सन्नभिभूतिः॥८॥

१ मनुष्योंके सम्राट् इन्द्रकी स्तुति करो। इन्द्र स्तुति द्वारा स्तुत्य, नेता, शत्रुओंके अभिभव-कर्त्ता और सर्वापेक्षा दाता हैं।

२ जैसे जल-तरङ्ग समुद्रमें शोभा पाती हैं, वैसे ही उक्थ और सुनने योग्य हविष्मान् अन्न इन्द्रमें शोभा पाते हैं।

३ मैं शोभन स्तुति द्वारा, धन-प्राप्तिके लिये, उन इन्द्रकी सेवा करता हूं। इन्द्र प्रशस्ततम देवोंमें शोभा पाते हैं। संग्राममें महान् कार्य करते हैं। वह बली हैं।

४ इन्द्रका मद महान्, गभीर, विस्तीर्ण, शत्रु-तारक और शूरोंके युद्धमें प्रसन्नता-युक्त हैं।

५ धन-लाभ होनेपर उन्हीं इन्द्रको, पक्षपातके लिये, स्तोता लोग बुलाते हैं। जिनके इन्द्र हैं, वह जय प्राप्त करते हैं।

६ बलकर स्तोत्रों द्वारा उन इन्द्रको ही ईश्वर बनाया जाता है। कर्म द्वारा मनुष्य उन्हें ईश्वर बनाते हैं। इन्द्र ही धनके कर्त्ता होते हैं।

७ इन्द्र सबसे अधिक, ऋषि, बहुतों द्वारा आहूत हैं। वह महान् कार्यों (वृत्र-बधादि) के द्वारा महान् हैं।

८ वह इन्द्र स्तोत्र और आह्वानके योग्य हैं। वह साधु, शत्रुओंको अवसाद देनेवाले, बहुकर्मा और एक होनेपर भी शत्रुओंके अभिभविता हैं।

तमर्कैभिस्तं सामभिस्तं गायत्रैश्चर्षणयः । इन्द्रं वर्धन्ति क्षितयः ॥९॥
प्रणेतारं वस्यो अच्छा कर्तारं ज्योतिः समत्सु । सासह्वांसं युधामित्रान् ॥१०॥
स नः पप्रिः पारयाति स्वस्ति नावा पुरुहूतः । इन्द्रो विश्वा अति द्विषः ॥११॥
स त्वं न इन्द्र वाजेभिर्दशस्या च गातुया च । अच्छा च नः सुम्नं नेषि ॥१२॥

---

१७ सूक्त

इन्द्र देवता। हरिन्विठि ऋषि। गायत्री, बृहती और सतोबृहती छन्द।

आयाहि सुषुमा हि त इन्द्र सोमं पिबा इमम् । एदं बर्हिः सदो मम ॥१॥
आ त्वा ब्रह्मयुजा हरी वहतामिन्द्र केशिना । उप ब्रह्माणि नः शृणु ॥२॥
ब्रह्माणस्त्वा वयं युजा सोमपामिन्द्र सोमिनः । सुतावन्तो हवामहे ॥३॥

---

९ द्रष्टा और मनुष्य इन्द्रको पूजा-साधक (यजुर्वेदीय) मन्त्रों द्वारा वर्द्धित करते हैं, गेय (सामवेदीय) मन्त्रों द्वारा वर्द्धित करते हैं और उक्थ वा गायत्री आदि छन्दोंसे युक्त शस्त्र-रूप (ऋग्वेदीय) मन्त्रों द्वारा वर्द्धित करते हैं।

१० इन्द्र प्रशंसनीय धनके प्रापक, युद्धमें ज्योतिके प्रकाशक और आयुध द्वारा शत्रुओंके लिये अभिभवकर हैं।

११ इन्द्र पूरयिता और बहुतों द्वारा बुलाये गये हैं। इन्द्र हमें शत्रुओंसे नौका द्वारा निर्विघ्न पार लगावें।

१२ इन्द्र, तुम हमें बल द्वारा धन प्रदान करो। हमारे लिये मार्ग प्रदान करो। हमारे सम्मुख सुख प्रदान करो।

---

१ इन्द्र, आओ। तुम्हारे लिये सोम अभिषुत हुआ है। इस सोमको पियो। मेरे इस कुशके ऊपर बैठो।

२ इन्द्र, मन्त्रों द्वारा योजित और केशवाले हरि नामके अश्व तुम्हें ले आवें। तुम इस यज्ञमें आकर हमारे स्तोत्रको सुनो।

३ इन्द्र, हम स्तोता (ब्राह्मण) हैं। तुम्हें योग्य स्तोत्र द्वारा बुलाते हैं। हम सोमसे युक्त और अभिषुत सोमवाले हैं। हम सोमपाता इन्द्रको बुलाते हैं।

आ नो याहि सुतावतोस्माकं सुष्टुतीरुप । पिबा सुशिप्रिन्नन्धसः ॥४॥
आ ते सिञ्चामि कुक्ष्योरनु गात्रा विधावतु । गृभाय जिह्वया मधु ॥५॥
स्वादुष्टे अस्तु संसुदे मधुमान्तन्वे तव । सोमः शमस्तु ते हृदे ॥६॥
अयमुत्वा विचर्षणे जनीरिवाभि संवृतः । प्र सोम इन्द्र सर्पतु ॥७॥
तुविग्रीवो वपोदरः सुबाहुरन्धसो मदे । इन्द्रो वृत्राणि जिघ्नते ॥८॥
इन्द्र प्रेहि पुरस्त्वं विश्वस्येशान ओजसा । वृत्राणि वृत्रहञ्जहि ॥९॥
दीर्घस्ते अस्त्वंकुशो येना वसु प्रयच्छसि । यजमानाय सुन्वते ॥१०॥
अयन्त इन्द्र सोमो निपूतो अधि बर्हिषि । एहीमस्य द्रवा पिब ॥११॥
शाचिगो शाचिपूजनायं रणाय ते सुतः । आखण्डल प्र हूयसे ॥१२॥

---

४ इन्द्र, हम अभिषुत सोमवाले हैं । हमारे सामने आओ । हमारी सुन्दर स्तुतियोंको जानो । शोभन शिरस्त्राणवाले इन्द्र, अन्न (सोम) भक्षण या पान करो ।

५ इन्द्र, तुम्हारे दाहिने और बायें उदरको मैं सोम पूरण करता हूँ । वह सोम तुम्हारे गात्रोंको व्याप्त करें । मधुर सोमको जीभसे ग्रहण करो ।

६ इन्द्र, सुन्दर दानवाले तुम्हारे शरीरके लिये यह माधुर्यसे युक्त सोम स्वादिष्ट हो । यह सोम तुम्हारे हृदयके लिये सुख–जनक हो ।

७ विशेष द्रष्टा (लोकपति) इन्द्र, स्त्रीके समान संवृत (ढका हुआ) होकर यह सोम तुम्हारे पास जाय ।

८ विस्तृत कन्धावाले, स्थूल उदरवाले और सुन्दर भुजावाले इन्द्र अन्न रूप सोमकी मत्तता होनेपर वृत्र आदि शत्रुओंका विनाश करते हैं ।

९ इन्द्र, बलके कारण तुम सारे संसारके स्वामी होकर हमारे आगे गमन करो । वृत्रघ्न इन्द्र, तुम शत्रुओंका वध करो ।

१० जिससे तुम सोमका अभिषव करनेवाले यजमानको धन देते हो, वह तुम्हारा अङ्कुश (आकर्षण करनेवाला आयुध) दीर्घ हो ।

११ इन्द्र, तुम्हारे लिये यह सोम वेदीपर बिछे हुए कुश विशेष रूपसे शोधित किया हुआ है । इस समय इस सोमके सम्मुख आओ । शीघ्र पास जाओ और पियो ।

१२ शक्तिशाली गौओंवाले और प्रसिद्ध पूजावाले इन्द्र, तुम्हारे सुखके लिये सोम अभिषुत हुआ है । हे आखण्डल (शत्रु-खण्डयिता), उत्कृष्ट स्तुतियोंके द्वारा तुम आहूत होते हो ।

यस्ते शृंगवृषो नपात् प्रणपात् कुण्डपाय्यः ।
न्यस्मिन् दध्र आ मनः ॥१३॥
वास्तोष्पते ध्रुवा स्थूणांसत्रं सौम्यानाम् ।
द्रप्सो भेत्ता पुरां शश्वतीनामिन्द्रो मुनीनां सखा ॥१४॥
पृदाकुसानुर्यजतो गवेषण एकः सन्नभि भूयसः ।
भूर्णिमश्वं नयत्तुजा पुरोगृभेन्द्रं सोमस्य पीतये ॥१५॥

---

१८ सूक्त

अष्टमके अश्विद्वय, नवमके अग्नि, सूर्य और वायु तथा अवशिष्टके आदित्य देवता हैं।
इरिम्बिठि ऋषि । उष्णिक् छन्द ।

इदं ह नूनमेषां सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः ।
आदित्यानामपूर्व्यं सवीमनि ॥१॥
अनर्वाणो ह्येषां पन्था आदित्यानाम् ।
अदब्धाः सन्ति पायवः सुगेवृधः ॥२॥

१३ हे शृङ्गवृषा नामक ऋषिके पुत्र इन्द्र, तुम्हारा जो उत्तम रक्षक कुण्डपाय्या यज्ञ (जिसमें कुण्डमें सोम पिया जाता है) है, उसमें ऋषियोंने मन लगाया है।

१४ गृहपति इन्द्र, गृहाधार स्तम्भ सुदृढ़ हो। हम सोम-सम्पादक हैं। हमारे कन्धेमें रक्षा-समर्थ बल हो। क्षरण-शील सोमवाले और अनेक पुरियोंको तोड़नेवाले इन्द्र ऋषियोंके मित्र हों।

१५ सर्पके समान उच्च शिरवाले, याग-योग्य और गो-प्रापक इन्द्र अकेले होकर भी अनेक शत्रुओंको अभिभूत करते हैं। स्तोता भरण-शील और व्यापक इन्द्रको सोमपानके लिये हमारे सम्मुख ले आते हैं

---

१ इस समय आदित्योंके निकट मनुष्य अपूर्ण सुखकी याचना करे।

२ इन आदित्योंके मार्ग दूसरोंके द्वारा नहीं गमन किये गये और अहिंसित हैं। फलतः वे पालक मार्ग सुख-वर्द्धक हैं।

तत् सु नः सविता भगो वरुणो मित्रो अर्यमा ।
शर्म यच्छन्तु सप्रथो यदीमहे ॥३॥
देवेभिर्देव्यदितेरिष्टभर्मन्ना गहि ।
स्मत् सूरिभिः पुरुप्रिये सुशर्मभिः ॥४॥
ते हि पुत्रासो अदितेर्विदुर्द्वेषांसि योतवे ।
अंहोश्चिदुरुचक्रयोनेहसः ॥५॥
अदितिर्नो दिवा पशुमदितिर्नक्तमद्वयाः ।
अदितिः पात्वंहसः सदावृधा ॥६॥
उत स्या नो दिवा मतिरदितिरूत्या गमत् ।
सा शन्ताति मयस्करदप स्रिधः ॥७॥
उत त्या दैव्या भिषजा शं नः करतो अश्विना ।
युयुयातामितो रपो अप स्रिधः ॥८॥

३ हम जिस विस्तीर्ण सुखकी याचना करते हैं, उसी सुखको सविता, भग, मित्र, वरुण और अर्यमा हमें प्रदान करो ।

४ देवी, अहिंसित-पोषक और बहुतों द्वारा प्रीयमाणा अदिति, प्राज्ञ और सुखदाता देवोंके साथ सुन्दर रूपसे आगमन करो ।

५ अदितिके वे मित्रादि पुत्रगण द्वेषियोंको पृथक् करना जानते हैं। विस्तीर्ण कर्म-कर्त्ता और रक्षक लोग हमें पापसे अलग करना जानते हैं ।

६ दिनमें हमारे पशुओंकी रक्षा अदिति (अखण्डनीया देवमाता) करें, सदा एकसी रहनेवाली अदिति रात्रिमें भी हमारे पशुओंकी रक्षा करें। सदा वर्द्धनशील रक्षण द्वारा हमें पापसे बचावें।

७ स्तुतियोग्य वह अदिति रक्षाके साथ दिनमें हमारे पास आवें। वह शान्तिदाता सुख दें । वह बाधकोंको दूर करें ।

८ प्रख्यात देव-भिषक् अश्विनीकुमार हमें सुख दें । हमसे पापको हटावें। शत्रुओंको दूर कर ।

शमग्निरग्निभिः करच्छं नस्तपतु सूर्यः ।
शं वातो वात्वरपा अपस्रिधः ॥९॥

अपामीवामप स्रिधमप सेधत दुर्मतिम् ।
आदित्यासो युयोतना नो अंहसः ॥१०॥

युयोता शरुमस्मदाँ आदित्यास उतामतिम् ।
ऋधग्द्वेषः कृणुत विश्ववेदसः ॥११॥

तत् सु नः शर्म यच्छतादित्या यन्मुमोचति ।
एनस्वन्तं चिदेनसः सुदानवः ॥१२॥

यो नः कश्चिद्रिरिक्षति रक्षस्त्वेन मर्त्यः ।
स्वैः ष एवै रिरिषीष्ट युर्जनः ॥१३॥

समित्तमघमश्नवद् दुःशंसं मर्त्यं रिपुम् ।
यो अस्मत्रा दुर्हणावाँ उप द्वयुः ॥१४॥

---

९ नाना गार्हपत्य आदि अग्नियोंके द्वारा अग्निदेव हमारे रोगकी शान्ति करें। सुखदाता होकर सूर्य तपें। पाप-ताप-शून्य होकर वायु बहें। शत्रुओंको दूर करें।

१० आदित्यगण, हमसे रोगको दूर करो। शत्रुओंको भी दूर करो। दुर्गतिको दूर करो। आदित्यगण हमें पापोंसे दूर रख।

११ आदित्यो, हमसे हिंसकको अलग करो। दुर्बुद्धिको हमसे दूर करो। सर्वज्ञ आदित्यो, शत्रुओंको हमसे पृथक् करो।

१२ शोभन-दान आदित्यो, तुम लोगोंका जो सुख पापी स्तोताको भी पापसे मुक्त करता है, उसे ही हमें दो।

१३ जो कोई मनुष्य हमें राक्षस-भावसे मारना चाहता है, वह अपने ही कार्योंसे हिंसित हो जाय। वह मनुष्य दूर हो।

१४ जो दुष्कीर्त्ति मनुष्य हमें मारनेवाला और कपटी है, उसे पाप व्याप्त करे।

पाकत्रा स्थन देवा हृत्सु जानीथ मर्त्यम् ।
उप द्वयं चाद्वयु च वसवः ॥१५॥
आ शर्म पर्वतानामोतापां वृणीमहे ।
द्यावाक्षामारे अस्मद्रपस्कृतम् ॥१६॥
ते नो भद्रेण शर्मणा युष्माकं नावा वसवः ।
अति विश्वानि दुरिता पिपर्तन ॥१७॥
तुचे तनाय तत् सुनो द्राघीय आयुर्जीवसे ।
आदित्यासः सुमहसः कृणोतन ॥१८॥
यज्ञो हीलो वो अन्तर आदित्या अस्ति मृलत ।
युष्मे इद्वो अपि ष्मसि सजात्ये ॥१९॥
बृहद्वरूथं मरुतां देवं त्रातारमश्विना ।
मित्रमीमहे वरुणं स्वस्तये ॥२०॥
अनेहो मित्रार्यमन्नृवद्वरुण शंस्यम् ।
त्रिवरूथं मरुतो यन्त नश्छर्दिः ॥२१॥

---

१५ निवास-दाता आदित्यो, तुम परिपक्व-ज्ञान हो; इसलिये कपटी और अकपटी—दोनों प्रकारके मनुष्योंको तुम जानते हो ।

१६ हम पर्वतीय और जलीय सुखका भजन करते हैं । द्यावापृथिवी, पापको हमसे दूर देशमें प्रेरित करो ।

१७ वास-दाता आदित्यो, अपनी सुन्दर और सुखद नौकामें हमें सारे पापोंसे पार कराओ ।

१८ आदित्यो, तुम शोभन तेजवाले हो । हमारे पुत्र, पौत्र और जीवनके लिये दीर्घतम (खूब लम्बी) आयु दो ।

१९ आदित्यो, हमारा किया हुआ यज्ञ तुम्हारे पास ही वर्तमान है । तुम हमें सुखी करो । तुम्हारा बन्धुत्व प्राप्त करके हम सदा तुम्हारे ही होंगे ।

२० मरुतोंके पालक इन्द्र, अश्विद्वय, मित्र और वरुणदेवके निकट प्रौढ़ और शीत, आतप आदिके निवारक गृहको मङ्गलके लिये, हम माँगते हैं ।

२१ मित्र, अर्यमा, वरुण और मरुद्गण, तुम लोग हिंसा-शून्य, पुत्रादि-युक्त और स्तुत्य हो । शीत, आतप और वर्षासे निवारण करनेवाला घर हमें दो ।

ये चिद्धि मृत्युबन्धव आदित्या मनवः स्मसि ।
प्र सू न आयुर्जीवसे तिरेतन ॥२२॥

१९ सूक्त

२६–२७ का देवता त्रसदस्यु राजाका दान है; ३४–३५ के आदित्य देवता; अवशिष्टके अग्नि देवता हैं। कण्व-गोत्रीय सोभरि ऋषि। ककुप्, सतोबृहती, द्विपदा, विराट् उष्णिक् और पङ्क्ति छन्द।

तं गूर्धया स्वर्णरं देवासो देवमरतिं दधन्विरे ।
देवत्रा हव्यमोहिरे ॥१॥
विभूतरातिं विप्र चित्रशोचिष मग्निमीलिष्व यन्तुरम् ।
अस्य मेधस्य सोम्यस्य सोभरे प्रेमध्वराय पूर्व्यम् ॥२॥
यजिष्ठं त्वा ववृमहे देवं देवत्रा होतारममर्त्यम् । अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम्॥३॥
ऊर्जो नपातं सुभगं सुदीदितिमग्निं श्रेष्ठशोचिषम् ।
स नो मित्रस्य वरुणस्य सो अपामा सुम्नं यक्षते दिवि ॥४॥

---

२२ आदित्यो, जो मनुष्य मरणासन्न अथवा मृत्युके बन्धु हैं, उनके जीनेके लिये उनकी आयुको बढ़ाओ ।

१ स्तोता, प्रख्यात अग्निकी स्तुति करो। अग्नि स्वर्गमें हवि ले जानेवाले हैं। ऋत्विक् लोग स्वामी अग्निदेवके पास जाते हैं और देवोंको पुरोडाशादि देते हैं।

२ मेधावी सोभरि, * प्रभूत-दानी, विचित्र-तेजस्वी, सोम-साध्य, इस यज्ञके नियन्ता और पुरातन अग्निकी, यज्ञ करनेके लिये, स्तुति करो।

३ अग्नि, तुम याज्ञिकोंमें श्रेष्ठ, देवोंमें अतिशय दानादिगुण-युक्त, होता, अमर और इस यज्ञके सुन्दर कर्त्ता हो। हम तुम्हारा भजन करते हैं।

४ अन्नके प्रदाता, शोभन-धन, सुन्दर प्रकाशक और प्रशस्य तेजवाले अग्निकी मैं स्तुति करता हूँ। वह हमारे लिये द्योतमान देव-यज्ञमें मित्र और वरुणके सुखको लक्ष्य करके और जल देवताके सुखके लिये यज्ञ करें।

---

* सोभरि ऋषि अपना ही सम्बोधन करके कहते हैं। अनेक ऋषियोंने अपने ही सूक्तोंमें अपनेको ही सम्बोधन करके उपदेश दिया है अथवा स्तुति आदि की है।

यः समिधा य आहुती यो वेदेन ददाश मर्तो अग्नये ।
यो नमसा स्वध्वरः ॥५॥
तस्येद्‌र्वन्तो रंहयन्त आशवस्तस्य द्युम्नितमं यशः ।
न तमंहो देवकृतं कुतश्चन न मर्त्यकृतं नशत् ॥६॥
स्वग्नयो वो अग्निभिः स्याम सूनो सहस ऊर्जाम्पते ।
सुवीरस्त्वमस्मयुः ॥७॥
प्रशंसमानो अतिथिर्न मित्रियोऽग्नी रथो न वेद्यः ।
त्वे क्षेमासो अपि सन्ति साधवस्त्वं राजा रयीणाम् ॥८॥
सो अद्धा दाश्वध्वरोऽग्ने मर्तः सुभग स प्रशंस्यः ।
स धीभिरस्तु सनिता ॥९॥
यस्य त्वमूर्ध्वो अध्वराय तिष्ठसि क्षयद्वीरः स साधते ।
सो अर्वद्भिः सनिता स विपन्युभिः स शूरैः सनिता कृतम् ॥१०॥

---
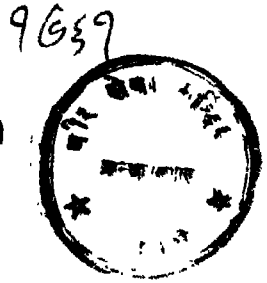
५ जो मनुष्य समिधा (पलाश आदि इन्धन) से अग्निकी परिचर्या करता है, जो आहुति (आज्य आदिसे) अग्निकी परिचर्या करता है, जो वेदाध्ययन (ब्रह्मयज्ञ) से परिचर्या करता है और जो ज्योतिष्टोम आदि सुन्दर यज्ञोंसे युक्त होकर नमस्कार (चरु-पुरोडाश आदि) से अग्निकी परिचर्या करता है—

६ उसके ही व्यापक अश्व वेगवान् होते हैं, उसीका यश सबसे अधिक होता है तथा उसे देव-कृत और मनुष्य-विहित पाप नहीं व्याप्त करते ।

७ हे बलके पुत्र और हवि आदि अन्नोंके पति, हम तुम्हारे गार्हपत्यादि अग्नि-समूहके द्वारा शोभन अग्निवाले होंगे । शोभन वीरोंसे युक्त होकर तुम हमारी इच्छा करो ।

८ प्रशंसक अतिथिके समान अग्नि स्तोताओंके हितैषी और रथके समान फल-दाता हैं । अग्नि, तुममें समीचीन रक्षण है । तुम धनके राजा हो ।

९ शोभन-धन अग्नि, जो मनुष्य यज्ञवाला है, वह सत्य फलवाला हो । वह श्लाघनीय हो और स्तोत्रोंके द्वारा सम्भजन-परायण हो ।

१० अग्नि, जिस यजमानके यज्ञ-निष्पादनके लिये तुम ऊपर हो रहते हो, वह निवास-शील वीरोंसे (पुत्रादिसे) युक्त होकर सारे कार्योंको सिद्ध कर डालता है । वह अश्वों द्वारा की गयी विजयको भोगता है । वह मेधावियों और शूरोंके साथ सम्भजन-शील होता है ।

यस्याग्निर्वपुर्गृहे स्तोमं चनो दधीत विश्ववार्यः ।
हव्या वा वेविषद्विषः ॥११॥
विप्रस्य वा स्तुवतः सहसो यहो मक्षूतमस्य रातिषु ।
अवोदेवमुपरिमर्त्यं कृधि वसो विविदुषो वचः ॥१२॥
यो अग्निं हव्यदातिभिर्नमोभिर्वा सुदक्षमाविवासति ।
गिरा वाजिरशोचिषम् ॥१३॥
समिधा यो निशिती दाशददितिं धामभिरस्य मर्त्यः ।
विश्वेत् स धीभिः सुभगो जनाँ अति द्युम्नैरुद्नइव तारिषत् ॥१४॥
तदग्ने द्युम्नमा भर यत् सासहत् सदने कं चिदत्रिणम् ।
मन्युं जनस्य दूढ्यः ॥१५॥
येन चष्टे वरुणो मित्रो अर्यमा येन नासत्या भगः
वयं तत्ते शवसा गातुवित्तमा इन्द्रत्वोता विधेमहि ॥१६॥

---

११ संसारके स्वीकरणीय और रूपवान् (दीप्तिमान्) अग्नि जिस यजमानके गृहमें स्तोत्र और अन्नको धारण करते हैं, उसके हव्य देवोंको प्राप्त करते हैं ।

१२ बलके पुत्र और वासद अग्नि, मेधावी स्तोताके दानमें क्षिप्रकर्त्ता अभिज्ञाताके वचनको देवोंके नीचे और मनुष्योंके ऊपर करो ।

१३ जो यजमान हव्यदान और नमस्कार द्वारा शोभन बलवाले अग्निकी परिचर्या करता है अथवा क्षिप्रगामी तेजवाले अग्निकी परिचर्या करता है, वह समृद्ध होता है ।

१४ जो मनुष्य इन अग्निके शरीरावयवों (गार्हपत्यादि) से अखण्डनीय अग्निकी, समिधाके द्वारा, परिचर्या करता है, वह कर्मोंके द्वारा सौभाग्यवान् होकर दीप्तिमान यशके द्वारा, जलके समान, सारे मनुष्योंको लाँघ जाता है ।

१५ अग्नि, जो धन गृहमें राक्षस आदिको अभिभूत करता है और पाप-बुद्धि मनुष्यके क्रोधको दबाता है, वही धन ले आओ ।

१६ अग्निके जिस तेजके द्वारा वरुण, मित्र और अर्यमा शांति प्रदान करते हैं तथा अश्विनीकुमार और भग देवता जिसके द्वारा प्रकाश प्रदान करते हैं, हम बलके द्वारा सबसे अधिक स्तोत्रज्ञ होकर और इन्द्रके द्वारा रक्षित होकर, अग्निदेव, तुम्हारे उसी तेजकी परिचर्या करते हैं ।

ते घेदग्ने स्वाध्यो ये त्वा विप्र निदधिरे नृचक्षसम् ।
विप्रासो देव सुक्रतुम् ॥१७॥
त इद्वेदिं सुभग त आहुतिं ते सोतुं चक्रिरे दिवि ।
त इद्वाजेभिर्जिग्युर्महद्धनं ये त्वे कामं न्येरिरे ॥१८॥
भद्रो नो अग्निराहुतो भद्रा रातिः सुभग भद्रो अध्वरः ।
भद्रा उत प्रशस्तयः ॥१९॥
भद्रं मनः कृणुष्व वृत्रतूर्ये येना समत्सु सासहः ।
अव स्थिरा तनुहि भूरि शर्धतां वनेमा ते अभिष्टिभिः ॥२०॥
ईले गिरा मनुर्हितं यं देवा दूतमरतिं न्येरिरे ।
यजिष्ठं हव्यवाहनम् ॥२१॥
तिग्मजम्भाय तरुणाय राजते प्रयो गायस्यग्नये ।
यः पिंशते सूनृताभिः सुवीर्यमग्निर्घृतेभिराहुतः ॥२२॥

१७ हे मेधावी और द्युतिमान् अग्नि, जो मेधावी ऋत्विक् मनुष्योंके साक्षि-स्वरूप और सुन्दर कर्मवाले तुम्हें धारण करते हैं, वे ही उत्तम ध्यानवाले होते हैं।

१८ शोभन-धन अग्नि, वे ही यजमान तुम्हारे लिये वेदी प्रस्तुत करते हैं, आहुति देते हैं, द्योतमान (सौत्य) दिनमें सोमाभिषव करनेके लिये उद्योग करते हैं, वे ही बलके द्वारा यथेष्ट धन प्राप्त करते हैं और वे ही तुममें अभिलाषा पाते हैं।

१९ आहूत अग्नि हमारे लिये कल्याणकर हों। शोभन-धन अग्नि, तुम्हारा दान हमारे लिये कल्याणकर हो। यज्ञ कल्याणकारी हो। स्तुतियाँ कल्याणमयी हों।

२० संग्राममें मन कल्याणवाहक बने। इस मनके द्वारा तुम संग्राममें शत्रुओंको परास्त करो। अभिभव करनेवाले शत्रुओंके स्थिर और प्रभूत बलको पराजित करो। अभिगमन-साधक स्तोत्रोंके द्वारा हम तुम्हारा भजन करेंगे।

२१ प्रजापतिके द्वारा आहित (स्थापित) अग्निकी मैं पूजा करता हूँ। वह सबसे अधिक यज्ञ करनेवाले, हव्य-वाहक तथा ईश्वर हैं और देवोंके द्वारा दूत बनाकर भेजे गये हैं।

२२ तीक्ष्ण लपटोंवाले, चिर तरुण और शोभित अग्निको लक्ष्य कर हवीरूप अन्नका गाना गाओ। प्रिय और सत्य वचनोंसे स्तुत तथा घृत द्वारा आहूत होकर स्तोताको शोभन वीर्य दान करते हैं।

यदी घृतेभिराहुतो वाशीमग्निर्भरत उच्चाव च ।
असुर इव निर्णिजम् ॥२३॥
यो हव्यान्यैरयता मनुर्हितो देव आसा सुगन्धिना ।
विवासते वार्याणि स्वध्वरो होता देवो अमर्त्यः ॥२४॥
यदग्ने मर्त्यस्त्वं स्यामहं मित्रमहो अमर्त्यः ।
सहसः सूनवाहुत ॥२५॥
न त्वा रासीयाभिशस्तये वसो न पापत्वाय सन्त्य ।
न मे स्तोतामतीवा न दुर्हितः स्यादग्ने न पापया ॥२६॥

२३ घृतके द्वारा आहुत अग्नि जिस समय ऊपर और नीचे शब्द करते हैं, उस समय असुर * (बली) सूर्यके समान अपने रूपको प्रकाशित करते हैं।

२४ मनुप्रजापतिके द्वारा स्थापित और, प्रकाशक जो अग्नि सुगन्धि मुखके द्वारा देवोंके पास हव्यको भेजते हैं, वे ही सुन्दर यज्ञवाले, देवोंको बुलानेवाले, दीप्तिमान् और अमर अग्नि धनकी परिचर्या करते हैं।

२५ बलके पुत्र, घृतहुत और अनुकूल दीप्तिवाले अग्नि, मैं मरण-धर्मा हू ; तुम्हारी उपासनासे मैं तुम्हारे समान अमर हो जाऊँ।

२६ वासक अग्नि, मिथ्यापवाद (हिंसा) के लिये तुमको मैं तिरस्कृत नहीं करूँगा। पापके लिये तुम्हें नहीं तिरस्कृत करूँगा। मेरा स्तोता अयुक्त वचनोंके द्वारा तुम्हारी अवहेलना नहीं करेगा। सम्भजनीय अग्नि, मेरा दुर्बुद्धि शत्रु न हो। वह पाप-बुद्धि द्वारा मुझे बाधा न दे।

* छठे अष्टकमें आठ बार असुर शब्दका व्यवहार हुआ है—

८ मण्डल	१९ सूक्त	२३ ऋचा	सूर्यके	सम्बन्धमें
,,	२० ,,	१७ ,,	मेघ वा बलके	,,
,,	२५ ,,	४ ,,	मित्र और वरुणके	,,
,,	२७ ,,	२० ,,	देवगणके	,,
,,	४२ ,,	१ ,,	वरुणके	,,
,,	९० ,,	६ ,,	इन्द्रके	,,
,,	९६ ,,	९ ,,	बलवान् शत्रुके	,,
,,	९७ ,,	१ ,,	,,	,,

इन ९६ और ९७ सूक्तोंमें शत्रुके अर्थमें असुर शब्द आया है। शेष स्थानोंमें देवोंके सम्बन्धमें ही प्रयुक्त हुआ है।

पितुर्न पुत्रः सुभृतो दुराण आ देवाँ एतु प्र णो हविः ॥२७॥
तवाहमग्न ऊतिभिर्नेदिष्ठाभिः सचेय जोषमा वसो ।
सदा देवस्य मर्त्यः ॥२८॥
तव क्रत्वा सनेयं तव रातिभिरग्ने तव प्रशस्तिभिः ।
त्वामिदाहुः प्रमतिं वसो ममाग्ने हर्षस्व दातवे ॥२९॥
प्र सो अग्ने तवोतिभिः सुवीराभिस्तिरते वाजभर्मभिः ।
यस्य त्वं सख्यमावरः ॥३०॥
तव द्रप्सो नीलवान्वाश ऋत्विय इन्धानः सिष्णवा ददे ।
त्वं महीनामुषसामसि प्रियः क्षपो वस्तुषु राजसि ॥३१॥
तमागन्म सोभरयः सहस्रमुष्कं स्वभिष्टिमवसे ।
सम्राजं त्रासदस्यवम् ॥३२॥
यस्य ते अग्ने अन्ये अग्नय उपक्षितो वयाइव ।
विपो न द्युम्ना नियुवे जनानां तव क्षत्राणि वर्धयन् ॥३३॥

---

२७ जैसे पुत्र पिताके लिये करता है, वैसे ही पोषण-कर्त्ता अग्नि यज्ञगृहमें देवोंके लिये हमारा हव्य प्रेरित करते हैं।

२८ वासक इन्द्र, निकट-वर्त्ती रक्षणके द्वारा मैं मनुष्य सदा तुम्हारी प्रसन्नताकी सेवा करूँ।

२९ अग्नि, तुम्हारे परित्राणके द्वारा मैं तुम्हारा भजन करूँगा। हव्य-दानके द्वारा और प्रशंसाके द्वारा तुम्हारा भजन करूँगा। वासक अग्नि, तुम प्रकृष्ट-बुद्धि हो। लोग तुम्हें मेरा रक्षक कहते हैं। अग्नि, दानके लिये प्रसन्न होओ।

३० अग्नि, तुम जिस यजमानकी मैत्री करते हो, वह तुम्हारी वीर और अन्नपूर्ण रक्षाके द्वारा बढ़ता है।

३१ सोमसे सिञ्चित, द्रवशील, नीड़वान्, शब्दायमान, वसन्तादि ऋतुओंमें उत्पन्न और दीप्तिशाली अग्नि, तुम्हारे लिये सोम गृहीत होता है। तुम विशाल उषाओंके मित्र हो। रात्रिकालमें तुम सारी वस्तुओंको प्रकाशित करते हो।

३२ रक्षणके लिये हम सोभरि लोग अग्निको प्राप्त हुए हैं। अग्नि बहु-तेजस्वी, सुन्दर रूपसे आनेवाले सम्राट् और त्रसदस्यु द्वारा स्तुत हैं।

३३ अग्नि, अन्य अग्नि (गार्हपत्यादि) वृक्षकी शाखाके समान तुम्हारे पास रहते हैं। मनुष्योंमें मैं, तुम्हारे बल, स्तुति द्वारा बढ़ाते हुए अन्य स्तोताओंके समान यशको प्राप्त करूँगा।

यमादित्यासो अद्रुहः पारं नयथ मर्त्यम् ।
मघोनां विश्वेषां सुदानवः ॥३४॥
यूयं राजानः कञ्चिच्चर्षणीसहः क्षयन्तं मानुषाँ अनु ।
वयं ते वो वरुण मित्रार्यमन्त्स्यामेदृतस्य रथ्यः ॥३५॥
अदान्मे पौरुकुत्स्यः पञ्चाशतं नाम त्रसदस्युर्वधूनाम् ।
मंहिष्ठो अर्यः सत्पतिः ॥३६॥
उत मे प्रयियोर्वयियोः सुवास्त्वा अधि तुग्वनि ।
तिसृणां सप्ततीनां श्यावः प्रणेता भुवद्वसुर्दियानां पतिः ॥३७॥

२० सूक्त

मरुद्गण देवता । सोभरि ऋषि । ककुप् और बृहती छन्द ।

आ गन्ता मा रिषण्यत प्रस्थावानो मापस्थाता समन्यवः ।
स्थिराचिन्नमयिष्णवः ॥१॥

३४ द्रोह-शून्य और उत्तम दानवाले आदित्यो हविवाले, सभी लोगोंके बीच जिसे तुम पार ले जाते हो, वह फल प्राप्त करता है ।

३५ शोभा-संयुक्त और शत्रुओंके अभिभविता आदित्यो, मनुष्योंमें घातक शत्रुओंको पराजित करो । वरुण, मित्र और अर्यमा, ये हो तुम्हारे यज्ञके नेता होंगे ।

३६ पुरुकुत्सके पुत्र त्रसदस्युने मुझे पचास बन्धु दिये हैं । वे बड़े दानी, आर्य (स्वामी) और स्तोताओंके पालक हैं ।

३७ सुन्दर निवासवाली नदीके तटपर श्यामवर्ण बैलोंके नेता और पूज्य धनदानके योग्य २१० गायोंके पति त्रसदस्युने धन और वस्त्र आदि दिये थे ।

१ प्रस्थानवाले मरुद्गण, आगमन करो । हमें नहीं मारना । समान-तेजस्क होकर दृढ़ पर्वतोंको भी कम्पित करते हो । हमें छोड़कर अन्यत्र नहीं रहना ।

वीलुपविभिर्मरुत ऋभुक्षण आ रुद्रासः सुदीतिभिः ।
इषानो अद्या गता पुरुस्पृहो यज्ञमा सोभरीयवः ॥२॥
विद्मा हि रुद्रियाणां शुष्ममुग्रं मरुतां शिमीवताम् ।
विष्णोरेषस्य मीह्लुषाम् ॥३॥
वि द्विपानि पापतं तिष्ठद्दुच्छुनोभे युजन्त रोदसी ।
प्र धन्वान्यैरत शुभ्रखादयो यदेजथ स्वभानवः ॥४॥
अच्युता चिद्वो अज्मन्ना नानदति पर्वतासो वनस्पतिः ।
भूमिर्यामेषु रेजते ॥५॥
अमाय वो मरुतो यातवे द्यौर्जिहीत उत्तरा बृहत् ।
यत्रा नरो देदिशते तनूष्वात् वक्षांसि बाहूवोजसः ॥६॥
स्वधामनु श्रियं नरो महि त्वेषा अमवन्तो वृषप्सवः ।
वहन्ते अह्रुतप्सवः ॥७॥

---

२ प्रकाशमान निवासवाले रुद्रपुत्रो (मरुतो), सुन्दर दीप्तिवाले रथ-नेमि (चक्रके डंडों) के रथसे आगमन करो। सबके अभिलषणीय मरुतो, सोभरिकी (मेरी) अभिलाषा करते हुए, अन्नके साथ, आज हमारे यज्ञमें आओ।

३ हम कर्मवान् विष्णु और अभिलषणीय जलके सेचक रुद्र-पुत्र मरुतोंके उग्र बलको जानते हैं।

४ सुन्दर आयुध और दीप्तिवाले मरुतो तुमलोग जिस समय कम्पन करते हो, उस समय सारे द्वीप पतित हो जाते हैं, स्थावर (वृक्षादि) पदार्थ दुःख प्राप्त करते हैं, द्यावापृथिवी काँप जाते हैं, गमनशील जल बहता है।

५ मरुतो, तुम्हारे संग्राममें जाते समय न गिरनेवाले मेघ और वनस्पति आदि बार-बार शब्द करते हैं, पृथिवी काँपती है।

६ मरुतो, तुम्हारे बलके गमनके लिये द्युलोक विशाल अन्तरीक्षको छोड़कर ऊपर भाग गया है। प्रचुर बलवाले और नेता मरुद्गण अपने शरीरमें दीप्त आभरण धारण करते हैं।

७ प्रदीप्त, बलवान्, वर्षणरूप, अकुटिल और नेता मरुद्गण हवीरूप अन्नके लिये महती शोभा धारण करते हैं।

गोभिर्वाणो अज्यते सोभरीणां रथे कोशे हिरण्यये ।
गोबन्धवः सुजातास इषे भुजे महान्तो नः स्परसे नु ॥८॥
प्रति वो वृषदञ्जयो वृष्णे शर्धाय मारुताय भरध्वम् ।
हव्या वृषप्रयाव्णे ॥९॥
वृषणश्वेन मरुतो वृषप्सुना रथेन वृषनाभिना ।
आ श्येनासो न पक्षिणो वृथा नरो हव्या नो वीतये गत ॥१०॥
समानमञ्ज्येषां विभ्राजन्ते रुक्मासो अधि बाहुषु ।
दविद्युतत्यृष्टयः ॥११॥
त उग्रासो वृषण उग्रबाहवो नकिष्टनूषु येतिरे ।
स्थिरा धन्वान्यायुधा रथेषु वोऽनीकेष्वधि श्रियः ॥१२॥
येषामर्णो न सप्रथो नाम त्वेषं शश्वतामेकमिद्भुजे ।
वयो न पित्र्यं सहः ॥१३॥

८ सोभरि आदि ऋषियोंके शब्द द्वारा हिरण्मय रथके मध्य देशमें मरुतोंकी वीणा प्रकट हो रही है । गोमातृक, शोभन-जन्मा और महानुभाव मरुद्गण हमारे अन्न, भोग और प्रीतिके लिये प्रवृत्त हों ।

९ सोम-वर्षके अध्वर्यु ओ, वृष्टि-दाता मरुतोंके बलके लिये हव्य ले आओ । इस बलके द्वारा वे सेचन करनेवाले और उत्तम गमनवाले होते हैं ।

१० नेता मरुद्गण सेचन-समर्थ, अश्वसे युक्त, वृष्टिदाताके रूपसे संयुक्त और वर्षक नाभिसे सम्पन्न रथपर, हव्यके पास, श्येन पक्षीके समान अनायास आगमन करें ।

११ मरुतोंका अभिव्यञ्जक आभरण एक ही प्रकारका है । प्रदीप्त सुवर्णमय हार उनके हृदय-देशमें विराज रहा है । बाहुओंमें आयुध अतीव प्रकाशित होते हैं ।

१२ उग्र, वर्षक और उग्र बाहुओंवाले मरुद्गण अपने शरीरके रक्षणके लिये यत्न नहीं करते (आवश्यकता ही नहीं है)। मरुतो, तुम्हारे रथपर आयुध और धनुष् सुदृढ़ हैं । इसीलिये युद्ध-क्षेत्रमें, सेना-मुखपर, तुम्हारी ही विजय होती है ।

१३ जलके समान सर्वत्र विस्तीर्ण और दीप्त बहु-सङ्ख्यक मरुतोंका नाम एक होकर भी, पैतृक दीर्घस्थायी अन्नके समान, भोगके लिये, यथेष्ट होता है ।

तान्वन्दस्व मरुतस्ताँ उप स्तुहि तेषां हि धुनीनाम् ।
अराणां न चरमस्तदेषां दाना मह्ना तदेषाम् ॥१४॥
सुभगः स व ऊतिष्वास पूर्वासु मरुतो व्युष्टिषु ।
यो वा नूनमुतासति ॥१५॥
यस्य वा यूयं प्रति वाजिनो नर आ हव्या वीतये गथ ।
अभि ष द्युम्नैरुत वाजसातिभिः सुम्ना वो धूतयो नशत् ॥१६॥
यथा रुद्रस्य सूनवो दिवो वशन्त्यसुरस्य वेधसः । युवानस्तथेदसत् ॥१७॥
ये चार्हन्ति मरुतः सुदानवः स्मन्मीळ्हुषश्चरन्ति ये ।
अतश्चिदा न उप वस्यसा हृदा युवान आ ववृध्वम् ॥१८॥
यून ऊ षु नविष्ठया वृष्णः पावकाँ अभि सोभरे गिरा ।
गाय गा इव चर्कृषत् ॥१९॥
साहा ये सन्ति मुष्टिहेव हव्यो विश्वासु पृत्सु होतृषु ।
वृष्णश्चन्द्रान्न सुश्रवस्तमान् गिरा वन्दस्व मरुतो अह ॥२०॥

---

१४ उन मरुतोंकी वन्दना करो। उनके लिये स्तुति करो। आर्य-स्वामीके हीन सेवकके समान हम कम्पनोत्पादक मरुतोंके हीन सेवक हैं। उनका दान महिमासे युक्त है।

१५ मरुतो, तुम्हारा रक्षण पाकर स्तोता बीते हुए दिनोंमें सुभग हुआ था। जो स्तोता है, वह अवश्य ही तुम्हारा है।

१६ नेता मरुतो, हव्य-भक्षणके लिये जिस हविष्मान् यजमानके हव्यके पास आते हो, हे कम्पक मरुतो, वह तुम्हारे द्युतिमान् अन्न और अन्न-सम्भोगके द्वारा तुम्हारे सुखको चारो ओर व्याप्त करता है।

१७ रुद्र-पुत्र, असुर (वृष्टिजल अथवा बल) के कर्त्ता और नित्य तरुण मरुद्गण जिस प्रकार अन्तरीक्षसे आकर हमारी कामना करें, यह स्तोत्र वैसा ही हो।

१८ जो सुन्दर दानवाले यजमान मरुतोंकी पूजा करते हैं और जो इन सेचन-कर्त्ताओंको हव्य द्वारा पूजित करते हैं, हम इन दोनों प्रकारके लोगोंमें समान हैं। हमारे लिये अतीव धनप्रद चित्तसे आकर मिलो।

१९ सोभरि, नित्य तरुण, अतीव वृष्टि-दाता और पावक मरुद्गणका अतीव अभिनव वाक्यों द्वारा, सुन्दर रूपसे, उसी प्रकार स्तव करो, जिस प्रकार कृषक अपने बैलोंकी स्तुति करता है।

२० सारे युद्धोंमें योद्धा लोगोंके आह्वान करनेपर मरुद्गण अभिभवकर्त्ता होते हैं। आह्वानके योग्य मल्लके समान सम्प्रति आह्लादकर, वर्षक तथा अतीव यशस्वी मरुतोंकी, शोभन वाक्योंके द्वारा, स्तुति करो।

गावश्चिद्घा समन्यवः सजात्येन मरुतः सबन्धवः ।
रिहते ककुभो मिथः ॥२१॥
मर्तश्चिद्वो नृतवो रुक्मवक्षस उप भ्रातृत्वमायति ।
अधि नो गात मरुतः सदा हि व आपित्वमस्ति निध्रुवि ॥२२॥
मरुतो मारुतस्य न आ भेषजस्य वहता सुदानवः ।
यूयं सखायः सप्तयः ॥२३॥
याभिः सिन्धुमवथ याभिस्तूर्वथ याभिर्दशस्यथा क्रिविम् ।
मयो नो भूतोतिभिर्मयोभुवः शिवाभिरसचद्विषः ॥२४॥
यत् सिन्धौ यदसिक्न्यां यत् समुद्रेषु मरुतः सुबर्हिषः ।
यत् पर्वतेषु भेषजम् ॥२५॥
विश्वं पश्यन्तो बिभृथा तनूष्वा तेना नो अधि वोचत ।
क्षमा रपो मरुत आतुरस्य न इष्कर्ता विह्रुतं पुनः ॥२६॥

---

२१ समान-तेजस्क मरुतो, एक जाति होनेके कारण समान बन्धु होकर गायें चारो ओर आपसमें लेहन करती—चाटती—हैं ।

२२ हे नर्त्तक और वक्षःस्थलमें उज्ज्वल आभरण पहननेवाले मरुतो, मनुष्य भी तुम्हारे बन्धुत्वके लिये जाता है; इसलिये हमारे पक्षसे बात करो। सदा धारणीय यज्ञमें तुम्हारा बन्धुत्व सर्वदा ही रहता है।

२३ सुन्दर दानवाले, गमनशील और सखा मरुतो, मरुत्सम्बन्धी (अर्थात् अपना) औषध ले आओ ।

२४ मरुतो, जिससे तुम समुद्रकी रक्षा करते हो, जिससे यजमानके शत्रुकी हिंसा करते हो और जिससे तृष्णज (गोतम) को कूप प्रदान किया था, हे सुखोत्पादक और शत्रु-शून्य मरुतो, उसी सब प्रकारका कल्याण करनेवाली रक्षाके द्वारा हमारे लिये सुख उत्पन्न करो।

२५ सुन्दर यज्ञवाले मरुतो, सिन्धुनद, चिनाव, समुद्र और पर्वतमें जो औषध है—

२६ तुम वह सब औषध पहचानकर हमारी शरीरकी चिकित्साके लिये ले आओ। मरुतो, हमसेमें जिस प्रकार रोगीके रोगकी शान्ति हो, उसी प्रकार बाधित अङ्गको जोड़ो (पूरा करो)।

प्रथम अध्याय समाप्त

द्वितीय अध्याय

४ अनुवाक । २१ सूक्त

इन्द्र देवता । अन्तकी दो ऋचाओंका चित्र राजाका दान देवता । कण्व-पुत्र सोभरि ऋषि ।
ककुप् और बृहती छन्द ।

वयमु त्वामपूर्व्य स्थूरं न कच्चिद्भरन्तोऽवस्यवः ।
वाजे चित्रं हवामहे ॥१॥
उप त्वा कर्मन्नूतये स नो युवोग्रश्चक्राम यो धृषत् ।
त्वामिद्ध्यवितारं ववृमहे सखाय इन्द्र सानसिम् ॥२॥
आयाहीम इन्दवोऽश्वपते गोपत उर्वरापते । सोमं सोमपते पिब ॥३॥
वयं हि त्वा बन्धुमन्तमबन्धवो विप्रास इन्द्र येमिम ।
या ते धामानि वृषभ तेभिरागहि विश्वेभिः सोमपीतये ॥४॥
सीदन्तस्ते वयो यथा गोश्रीते मधौ मदिरे विवक्षणे ।
अभि त्वामिन्द्र नोनुमः ॥५॥

---

१ अपूर्व इन्द्र, हम तुम्हें गुणी मनुष्यके समान सोमसे पोषण करके रक्षा-प्राप्तिकी कामनासे संग्राममें विविध-रूप-धारी तुम्हें बुलाते हैं ।

२ इन्द्र, अग्निष्टोम आदि यज्ञोंकी रक्षाके लिये हम तुम्हारे पास जाते हैं । इन्द्र शत्रुओंके अभिभव-कर्त्ता, तरुण और उग्र हैं ; वह हमारे अभिमुख आवें । हम तुम्हारे सखा हैं । इन्द्र, तुम भजनीय और रक्षक हो । हम तुम्हें वरण करते हैं ।

३ अश्वपति, गोपालक, उर्वर-भूमि-स्वामी और सोमपति इन्द्र, आओ और सोमपान करो ।

४ हम विप्र बन्धु-हीन हैं । तुम बन्धुवाले हो । हम तुमसे बन्धुता करेंगे । काम-वर्षक इन्द्र, तुम्हारे जो शारीरिक तेज हैं, उनके साथ सोमपानके लिये आओ ।

५ इन्द्र, दुग्धादि मिश्रित, मदकर और स्वर्गलाभके कारण तुम्हारे सोममें हम पक्षियोंके सदृश रहकर तुम्हारी ही स्तुति करते हैं ।

अच्छा च त्वैना नमसा वदामसि किं मुहुश्चिद्वि दीधयः ।
सन्ति कामासो हरिवो ददिष्ट्वं स्मो वयं सन्ति नो धियः ॥६॥
नूत्ना इदिन्द्र ते वयमूती अभूम नहि नु ते अद्रिवः ।
विद्मा पुरा परीणसः ॥७॥
विद्मा सखित्वमुत शूर भोज्य मा ते ता वज्रिन्नीमहे ।
उतो समस्मिन्ना शिशीहि नो वसो वाजे सुशिप्र गोमति ॥८॥
यो न इदमिदं पुरा प्र वस्य आनिनाय तमु वः स्तुषे ।
सखाय इन्द्रमूतये ॥९॥
हर्यश्वं सत्पतिं चर्षणीसहं स हि ष्मा यो अमन्दत ।
आ तु नः स वयति गव्यमश्व्यं स्तोतृभ्यो मघवा शतम् ॥१०॥
त्वया ह स्विद्युजा वयं प्रति श्वसन्तं वृषभ ब्रुवीमहि ।
संस्थे जनस्य गोमतः ॥११॥

---

६ इन्द्र, इस स्तोत्रके साथ तुम्हारे सामने तुम्हारी ही स्तुति करेंगे। तुम बार-बार क्यों चिन्ता करते हो? हरि अश्वोंवाले इन्द्र, हमें पुत्र-पशु आदिकी अभिलाषा है। तुम धनादिके दाता हो। हमारे कर्म तुम्हारे ही पास हैं।

७ इन्द्र, तुम्हारे रक्षणमें हम नये ही रहेंगे। वज्रधर इन्द्र, पहले हम तुम्हें सर्वत्र व्याप्त नहीं जानते थे। इस समय तुम्हें जानते हैं।

८ बली इन्द्र, हम तुम्हारी मैत्री जानते हैं। तुम्हारा भोज्य भी जानते हैं। वज्री इन्द्र, हम तुमसे मैत्री और भोज्य (धन) माँगते हैं। सबको निवास देनेवाले और सुन्दर शिरस्त्राणवाले इन्द्र, गौ आदिसे युक्त सारे धनोंमें हमें तीक्ष्ण करो।

९ मित्र ऋत्विको और यजमानो, जो इन्द्र, पूर्व समयमें, यह सारा धन हमारे लिये ले आये थे, उन्हीं इन्द्रकी, तुम्हारी रक्षाके लिये, मैं स्तुति करता हूँ।

१० हरितवर्ण अश्ववाले, सज्जनोंके पति, शत्रुओंको दबानेवाले इन्द्रकी स्तुति वही मनुष्य करता है, जो तृप्त होता है। वे धनी इन्द्र सौ गायें और सौ अश्व हम स्तोताओंके लिये लाये थे।

११ अभीप्सित फलदाता इन्द्र, तुम्हें सहायक पाकर गोयुक्त मनुष्योंके साथ संग्राममें अतीव क्रुद्ध शत्रुको हम निवारित करेंगे।

जयेम कारे पुरुहूत कारिणोऽभि तिष्ठेम दूढ्यः ।

नृभिर्वृत्रं हन्याम शूशुयाम चावेरिन्द्र प्र णो धियः ॥१२॥

अभ्रातृव्यो अना त्वमनापिरिन्द्र जनुषा सनादसि ।

युधेदापित्वमिच्छसे ॥१३॥

नकी रेवन्तं सख्याय विन्दसे पीयन्ति ते सुराश्वः ।

यदा कृणोषि नदनुं समूहस्यादित् पितेव हूयसे ॥१४॥

मा ते अमाजुरो यथा मूरास इन्द्र सख्ये त्वावतः ।

नि षदाम सचा सुते ॥१५॥

मा ते गोदत्र निरराम राधस इन्द्र मा ते गृहामहि ।

दृळ्हा चिदर्यः प्र मृशाभ्या भर न ते दामान आदभे ॥१६॥

इन्द्रो वा घेदियन्मघं सरस्वती वा सुभगा ददिर्वसु ।

त्वं वा चित्र दाशुषे ॥१७॥

---

१२ बहुतोंके द्वारा बुलाने योग्य इन्द्र, हम संग्राममें हिंसकोंको जीतेंगे। हम पाप-बुद्धियोंको हरावेंगे। मरुतोंकी सहायतासे हम वृत्रका वध करेंगे। हम अपने कर्म बढ़ावेंगे। इन्द्र, हमारे सारे कर्मोंकी रक्षा करो।

१३ इन्द्र, जन्म-कालसे ही तुम शत्रु-शून्य हो और चिर कालसे बन्धु-हीन हो। जो मैत्री तुम चाहते हो, उसे केवल युद्ध द्वारा प्राप्त करते हो।

१४ इन्द्र, बन्धुताके लिये केवल धनी (अयाज्ञिक) मनुष्यको क्यों नहीं आश्रित करते ? इसलिये कि, अयाज्ञिक मनुष्य सुरा (मद्य) पान करके प्रमत्त होते और तुम्हारी हिंसा करते हैं। जिस समय तुम स्तोताको अपना समझ कर धन आदि देते हो, उस समय वह तुम्हें पिता समझ कर बुलाता है।

१५ इन्द्र, तुम्हारे समान देवताके बन्धुत्वसे वञ्चित होकर हम सोमाभिषव-शून्य न होने पावें। सोमाभिषव होनेपर हम एकत्र उपवेशन करेंगे।

१६ गोदाता इन्द्र, हम तुम्हारे हैं। हम धन-शून्य न होने पावें। हम दूसरेके पाससे धन न ग्रहण करें। तुम स्वामी हो। हमारे पास तुम दृढ़ धन दो। तुम्हारे दानकी कोई हिंसा नहीं कर सकता।

१७ मैं हव्यदाता हूँ। क्या इन्द्रने मुझे (सोभरिको) यह दान दिया है ? अथवा शोभन-धना सरस्वतीने दिया है ? अथवा हे चित्र (चित्र राजा नामक यजमान), तुमने ही दिया है ?

चित्र इद्राजा राजका इदन्यके यके सरस्वतीमनु ।
पर्जन्य इव ततनद्धि वृष्ट्या सहस्रमयुता ददत् ॥१८॥

२२ सूक्त

अश्विद्वय देवता। कण्व-पुत्र सोभरि ऋषि। ककुप्, बृहती और अनुष्टुप् छन्द ।

ओ त्यमह्व आ रथमद्या दंसिष्ठमूतये ।
यमश्विना सुहवा रुद्रवर्तनी आ सूर्यायै तस्थथुः ॥१॥
पूर्वापुषं सुहवं पुरुस्पृहं भुज्युं वाजेषु पूर्व्यम् ।
सचनावन्तं सुमतिभिः सोभरे विद्वेषसमनेहसम् ॥२॥
इह त्या पुरुभूतमा देवा नमोभिरश्विना ।
अर्वाचीना स्ववसे करामहे गन्तारा दाशुषो गृहम् ॥३॥
युवो रथस्य परि चक्रमीयत ईर्मान्यद्वामिषण्यति ।
अस्माँ अच्छा सुमतिर्वां शुभस्पती आ धेनुरिव धावतु ॥४॥

१८ जैसे मेघ वृष्टि द्वारा पृथिवीको प्रसन्न करता है, वैसे ही सरस्वती नदीके तीरपर रहनेवाले अन्य राजाओंको सहस्र और अयुत (दश सहस्र) धन देकर चित्र राजा उन्हें प्रसन्न करते हैं।

१ अश्विद्वय, तुम सुन्दर आह्वानवाले और स्तूयमान मार्गवाले हो। सूर्याको वरण करनेके लिये तुम लोग जिस रथपर चढ़े थे, आज, रक्षाके लिये, उसी दर्शनीय रथको बुलाता हूँ।

२ सोभरि, कल्याणवाहिनी स्तुतियोंके द्वारा इस रथकी स्तुति करो। यह रथ प्राचीन स्तोताओंका पोषक, युद्धमें शोभन आह्वानवाला, बहुतोंके द्वारा अभिलषणीय, सबका रक्षक, संग्राममें अग्रगामी, सबका भजनीय, शत्रुओंका विद्वेषी और पाप-रहित है।

३ शत्रुओंके विजेता, प्रकाशमान और हव्यदाता यजमानके गृहपति अश्विद्वय, इस कर्ममें रक्षाके लिये नमस्कार द्वारा हम तुम्हें अपने अभिमुख करेंगे।

४ अश्विद्वय, तुम्हारे रथका एक चक्र स्वर्गलोक तक जाता है और दूसरा तुम्हारे साथ जाता है। सारे कार्योंके प्रेरक और जलपति अश्विनीकुमारो, तुम्हारी मङ्गलमयी बुद्धि, धेनुके समान, हमारे पास आवे।

रथो यो वाँ त्रिवन्धुरो हिरण्याभीशुरश्विना ।
परि द्यावापृथिवी भूषति श्रुतस्तेन नासत्या गतम् ॥५॥
दशस्यन्ता मनवे पूर्व्यं दिवि यवं वृकेण कर्षथः ।
ता वामद्य सुमतिभिः शुभस्पती अश्विना प्र स्तुवीमहि ॥६॥
उप नो वाजिनीवसू यातमृतस्य पथिभिः ।
येभिस्तृक्षिं वृषणा त्रासदस्यवं महे क्षत्राय जिन्वथः ॥७॥
अयं वामद्रिभिः सुतः सोमो नरा वृषण्वसू ।
आयातं सोमपीतये पिबतं दाशुषो गृहे ॥८॥
आ हि रुहतमश्विना रथे कोशे हिरण्यये वृषण्वसू ।
युञ्जाथां पीवरीरिषः ॥९॥
याभिः पक्थमवथो याभिरध्रिगुं याभिर्बभ्रुं विजोषसम् ।
ताभिर्नो मक्षू तूयमश्विना गतं भिषज्यतं यदातुरम् ॥१०॥

---

५ अश्विद्वय, तीन प्रकारके सारथि-स्थानोंवाला और सोनेका लगामवाला तुम्हारा प्रसिद्ध रथ द्यावापृथिवीको अपने प्रकाशसे अलङ्कृत करता है। नासत्यद्वय तुमलोग पूर्वोक्त रथसे आओ।

६ अश्विद्वय, द्युलोक (स्वर्ग) में स्थित प्राचीन जलको मनुके लिये देकर तुमने लाङ्गल (हल) से यव (जौ) की खेती की थी या मनुष्योंको कृषि-कार्यकी शिक्षा दी थी। जल-पालक अश्विद्वय, आज सुन्दर स्तुति द्वारा हम तुम्हारी स्तुति करते हैं।

७ अन्न और धनवाले अश्विद्वय, यज्ञ मार्गसे हमारे पास आओ। धनको सेचन अथवा दान करनेवाले अश्विद्वय, इसी मार्गसे तुमने त्रसदस्युके पुत्र तृक्षिको प्रचुर धन देकर तृप्त किया था।

८ नेता और वर्षणशील धनवाले अश्विद्वय, तुम्हारे लिये पत्थरोंसे यह सोम अभिषुत हुआ है। सोम-पानके लिये आओ और हव्य-प्रदाताके घरमें सोम पियो।

९ वर्षणशील धनवाले अश्विद्वय, सोनका लगाम आदिसे सम्पन्न, आयुधोंके कोश और रमण-शील रथपर चढ़ो।

१० जिन रक्षणोंसे तुमने पक्थ राजाकी रक्षा की थी, जिनसे अध्रिगु राजाकी रक्षा की थी और जिनसे बभ्रु राजाको सोम-पान द्वारा प्रसन्न किया था, उन्हीं रक्षणोंके साथ बहुत ही शीघ्र हमारे पास आओ और रोगीकी चिकित्सा करो।

यद्‌धिगावो अध्रिगू इदा चिदह्नो अश्विना हवामहे ।
वयं गीर्भिर्विपन्यवः ॥११॥

ताभिरा यातं वृषणोप मे हवं विश्वप्सुं विश्ववार्यम् ।
इषा मंहिष्ठा पुरुभूतमा नरा याभिः क्रिविं वावृधुस्ताभिरा गतम् ॥१२॥

ताविदा चिदहानां तावश्विना वन्दमान उप ब्रुवे ।
ता ऊ नमोभिरीमहे ॥१३॥

ताविद्दोषा ता उषसि शुभस्पती ता यामन्रुद्रवर्तनी ।
मा नो मर्ताय रिपवे वाजिनीवसू परो रुद्रावति ख्यतम् ॥१४॥

आ सुग्म्याय सुग्म्यं प्राता रथेनाश्विना वा सक्षणी ।
हुवे पितेव सोभरी ॥१५॥

मनोजवसा वृषणा मदच्युता मक्षुङ्गमाभिरूतिभिः ।
आरात्ताच्चिद्भूतमस्मे अवसे पूर्व्याभिः पुरुभोजसा ॥१६॥

११ हम स्वकर्ममें शीघ्रताकारी और मेधावी हैं। अश्विद्वय, तुम लोग युद्धमें शत्रु-वधके लिये शीघ्र-कर्त्ता हो। दिनके इस प्रातः कालमें स्तुति द्वारा हम तुम्हें बुलाते हैं।

१२ वर्षणशील अश्विद्वय, विविध-रूप, समस्त देवोंके द्वारा वरणीय मेरे इस आह्वानके अभिमुख, उन सारी रक्षाओंके साथ आओ। तुम लोग हविके अभिलाषी, अतीव धनद और युद्धमें अनेक शत्रुओंके अभिभवित्ता हो। जिन रक्षणोंसे तुमने कृपको वर्द्धित किया है, उनके साथ पधारो।

१३ उन अश्विद्वयको इस प्रातःकालमें अभिवादन करता हुआ मैं उनकी स्तुति करता हूँ। उन्हीं दोनोंके पास स्तोत्र द्वारा धनादिकी याचना करता हूँ।

१४ वे जल-पालक और युद्धमें स्तूयमान-मार्ग हैं। रात्रि, उषः-काल और दिनमें सदा हम अश्विद्वयको बुलाते हैं। अन्न और धन अश्विद्वय, शत्रुके हाथमें हमें नहीं देना।

१५ अश्विद्वय, तुम सेचन-शील हो। मैं सुखके योग्य हूँ। प्रातः कालमें मेरे लिये रथसे सुखले आओ। मैं सोभरि हूँ। अपने पिताके समान ही तुम्हें बुलाता हूँ।

१६ मनके समान शीघ्रगामी, धन-वर्षक, शत्रु-नाशक और अनेकोंके रक्षक अश्विद्वय, शीघ्र-गामिनी और विविधा रक्षाओंके साथ, हमारी रक्षाके लिये, पासमें आओ।

आ नो अश्वावदश्विना वर्तिर्यासिष्टं मधुपातमा नरा ।
गोमद्दस्रा हिरण्यवत् ॥१७॥
सुप्रावर्गं सुवीर्यं सुष्टु वार्यमनाधृष्टं रक्षस्विना ।
अस्मिन्ना वामायाने वाजिनीवसू विश्वा वामानि धीमहि ॥१८॥

२२ सूक्त

अग्नि देवता । व्यश्वके पुत्र विश्वमना ऋषि । उष्णिक् छन्द ।

ईलिष्वा हि प्रतीव्यं यजस्व जातवेदसम् ।
चरिष्णुधूममगृभीतशोचिषम् ॥१॥
दामानं विश्वचर्षणेऽग्निं विश्वमनो गिरा ।
उत स्तुषे विष्पर्धसो रथानाम् ॥२॥
येषामाबाध ऋग्मिय इषः पृक्षश्च निग्रभे ।
उपविदा वह्निर्विन्दते वसु ॥३॥

---

१७ अश्विद्वय, तुम अतीव सोमपाता, नेता और दर्शनीय हो। हमारे यज्ञ-मार्गको अश्व, गौ और सुवर्णसे युक्त करके, आओ।

१८ जिसका दान सुन्दर है, जिसका वीर्य सुन्दर है, जिसका सुन्दर रूप सबके लिये वरणीय है और जिसे बली पुरुष भी अभिभूत नहीं कर सकता, ऐसा ही धन हम धारण करते हैं। अन्न और धन (बलयुक्त धनी) अश्विद्वय, तुम्हारा आगमन होनेपर हम सारा धन प्राप्त करते।

१ शत्रुओंके विरुद्ध गमन करनेवाले अग्नि हैं। उन्हींकी स्तुति करो। जिनका धूम-जाल चारो ओर फैलता है, जिनकी दीप्तिको कोई पकड़ नहीं सकता और जो जात-प्रज्ञ हैं, उन अग्निकी पूजा करो।

२ सर्वार्थ-दर्शक "विश्वमना" ऋषि, मात्सर्य-शून्य यजमानके लिये रथादिके दाता अग्निकी, वाक्य द्वारा, स्तुति करो।

३ शत्रुओंके बाधक और ऋचाओं द्वारा अर्चनीय अग्नि जिनके अन्न और सोमरसका ग्रहण करते हैं, वे धन प्राप्त करते हैं।

उदस्य शोचिरस्थाद्दीदियुषो व्यजरम् ।
तपुर्जम्भस्य सुद्युतो गणश्रियः ॥४॥
उदु तिष्ठ स्वध्वर स्तवानो देव्या कृपा ।
अभिख्या भासा बृहता शुशुक्वनिः ॥५॥
अग्ने याहि सुशस्तिभिर्हव्या जुह्वान आनुषक् ।
यथा दूतो बभूथ हव्यवाहनः ॥६॥
अग्निं वः पूर्व्यं हुवे होतारं चर्षणीनाम् ।
तमया वाचा गृणे तमु वः स्तुषे ॥७॥
यज्ञेभिरद्भुतक्रतुं यं कृपा सूदयन्त इत् ।
मित्रं न जने सुधितमृतावनि ॥८॥
ऋतावानमृतायवो यज्ञस्य साधनं गिरा ।
उपो एनं जुजुषुर्नमसस्पदे ॥९॥

---

४ अतीव दीप्तिमान्, ताप-दाता, दण्ड-सम्पन्न, शोभन दीप्तिवाले और यजमानोंके आश्रित अग्निका राज-शून्य तथा अभिनव तेज उठ रहा है ।

५ शोभनयज्ञ अग्नि, सामने विशाल दीप्तिसे दीपनशील और स्तूयमान तुम द्योतमाना ज्वालाके साथ उठो ।

६ अग्नि, तुम हव्य-वाहक दूत हो, इसलिये देवोंको हव्य देते हुए सुन्दर स्तोत्रके साथ जाओ ।

७ मनुष्योंके होम-सम्पादक और पुरातन अग्निको मैं बुलाता हू । इस सूक्त-रूप वचन द्वारा उन अग्निकी मैं प्रशंसा करता हूँ । तुम्हारे ही लिये उन अग्निकी मैं स्तुति करता हूँ ।

८ बहुविध प्रज्ञावाले, मित्र और तृप्त अग्निकी कृपासे यज्ञ और सामर्थ्यसे यज्ञवाले यजमानकी मनः-कामना पूर्ण होती है ।

९ यज्ञाभिलाषियो, यज्ञके साधन और यज्ञवाले अग्निकी, हव्यवाले यज्ञमें, स्तुति-वाक्य द्वारा, सेवा करो ।

अच्छा नो अङ्गिरस्तमं यज्ञासो यन्तु संयतः ।
होता यो अस्ति विक्ष्वा यशस्तमः ॥१०॥
अग्ने तव त्ये अजरेन्धानासो बृहद्भाः ।
अश्वाइव वृषणस्तविषीयवः ॥११॥
स त्वं न ऊर्जाम्पते रयिं रास्व सुवीर्यम् ।
प्राव नस्तोके तनये समत्स्वा ॥१२॥
यद्वा उ विश्पतिः शितः सुप्रीतो मनुषो विशि ।
विश्वेदग्निः प्रति रक्षांसि सेधति ॥१३॥
श्रुष्ट्यग्ने नवस्य मे स्तोमस्य वीर विश्पते ।
नि मायिनस्तपुषा रक्षसो दह ॥१४॥
न तस्य मायया चन रिपुरीशीत मर्त्यः ।
यो अग्नये ददाश हव्यदातिभिः ॥१५॥

---

१० हमारे नियत यज्ञ अङ्गिरावाले अग्निके अभिमुख जायँ । ये मनुष्योंमें होम-निष्पादक और अतीव यशस्वी हैं ।

११ अजर अग्नि, तुम्हारी दीप्यमान और महान् रश्मियाँ काम-वर्षक होकर अश्वके समान बल प्रकट करती हैं ।

१२ अन्न-पति अग्नि, हमारे लिये तुम शोभन वीर्यवाला धन दो। हमारे पुत्र और पौत्रके पास जो धन है, उसे युद्ध-कालमें बचाओ।

१३ मनुष्य-रक्षक और तीक्ष्ण अग्नि प्रसन्न होकर जभी मनुष्यके गृहमें अवस्थित होते हैं, तभी वह सारे राक्षसोंको विनष्ट करते हैं ।

१४ हे वीर और मनुष्य-पालक अग्नि, हमारे नये स्तोत्रको सुनकर मायावी राक्षसोंको तापक तेजके द्वारा जलाओ।

१५ जो मनुष्य हव्यदाता ऋत्विकोंके द्वारा अग्निको हव्य प्रदान करता है, उसको मनुष्य-शत्रु माया द्वारा भी वशमें नहीं कर सकता ।

व्यश्वस्त्वा वसुविदमुक्षण्युरप्रीणादृषिः ।
महो राये तमु त्वा समिधीमहि ॥१६॥
उशना काव्यस्त्वा नि होतारमसादयत् ।
आयजिं त्वा मनवे जातवेदसम् ॥१७॥
विश्वे हि त्वा सजोषसो देवासो दूतमक्रत ।
श्रुष्टी देव प्रथमो यज्ञियो भुवः ॥१८॥
इमं घा वीरो अमृतं दूतं कृण्वीत मर्त्यः। पावकं कृष्णवर्तनिं विहायसम्॥१९॥
तं हुवेम यतस्रुचः सुभासं शुक्रशोचिषम्। विशामग्निमजरं प्रत्नमीड्यम्॥२०॥
यो अस्मै हव्यदातिभिराहुतिं मर्तोऽविधत् ।
भूरि पोषं स धत्ते वीरवद्यशः ॥२१॥
प्रथमं जातवेदसमग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम् । प्रति स्रुगेति नमसा हविष्मती॥२२॥
आभिर्विधेमाग्नये ज्येष्ठाभिर्व्यश्ववत् ।
मंहिष्ठाभिर्मतिभिः शुक्रशोचिषे ॥२३॥

---

१६ अपनेको धनका वर्षक बनानेकी इच्छासे व्यश्व नामक ऋषिने तुम्हें प्रसन्न किया था; क्योंकि तुम धनद हो। हम भी महान् धनके लिये उन अग्निको जलाते हैं।

१७ यज्ञशील और जातप्रज्ञ काव्य (कविपुत्र = उशना ऋषि) ने मनुके घरमें तुम्हें होताके रूपसे बैठाया था।

१८ अग्नि, समस्त देवोंने मिलकर तुम्हें ही दूत नियुक्त किया था। देव अग्नि, तुम देवोंमें मुख्य हो। तुम उसी समय यज्ञ-योग्य हो गये थे।

१९ अमर, पवित्र, धूम्र-मार्ग और तेजस्वी इन अग्निको वीर वा समर्थ मनुष्यने दूत बनाया था।

२० स्रुक् ग्रहण करके हम सुन्दर दीप्तिवाले, शुभ्रवर्ण, तेजस्वी, मनुष्योंके लिये स्तवनीय और अजर अग्निको हम बुलाते हैं।

२१ जो मनुष्य हव्य-दाता ऋत्विकोंके द्वारा अग्निको आहुति देता है, वह प्रचुर पोषक और वीर पुत्र, पौत्र आदिसे युक्त अन्न प्राप्त करता हैं।

२२ देवोंमें मुख्य, जात-प्रज्ञ और प्राचीन अग्निके पास हव्य-युक्त स्रुक् नमस्कारके साथ अग्निके पास आता है।

२३ व्यश्वके समान स्तुति द्वारा प्रशस्यतम, पूज्यतम और शुभ्र दीप्तिसे युक्त अग्निकी, हम, परिचर्या करते हैं।

नूनमर्च विहायसे स्तोमेभिः स्थूरयूपवत् । ऋषे वैयश्व दम्यायाग्नये ॥२४॥

अतिथिं मानुषाणां सूनुं वनस्पतीनाम् । विप्रा अग्निमवसे प्रत्नमीलते॥२५॥

महो विश्वाँ अभि षतोऽभि हव्यानि मानुषा ।

अग्ने नि षत्सि नमसा धि बर्हिषि ॥२६॥

वंस्वानो वार्या पुरुवंस्व रायः पुरुस्पृहः ।

सुवीर्यस्य प्रजावतो यशस्वतः ॥२७॥

त्वं वरो सुषाम्णेऽग्ने जनाय चोदय ।

सदा वसो रातिं यविष्ठ शश्वते ॥२८॥

त्वं हि सुप्रतूरसि त्वं नो गोमतीरिषः ।

महो रायः सातिमग्ने अपावृधि ॥२९॥

अग्ने त्वं यशा अस्या मित्रावरुणा वह ।

ऋतावाना सम्राजा पूतदक्षसा ॥३०॥

---

२४ व्यश्व-पुत्र "विश्वमना" ऋषि, "स्थूलयूप" नामक ऋषिके समान तुम यजमानके गृहमें उत्पन्न और विशाल अग्निकी, स्तोत्र द्वारा, पूजा करो ।

२५ मेधावी (विप्र) यजमान मनुष्योंके अतिथि और वनस्पतिके पुत्र तथा प्राचीन अग्निकी, रक्षणके लिये, स्तुति करते हैं ।

२६ अग्नि, समस्त प्रधान स्तोताओंके सामने तुम कुशाके ऊपर बैठो । तुम स्तुतिके योग्य हो । मनुष्य-प्रदत्त हव्यको स्वीकार करो ।

२७ अग्नि, वरणीय प्रचुर धन हमें दो । बहुतों द्वारा अभिलषणीय तथा सुन्दर वीर्यवाले पुत्र, पौत्र आदिके साथ, कीर्तिसे युक्त, धन हमें दो ।

२८ तुम वरणीय, वासदाता और युवक हो । जो सुन्दर साम-गान करते हैं, उनको लक्ष्य करके सदा धन आदि भेजो ।

२९ अग्नि तुम अतिशय दाता हो । पशुसे युक्त अन्न और महाधनके बीच देने योग्य धन हमें प्रदान करो ।

३० अग्नि, तुम देवोंमें यशस्वी हो; इसलिये तुम सत्यवान्, भली भाँति विराजमान और पवित्र बलसे युक्त मित्र और वरुणको इस कर्ममें ले आओ ।

२४ सूक्त

इन्द्र देवता। अन्तिम तीन मन्त्रोंके देवता सुषाम राजाके पुत्र वरुका दान।
व्यश्व-पुत्र वैयश्व ऋषि। उष्णिक् छन्द।

सखाय आ शिषामहि ब्रह्मेन्द्राय वज्रिणे।
स्तुष ऊ षु वो नृतमाय धृष्णवे ॥१॥
शवसा ह्यसि श्रुतो वृत्रहत्येन वृत्रहा।
मघैर्मघोनो अति शूर दाशसि ॥२॥
स नः स्तवान आ भर रयिं चित्रश्रवस्तमम्।
निरेके चिद्यो हरिवो वसुर्ददिः ॥३॥
आ निरेकमुत प्रियमिन्द्र दर्षि जनानाम्।
धृषता धृष्णो स्तवमान आ भर ॥४॥
न ते सव्यं न दक्षिणं हस्तं वरन्त आमुरः।
न परिबाधो हरिवो गविष्टिषु ॥५॥

---

१ मित्र ऋत्विको, वज्रधर इन्द्रके लिये हम इन स्तोत्रको करेंगे। तुम लोगोंके लिये संग्रामोंमें आयुधोंके नेता और शत्रुओंके धर्षक इन्द्रके लिये मैं स्तुति करूँगा।

२ इन्द्र, तुम बलके द्वारा विख्यात हो। वृत्रासुरका वध करनेके कारण तुम वृत्र-हन्ता हुए हो। तुम शूर हो। धन द्वारा धनवान् व्यक्तिको अधिक धन देते हो।

३ इन्द्र, तुम हमारे द्वारा स्तुत किये जानेपर नानाविध अन्नोंसे युक्त धन हमें प्रदान करो। अश्ववाले इन्द्र, तुम निर्गमन-समयमें ही शत्रुओंके वास दाता और दाता होते हो।

४ इन्द्र, हमारे लिये तुम धन प्रकाशित करो। शत्रु-नाशक, स्तूयमान होकर तुम धृष्ट मनके साथ वही धन हमें दो।

५ अश्ववाले इन्द्र, गौओंके खोजनेके समय तुम्हारे प्रति योद्धा लोग तुम्हारा बायाँ और दाहिना हाथ नहीं हटा सकते। प्रतिरोधक वृत्र आदि भी तुम्हारे हाथोंको नहीं हटा सकते—तुम अबाधित हो।

आ त्वा गोभिरिव व्रजं गीर्भिर्ऋणोम्यद्रिवः ।
आ स्मा कामं जरितुरा मनः पृण ॥६॥
विश्वानि विश्वमनसो धिया नो वृत्रहन्तम ।
उग्र प्रणेतरधि षू वसो गहि ॥७॥
वयं ते अस्य वृत्रहन्विद्याम शूर नव्यसः ।
वसोः स्पार्हस्य पुरुहूत राधसः ॥८॥
इन्द्र यथा ह्यस्ति तेऽपरीतं नृतो शवः । अमृक्ता रातिः पुरुहूत दाशुषे ॥९॥
आ वृषस्व महामह महे नृतम राधसे । दृळ्हश्चिद्दृह्य मघवन्मघत्तये ॥१०॥
नू अन्यत्रा चिदद्रिवस्त्वन्नो जग्मुराशसः ।
मघवञ्छग्धि तव तन्न ऊतिभिः ॥११॥
नह्यङ्ग नृतो त्वदन्यं विन्दामि राधसे ।
राये द्युम्नाय शवसे च गिर्वणः ॥१२॥

---

६ वज्रधर इन्द्र, स्तुति-वचनोंके द्वारा तुम्हें मैं प्राप्त होता हूँ । इसी प्रकारसे लोग गौओंके साथ गोष्ठको प्राप्त होते हैं ।

७ इन्द्र, तुम वृत्रादिके सर्व-श्रेष्ठ विनाशक हो । हे उग्र, वासदाता और नेता इन्द्र, विश्वमना नामक ऋषिके सारे स्तोत्रोंमें उपस्थित होना ।

८ वृत्रघ्न, शूर और अनेकोंके द्वारा बुलाये जाने योग्य इन्द्र, नवीन, स्पृहणीय और सुखादिका साधक धन हम प्राप्त करेंगे ।

९ सबको नचानेवाले इन्द्र, तुम्हारे बलको शत्रु लोग नहीं दबा सकते । बहुतोंके द्वारा बुलाये गये इन्द्र, हव्यदाताको जो तुम दान करते हो, उसे कोई नष्ट नहीं कर सकता ।

१० अत्यन्त पूजनीय और नेताओंमें श्रेष्ठ इन्द्र, महान् धनके लाभके लिये अपने उदरको सोम द्वारा सींचो । धनी इन्द्र, धन-प्राप्तिके लिये तुम सुदृढ़ शत्रु-पुरियोंको विनष्ट करो ।

११ वज्री और धनी इन्द्र, हमलोगोंने तुमसे पहले अन्य देवोंके निकट आशायें की थीं, (परन्तु निष्फल) । इस समय तुम हमें धन और रक्षण दो ।

१२ नचानेवाले और स्तोत्र-पात्र इन्द्र, अन्न-प्रकाशक यश और बलके लिये तुम्हारे सिवा अन्य किसीको नहीं जानता हूँ ।

एन्दुमिन्द्राय सिञ्चत पिबाति सोम्यं मधु।
प्र राधसा चोदयाते महित्वना ॥१३॥
उपो हरीणां पतिं दक्षं पृञ्चन्तमब्रवम्।
नूनं श्रुधि स्तुवतो अश्व्यस्य ॥१४॥
नह्यङ्ग पुरा चन जज्ञे वीरतर स्त्वत्।
नकी राया नैवथा न भन्दना ॥१५॥
एदु मध्वो मदिन्तरं सिञ्च वाध्वर्यो अन्धसः।
एवा हि वीरः स्तवते सदा वृधः ॥१६॥
इन्द्र स्थातर्हरीणां नकिष्टे पूर्व्यस्तुतिम्।
उदानंश शवसा न भन्दना ॥१७॥
तं वो वाजानां पतिमहूमहि श्रवस्यवः।
अप्रायुभिर्यज्ञेभिर्वावृधेन्यम् ॥१८॥

---

१३ इन्द्रके लिये ही तुम सोम-सिञ्चन करो (सोम चुआओ)। इन्द्र सोममय मधु (रस) पियें। वह अपने महत्त्व और अन्नके साथ धनादि भेजते हैं।

१४ अश्वोंके अधिपति इन्द्रकी मैं स्तुति करूँ। वह अपना वर्द्धक बल दूसरेको देते हैं। स्तोता व्यश्व ऋषिके पुत्रकी (मेरी) स्तुति सुनो।

१५ इन्द्र, प्राचीन समयमें तुमसे अधिक धनी, समर्थ, आश्रयदाता और स्तुति-युक्त कोई नहीं उत्पन्न हुआ।

१६ ऋत्विक्, तुम मदकर सोम-रूप अन्नके अतीव मदकर अंश (सोमरस) का, इन्द्रके लिये, सेचन करो। इन वीर और सदा वर्द्धनशील इन्द्रकी ही लोग स्तुति करते हैं।

१७ हरि नामक अश्वोंके स्वामी इन्द्र, तुम्हारी पहलेकी की गयी स्तुतियोंको कोई बल अथवा धनके कारण नहीं लाँघ सकता।

१८ अन्नाभिलाषी होकर हम, जिन यज्ञोंमें ऋत्विक्गण प्रमत्त नहीं होते, उन्हीं यज्ञोंके द्वारा, दर्शनीय अन्नपति इन्द्रको बुलाते हैं।

एतो न्विन्द्रं स्तवाम सखायः स्तोम्यं नरम्
कृष्टीर्यो विश्वा अभ्यस्त्येक इत् १६
अगोरुधाय गविषे द्युक्षाय दस्म्यं वचः
घृतात् स्वादीयो मधुनश्च वोचत २०
यस्यामितानि वीर्या न राधः पर्येतवे ।
ज्योतिर्न विश्वमभ्यस्ति दक्षिणा ॥२१॥
स्तुहीन्द्रं व्यश्ववदनूर्मिं वाजिनं यमम् ।
अर्यो गयं मंहमानं वि दाशुषे ॥२२॥
एवानूनमुप स्तुहि वैयश्व दशमं नवम् ।
सुविद्वांसं चर्कृत्यं चरणीनाम् ॥२३॥
वेत्था हि निर्ऋतीनां वज्रहस्त परिवृजम् ।
अहरहः शुन्ध्युः परिपदामिव ॥२४॥

---

१६ मित्रभूत ऋत्विको, तुम शीघ्र आओ । हम स्तुति-योग्य नेता इन्द्रकी स्तुति करेंगे । यह इन्द्र अकेले ही सारी शत्रुसेनाको अभिभूत करते हैं ।

२० ऋत्विको, जो इन्द्र स्तुतिको नहीं रोकते, स्तुतिकी अभिलाषा करते हैं, उन्हीं दीप्तिशाली इन्द्रके लिये घृत और मधुसे भी स्वादु और अत्यन्त मीठा वचन कहो ।

२१ जिन इन्द्रके वीर-कर्म असीम हैं, जिनके धनको शत्रु नहीं पा सकते और जिनका दान, ज्योति (अन्तरीक्ष) के समान, सारे स्तोताओंको व्याप्त करता है—

२२ उन्हीं न मारने योग्य, बली और स्तोताओंके द्वारा नियन्त्रित इन्द्रकी, व्यश्व ऋषिके समान, स्तुति करो । स्वामी इन्द्र हव्यदाताको प्रशस्त गृह देते हैं ।

२३ व्यश्वके पुत्र विश्वमना, मनुष्यके दसवें प्राण * इन्द्र हैं; इसलिये अभिनव, विद्वान् तथा सदा नमस्कारके योग्य इन्द्रकी स्तुति करो ।

२४ जैसे आदित्य प्रतिदिन पक्षियोंका उड़ना जानते हैं, वैसे ही, हे वज्रहस्त इन्द्र, तुम निर्ऋतियों (राक्षसों) का गमन समझते हो ।

---

* तैत्तिरीय ब्राह्मण (१।३।७) देखिये ।

तदिन्द्राव आभर येनादंसिष्ठ कृत्वने ।
द्विता कुत्साय शिश्नथो नि चोदय ॥२५॥
तमु त्वा नूनमीमहे नव्यं दंसिष्ठ संन्यसे ।
स त्वं नो विश्वा अभिमातीः सक्षणिः ॥२६॥
य ऋक्षादंहसो मुचद्यो वार्यात् सप्त सिन्धुषु ।
वधर्दासस्य तुविनृम्णा नीनमः ॥२७॥
यथा वरो सुषाम्णे सनिभ्य आवहो रयिम् ।
व्यश्वेभ्यः सुभगे वाजिनीवति ॥२८॥
आ नार्यस्य दक्षिणा व्यश्वाँ एतु सोमिनः ।
स्थूरं च राधः शतवत् सहस्रवत् ॥२९॥
य त्वा पृच्छादीजानः कुहया कुहयाकृते ।
एषो अपश्रितो वलो गोमतीमवतिष्ठति ॥३०॥
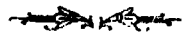
२५ अतीव दर्शनीय इन्द्र, कर्मनिष्ठ यजमानके लिये हमें अपना आश्रय दो। कुत्स नामक राजर्षिके लिये तुमने दो प्रकारसे शत्रुओंका वध किया है। हमें वही रक्षा दो।

२६ अतीव दर्शनीय इन्द्र, तुम स्तुति-योग्य हो। देनेके लिये तुमसे हम धनकी याचना करते हैं। तुम हमारी सारी शत्रु-सेनाके अभिभव-कर्त्ता हो।

२७ जो इन्द्र राक्षस विहित पापसे मुक्त करते हैं और जो सिन्धु आदि सातो नदियोंके तटपर वर्त्तमान यजमानोंके पास धन भेजते हैं, वही तुम, हे बहु-धनी इन्द्र, असुर शत्रुके वधके लिये अस्त्र नीचे करो।

२८ वरु राजा, अपने "पितर" सुषामा राजाके लिये प्राचीन समयमें जैसे तुमने याचकोंको धन दिया था, वैसे ही इस समय व्यश्वों (हमलोगों) को दो। शोभन धनवाली और अन्नवाली उषा, तुम भी धन दो।

२९ मनुष्योंके हितैषी और सोमवाले यजमान (वरु)की दक्षिणा सोमसे युक्त व्यश्व-पुत्रों (हमलोगों)-के पास आवे। सौ और हजार स्थूल धन हमारे पास आवें।

३० उषा देवी, जो तुमसे पूछते हैं कि, "वरु कहाँ रहते हैं," वे अग्र-जिज्ञासु हैं। यदि तुमसे कोई पूछे कि, "कहाँ," तो सबके आश्रय-स्थल और शत्रु-निवारक यह वरु राजा गोमतीके तटपर रहते हैं — ऐसा कहना।

२५ सूक्त

१०-१२ तक विश्वदेवगण देवता, अवशिष्टके मित्र और वरुण देवता। व्यश्वके पुत्र वंयश्व (विश्वमना) ऋषि। उष्णिक् और उष्णिग्गर्भा छन्द।

ता वां विश्वस्य गोपा देवा देवेषु यज्ञिया।
ऋतावाना यजसे पूतदक्षसा ॥१॥
मित्रा तना न रथ्या वरुणो यश्च सुक्रतुः।
सनात् सुजाता तनया धृतव्रता ॥२॥
ता माता विश्ववेदसासुर्याय प्रमहसा।
मही जजानादितिर्ऋतावरी ॥३॥
महान्ता मित्रावरुणा सम्राजा देवावसुरा।
ऋतावानावृतमा घोषतो बृहत् ॥४॥
नपाता शवसो महः सूनू दक्षस्य सुक्रतू।
सृप्रदानू इषो वास्त्वधि क्षितः ॥५॥

---

१ समस्त संसारके रक्षक मित्र और वरुण, देवोंमें तुम भजनीय हो। हविः-प्रदानके लिये तुम यजमानका आश्रय करो। व्यश्व, यज्ञवान् और विशुद्ध बलवाले मित्र और वरुणका यज्ञ करो।

२ शोभन-कर्मा जो मित्र और वरुण धन और रथवाले हैं, वे बहुत समयसे सुन्दर-जन्मा और अदितिके पुत्र तथा धृत-व्रत हैं।

३ महती और सत्यवती अदितिने सर्वधनशाली और तेजस्वी उन्हीं मित्र तथा वरुणको असुर-हनन-बलके लिये उत्पन्न किया है।

४ महान्, सम्राट्, बली (असुर) और सत्यवान् मित्र और वरुण महान् यज्ञका प्रकाशन करते हैं।

५ महान् बलके पौत्र, बलके पुत्र, सुकर्मा और प्रचुर धन देनेवाले मित्र और वरुण अन्नके निवास-स्थानमें रहते हैं।

सं या दानूनि येमथुर्दिव्याः पार्थिवीरिषः ।
नभस्वतीरा वां चरन्तु वृष्टयः ॥६॥
अधि या बृहतो दिवो भि यूथेव पश्यतः ।
ऋतावाना सम्राजा नमसे हिता ॥७॥
ऋतावाना नि षेदतुः साम्राज्याय सुक्रतू ।
धृतव्रता क्षत्रिया क्षत्रमाशतुः ॥८॥
अक्ष्णश्चिद्गातुवित्तरानुल्बणेन चक्षसा ।
नि चिन्मिषन्ता निचिरा नि चिक्यतुः ॥९॥
उत नो देव्यादितिरुरुष्यतां नासत्या ।
उरुष्यन्तु मरुतो वृद्धशवसः ॥१०॥
ते नो नावमुरुष्यत दिवा नक्तं सुदानवः ।
अरिष्यन्तो नि पायुभिः सचेमहि ॥११॥

---

६ मित्र और वरुण, तुमलोग धन तथा दिव्य और पृथिवीपर उत्पन्न अन्न देते हो। जलवती वृष्टि तुम्हारे पास रहे।

७ मित्र और वरुण, तुम सत्यवान्, सम्राट् और हव्य-प्रिय हो। तुमलोग प्रसन्न करनेके लिये देवोंको उसी प्रकार देखते हो, जिस प्रकार गो-यूथको वृषभ देखता है।

८ सत्यवान् और सुन्दर-कर्मा मित्र और वरुण साम्राज्यके लिये बैठें। धृत-व्रत और बली (क्षत्रिय) मित्र और वरुण बल (क्षत्र) को व्याप्त करें।

९ नेत्र होनेके प्रथम ही प्राणियोंको जाननेवाले, सबके प्रेरक और चिरन्तन मित्र तथा वरुण दुःसह तेजोबलसे शोभित हुए।

१० अदिति देवी हमारी रक्षा करें। अश्विद्वय रक्षा करें। अत्यन्त वेगशाली मरुद्गण रक्षा करें।

११ शोभन दानवाले मरुतो, तुमलोग अहिंसित हो। तुमलोग दिन-रात हमारी नौकाकी रक्षा करो। हम तुम्हारे पालनसे इकट्ठे होंगे।

अघ्नते विष्णवे वयमरिष्यन्तः सुदानवे ।
श्रुधि स्वयावन्त सिन्धो पूर्वचित्तये ॥१२॥
तद्वार्यं वृणीमहे वरिष्ठं गोपयत्यम् ।
मित्रो यत् पान्ति वरुणो यदर्यमा ॥१३॥
उत नः सिन्धुरपां तन्मरुतस्तदश्विना ।
इन्द्रो विष्णुर्मीढ्वांसः सजोषसः ॥१४॥
ते हि ष्मा वनुषो नरोऽभिमातिं कयस्य चित् ।
तिग्मं न क्षोदः प्रतिघ्नन्ति भूर्णयः ॥१५॥
अयमेक इत्था पुरूरु चष्टे वि विश्पतिः ।
तस्य व्रतान्यनु वश्चरामसि ॥१६॥
अनु पूर्वाण्योक्या साम्राज्यस्य सश्चिम ।
मित्रस्य व्रता वरुणस्य दीर्घश्रुत् ॥१७॥

१२ हम अहिंसित होकर हिंसा-शून्य सुदाता विष्णुकी स्तुति करेंगे। अकेले ही युद्ध-कर्त्ता विष्णु, तुम स्तोताओंको धन देनेवाले हो। जिसने यज्ञ प्रारम्भ किया है, उसकी स्तुति सुनो।

१३ हम श्रेष्ठ, सबके रक्षक और वरणीय धन आश्रित करते हैं। मित्र, वरुण और अर्यमा इस धनकी रक्षा करते हैं।

१४ हमारे धनकी रक्षा पर्जन्य (मेघ) करें; मरुद्गण और अश्विद्वय भी रक्षा करें; इन्द्र, विष्णु और समस्त अभीष्टवर्षक देवता मिलकर रक्षा करें।

१५ वे देव पूज्य और नेता हैं। जैसे वेगशाली जल वृक्षको उखाड़ फेंकता है, वैसे ही वे देव शीघ्रगामी होकर जिस किसी भी शत्रुके प्रतिकूल होकर उसका विनाश कर डालते हैं।

१६ लोकपति मित्र बहु-सङ्ख्यक प्रधान द्रव्योंको, अपने तेजसे, इसी प्रकार देखते हैं। मित्र और वरुणमेंसे हम तुम्हारे लिये मित्रके व्रतको करते हैं।

१७ हम साम्राज्य-सम्पन्न वरुणके गृहको प्राप्त करेंगे। अतीव प्रसिद्ध मित्रके व्रतको भी प्राप्त करेंगे।

परि यो रश्मिना दिवोन्तान्ममे पृथिव्याः ।
उभे आ पप्रौ रोदसी महित्वा ॥१८॥
उदु ष्य शरणे दिवो ज्योतिरयंस्त सूर्यः ।
अग्निर्न शुक्रः समिधान आहुतः ॥१९॥
वचो दीर्घप्रसद्मनीशे वाजस्य गोमतः ।
ईशे हि पित्वोऽविषस्य दावने ॥२०॥
तत् सूर्यं रोदसी उभे दोषा वस्तोरुप ब्रुवे ।
भोजेष्वस्माँ अभ्युच्चरा सदा ॥२१॥
ऋज्रमुक्षण्यायने रजतं हरयाणे । रथं युक्तमसनाम सुषामणि ॥२२॥
ता मे अश्व्याना हरीणां नितोशना । उतो नु कृत्व्यानां नृवाहसा ॥२३॥
स्मदभीशू कशावन्ता विप्रा नविष्ठया मती ।
महो वाजिनावर्वन्ता सचासनम् ॥२४॥

---

१८ जो मित्र स्वर्ग और संसारके अन्तको, अपनी रश्मिसे, प्रकाशित करते हैं, अपनी महिमासे इन दोनोंको पूर्ण भी करते हैं।

१९ सुन्दर वीर्यवाले मित्र और वरुण प्रकाशक आदित्यके स्थान (आकाश) में अपनी ज्योतिको विस्तृत करते हैं । पश्चात् अग्निके समान शुभ्रवर्ण और सबके द्वारा आहूत होकर अवस्थान करते हैं ।

२० स्तोता, विस्तृत गृहवाले यज्ञमें मित्रावरुणकी स्तुति करो। वरुण पशु-युक्त अन्नके ईश्वर हैं और महाप्रसन्नता कारक अन्न देनेमें भी समर्थ हैं।

२१ मैं मित्र और वरुणके उस तेज और द्यावापृथिवीकी दिन-रात स्तुति करता हू । वरुण, सदा हमें दाता (दान) के अभिमुख करो।

२२ उक्ष-गोत्रमें उत्पन्न और सुषामाके पुत्र वरु राजाके दानमें प्रवृत्त होनेपर सरलगामी, रजतके समान और अश्वोंसे युक्त रथ हमको मिला था। सुषामाके पुत्रका रथ शत्रुओंके जीवन और ऐश्वर्य आदिका हरण करता है।

२३ हरित-वर्ण अश्वोंके सङ्घमें शत्रुओंके लिये अतीव बाधक तथा कुशल व्यक्तियोंमें मनुष्योंके वाहक दो अश्व, वरु राजा द्वारा, हमारे लिये शीघ्र प्रदत्त हों ।

२४ अभिनव स्तुति द्वारा स्तव करते हुए शोभन रज्जुवाले, कशा (चाबुक) वाले, सन्तोषक और शीघ्र-गमन दो (सुषामाके पुत्र वरुके) अश्वोंको मैं प्राप्त करूँ ।

२६ सूक्त

अश्विद्वय देवता। २०—२४ तकके वायु देवता। अङ्गिरोगोत्रीय व्यश्वके पुत्र वैयश्व वा विश्वमना ऋषि। गायत्री, अनुष्टुप् और उष्णिक् छन्द।

युवोरु षू रथं हुवे सधस्तुत्याय सूरिषु। अतूर्तदक्षा वृषणा वृषण्वसू ॥१॥

युवं वरो सुषाम्णे महे तने नासत्या। अवोऽभिर्याथो वृषणा वृषण्वसू ॥२॥

ता वामद्य हवामहे हव्येभिर्वाजिनीवसू। पूर्वीरिष इषयन्तावति क्षपः ॥३॥

आ वां वाहिष्ठो अश्विना रथो यातु श्रुतो नरा।
उप स्तोमान्तुरस्य दर्शथः श्रिये ॥४॥

जुहुराणा चिदश्विना मन्येथां वृषण्वसू। युवं हि रुद्रा पर्षथो अति द्विषः ॥५॥

दस्रा हि विश्वमानुषङ्मक्षूभिः परिदीयथः।
धियं जिन्वा मधुवर्णा शुभस्पती ॥६॥

उप नो यातमश्विना राया विश्वपुषा सह। मघवाना सुवीरावनपच्युता ॥७॥

---

१ अहिंसित-बल, वर्षक और धनशाली अश्विद्वय, तुम्हारे बलको कोई हिंसा नहीं कर सकता। स्तोताओंके बीच तुम्हारे एकत्र और शीघ्र-गमनके लिये रथको बुलाता हूँ।

२ सत्य-स्वरूप, अभिलाषप्रद और धनशाली अश्विद्वय, सुषामा राजाके लिये महाधन देनेके निमित्त तुमलोग जैसे आते थे, वैसे ही रक्षाके साथ आगमन करो। वरु, तुम इस बातको कहो।

३ अन्न, धन और बहुत अन्नवाले अश्विद्वय, आज प्रातःकाल होनेपर तुम्हें हम हव्य द्वारा बुलावेंगे।

४ नेता अश्विद्वय, सबसे अधिक ढोनेवाला और तुम्हारा प्रसिद्ध रथ आगमन करे। क्षिप्र-स्तोताको ऐश्वर्य प्रदान करनेके लिये उसके सारे स्तोत्रोंको जानो।

५ अभिलाषा-दाता और धनी अश्विद्वय, कुटिल कार्य-कर्त्ता शत्रुओंको सामने उपस्थित जानो। तुमलोग रुद्र हो। द्वेषी शत्रुओंको क्लेश प्रदान करो।

६ सबके दर्शनीय, कर्म-प्रीतिकर, मदकर कान्तिवाले और जल-पोषक अश्विद्वय, तुमलोग शीघ्रगामी अश्वोंके द्वारा समस्त यज्ञके प्रति आगमन करो।

७ अश्विद्वय, विश्व-पालक धनके साथ हमारे यज्ञमें आओ। तुमलोग धनी, शूर और अजेय हो।

आ मे अस्य प्रतीव्यमिन्द्रनासत्या गतम् ।
देवा देवेभिरद्य सचनस्तमा ॥८॥
वयं हि वां हवामह उक्षण्यन्तो व्यश्ववत् ।
सुमतिभिरुप विप्राविहा गतम् ॥९॥
अश्विना स्वृषे स्तुहि कुवित्ते श्रवतो हवम् ।
नेदीयसः कूळयातः पणीँरुत ॥१०॥
वैयश्वस्य श्रुतं नरोतो मे अस्य वेदथः ।
सजोषसा वरुणो मित्रो अर्यमा ॥११॥
युवादत्तस्य धिष्ण्या युवानीतस्य सूरिभिः ।
अहरहर्वृषणा मह्यं शिक्षतम् ॥१२॥
यो वां यज्ञेभिरावृतोऽधिवस्त्रा वधूरिव ।
सपर्यन्ता शुभे चक्राते अश्विना ॥१३॥
यो वामुरुव्यचस्तमं चिकेतति नृपाय्यम् ।
वर्तिरश्विना परि यातमस्मयू ॥१४॥

---

८ इन्द्र और नासत्य-द्वय (अश्विद्वय), तुमलोग अतीव सेव्यमान होकर मेरे यज्ञमें आज, देवोंके साथ, आओ।

९ अपने लिये धन-दानकी प्राप्तिकी इच्छासे हम व्यश्वके समान तुम्हें बुलाते हैं। मेधावियो, कृपा करके यहाँ पधारो।

१० ऋषि, अश्विद्वयकी स्तुति करो। अनेक बार तुम्हारा आह्वान सुनते हुए अश्विद्वय समीपवर्त्ती शत्रुओं और पणियोंको मारें।

११ नेताओ, वैयश्वका आह्वान सुनो। मेरे आह्वानको समझो। वरुण, मित्र और अर्यमा सदा मिले हुए हैं।

१२ स्तवनीय और अभिलाषप्रद अश्विद्वय, तुमलोग स्तोताओंको जो देते हो और उनके लिये जो ले आते हो, वह प्रतिदिन मुझे दो।

१३ जैसे वधू वस्त्रसे ढकी रहती है, वैसे ही जो मनुष्य यज्ञसे आवृत (परिवृत) रहता है, उसकी परिचर्या (देख-रेख) करते हुए अश्विद्वय उसका मङ्गल करते हैं।

१४ अश्विद्वय, अतीव व्यापक और नेताओंके पान-योग्य सोमका दान करना जो मनुष्य जानता है, वैसे (ज्ञाता) मुझे पानेकी इच्छा करके तुम मेरे गृहमें पधारो।

अस्मभ्यं सु वृषण्वसू यातं वर्तिर्नृपाय्यम् ।
विषद्रुहेव यज्ञमूहथुर्गिरा ॥१५॥
वाहिष्ठो वां हवानां स्तोमो दूतो हुवन्नरा । युवाभ्यां भूत्वश्विना ॥१६॥
यददो दिवो अर्णव इषो वा मदथो गृहे । श्रुतमिन्मे अमर्त्या ॥१७॥
उत स्या श्वेतयावरी वाहिष्ठा वां नदीनाम् । सिन्धुर्हिरण्यवर्तनिः ॥१८॥
स्मदेतया सुकीर्त्याश्विना श्वेतया धिया । वहेथे शुभ्रयावाना ॥१९॥
युक्ष्वा हि त्वं रथासहा युवस्व पोष्या वसो ।
अन्नो वायो मधु पिवास्माकं सवना गहि ॥२०॥
तव वायवृतस्पते त्वष्टुर्जामातरद्भुत । अवांस्या वृणीमहे ॥२१॥
त्वष्टुर्जामातरं वयमीशानं राय ईमहे ।
सुतावन्तो वायुं द्युम्ना जनासः ॥२२॥

---

१५ अभिलाष-प्रद और धनी अश्विद्वय, नेताओंके पीनेके योग्य सोमके लिये हमारे घर पधारो। शत्रु-द्रोही शरके समान (व्याध शरसे मृग वाले ईप्सित प्रदेशको प्राप्त करता है) स्तुति-वाक्य द्वारा यज्ञ-समाप्ति कर दो ।

१६ सबके नेता अश्विद्वय, स्तोत्रोंमेंसे स्तोम (स्तुति-विशेष) तुम्हारे पास जाकर तुम्हें बुलावे और प्रसन्न करे ।

१७ अश्विद्वय, द्युलोकके (नीचे) इस समुद्रमें यदि तुम प्रमत्त होओ अथवा अन्न चाहनेवाले यजमानके गृहमें यदि मत्त होओ, तो, अमरद्वय, हमारा यह स्तोत्र सुनो ।

१८ नदियोंमेंसे स्पन्दन-शील और हिरण्य-मार्गा श्वेतयावरी (श्वेत-जला होकर बहनेवाली) नामकी नदी स्तुति द्वारा तुम्हारे पास जाती है अथवा तुम्हारे रथको ढोती है ।

१९ सुन्दर गमनवाले अश्विद्वय, सुन्दर कीर्त्तिवाली, श्वेतवर्णा और पुष्टि-कारिणी श्वेतयावरी नदीको प्रवाहित करो।

२० वायु, रथ ढोनेवाले दोनों अश्वोंको योजित करो । वासदाता वायु, पोषणके योग्य अश्विद्वयको संग्राममें मिलाओ । वायु, अनन्तर हमारे मदकर सोमका पान करो और तीनों सवनोंमें आओ।

२१ यज्ञपति, त्वष्टा (ब्रह्मा)के जामाता और विचित्र-कर्मा वायु, तुम्हारा पालन हम प्राप्त कर सकें ।

२२ हम त्वष्टाके जामाता और समर्थ वायुके समीप, सोम अभिषव करके, धन माँगते हैं । धन दानसे हम धनी होंगे ।

वायो याहि शिवा दिवो वहस्वा सु स्वश्व्यम् ।
वहस्व महः पृथुपक्षसा रथे ॥२३॥
त्वां हि सुप्सरस्तमं नृषदनेषु हूमहे । ग्रावाणं नाश्वपृष्ठं मंहना ॥२४॥
स त्वं नो देव मनसा वायो मन्दानो अग्रियः ।
कृधि वाजाँ अपो धियः ॥२५॥

२७ सूक्त

विश्वदेवगण देवता । विवस्वान्के पुत्र मनु ऋषि । अयुज् बृहती,
युज् बृहती और सतोबृहती छन्द ।

अग्निरुक्थे पुरोहितो ग्रावाणो बर्हिरध्वरे ।
ऋचा यामि मरुतो ब्रह्मणस्पतिं देवाँ अवो वरेण्यम् ॥१॥
आ पशुं गासि पृथिवीं वनस्पतीनुषासा नक्तमोषधीः ।
विश्वे च नो वसवो विश्ववेदसो धीनां भूत प्रावितारः ॥२॥

---

२३ वायु, द्युलोकमें कल्याण ले जाओ। अश्वसे युक्त रथ चलाओ। तुम महान् हो। मोटे पार्श्वोंवाले अश्वोंको अपने रथमें जोतो।

२४ वायु, तुम अतीव सुन्दर रूपवाले हो। तुम्हारे सारे अङ्ग महिमासे व्याप्त हैं। सोमाभिषवके लिये पत्थरके समान यज्ञोंमें हम तुम्हें बुलाते हैं।

२५ वायुदेव, देवोंमें तुम मुख्य हो। अन्तःकरणसे प्रसन्न होकर हमें अन्न, जल और कर्म प्रदान करो।

---

१ इस स्तोत्रात्मक यज्ञमें अग्नि, सोमाभिषवके लिये प्रस्तर और कुश अग्रभागमें स्थापित हुए हैं। मरुद्गण, ब्रह्मणस्पति और अन्य देवोंसे, स्तुति द्वारा, रक्षणकी प्राप्तिके लिये. मैं याचना करता हूँ।

२ अग्नि, हमारे यज्ञमें पशुके निकट आते हो, इस पृथिवी (यज्ञशाला) और वनस्पतिके समीप आते हो और प्रातःकाल तथा रात्रिमें सोमाभिषवके लिये प्रस्तरके निकट आते हो। सर्वज्ञाता विश्वदेवगण हमारे कर्मोंके रक्षक होओ।

प्र सू न एत्वध्वरोऽग्ना देवेषु पूर्व्यः ।
आदित्येषु प्र वरुणे धृतव्रते मरुत्सु विश्वभानुषु ॥३॥
विश्वे हि ष्मा मनवे विश्ववेदसो भुवन्वृधे रिशादसः ।
अरिष्टेभिः पायुभिर्विश्ववेदसो यन्ता नोऽवृकं च्छर्दिः ॥४॥
आ नो अद्य समनसो गन्ता विश्वे सजोषसः ।
ऋचा गिरा मरुतो देव्यदिते सदने पस्त्ये महि ॥५॥
अभि प्रिया मरुतो या वो अश्व्या हव्या मित्र प्रयाथन ।
आ बर्हिरिन्द्रो वरुणस्तुरा नर आदित्यासः सदन्तु नः ॥६॥
वयं वो वृक्तबर्हिषो हितप्रयस आनुषक् ।
सुतसोमासो वरुण हवामहे मनुष्वदिद्धाग्नयः ॥७॥
आ प्र यात मरुतो विष्णो अश्विना पूषन्माकीनया धिया ।
इन्द्र आयातु प्रथमः सनिष्युभिर्वृषा यो वृत्रहा गृणे ॥८॥

३ प्राचीन यज्ञ अग्नि और अन्य देवोंके पास, उत्तमताके साथ, गमन करे एवम् आदित्यों, धृत-व्रत वरुण और तेजस्वी मरुतोंके निकट भी गमन करे।

४ बहुधनशाली और शत्रु-नाशक विश्वदेवगण मनुके वर्द्धनके लिये हों। सर्वज्ञाता देवो, अहिंसित पालनके साथ हमें बाधा—रहित गृह प्रदान करो।

५ विश्वदेवों, स्तोत्रोंमें समान-मना और परस्पर सङ्गत होकर, वचन और ऋचाके साथ, आजके यज्ञ-दिनमें हमारे निकट आओ। मरुतो और महत्त्वपूर्ण अदिति देवी, हमारे उस गृहमें विराजो।

६ मरुतो, अपने प्रिय अश्वोंको इस यज्ञमें भेजो अथवा अश्वोंसे युक्त होकर आओ। मित्र, हव्यके लिये पधारो। इन्द्र, वरुण और युद्धमें शत्रु-वधके लिये क्षिप्रकर्ता तथा नेता आदित्यगण हमारे कुशोंपर बैठें।

७ वरुण, मनुके समान हम (मनुवंशीय) सोमाभिषव करके और अग्निको समिद्ध करके, हविको स्थापित और कुशका छेदन करते हुए, तुम्हें बुलाते हैं।

८ मरुद्गण, विष्णु, अश्विद्वय और पूषा, मेरी स्तुतिके साथ यज्ञमें पधारो। देवोंके बीच प्रथम इन्द्र भी आवें। इन्द्राभिलाषी स्तोता लोग इन्द्रको वृत्रहा कहते हैं।

वि नो देवासो अद्रुहोच्छिद्रं शर्म यच्छत ।
न यद्दूराद्वसवो नू चिदन्तितो वरूथमादधर्षति ॥९॥
अस्ति हि वः सजात्यं रिशादसो देवासो अस्त्याप्यम् ।
प्र णः पूर्वस्मै सुविताय वोचत मक्षू सुम्नाय नव्यसे ॥१०॥
इदा हि व उपस्तुतिमिदा वामस्य भक्तये ।
उप वो विश्ववेदसो नमस्युराँ असृक्ष्यन्यामिव ॥११॥
उदु ष्य वः सविता सुप्रणीतयोऽस्थादूर्ध्वो वरेण्यः ।
नि द्विपादश्चतुष्पादो अर्थिनोऽविश्रन् पतयिष्णवः ॥१२॥
देवंदेवं वोऽवसे देवन्देवमभिष्टये ।
देवंदेवं हुवेम वाजसातये गृणन्तो देव्या धिया ॥१३॥
देवासो हि ष्मा मनवे समन्यवो विश्वे साकं सरातयः ।
ते नो अद्य ते अपरं तुचे तु नो भवन्तु वरिवोविदः ॥१४॥

---

९ द्रोह-शून्य देवो, हमें बाधा-शून्य गृह प्रदान करो । वासदाता देवो, दूर अथवा समीपके देशसे आकर कोई कभी वरणीय गृहकी हिंसा नहीं करता ।

१० शत्रु-भक्षक देवो, तुममें स्वजातिभाव और बन्धुभाव हैं । प्रथम अभ्युदय और नवीन धनके लिये शीघ्र और उत्तमतासे हमें कहो ।

११ सर्वधनवान् देवो, मैं अन्नकी कामना करता हूं । इसी समय किसीसे न की गयी स्तुतिको मैं, अभी तुम्हारे रमणीय धनकी प्राप्तिके लिये, करता हूं ।

१२ सुन्दर स्तुतिवाले मरुतो, तुम लोगोंमें ऊर्ध्वगामी और सबके सेवनीय सविता (सबको कार्यमें लगानेवाले) जब उगते हैं, उस समय मनुष्य, पशु और पक्षी अपने-अपने कार्योंमें लग जाते हैं ।

१३ हम प्रकाशक स्तुतिके द्वारा स्तव करते हुए तुमलोगोंमेंसे दिव्य देवताको, कर्म-रक्षणके लिये, बुलाते हैं । अभीप्सितकी प्राप्तिके लिये दीप्तिमान् देवताको बुलाते हैं । अन्न-लाभके लिये दिव्य देवताको बुलाते हैं ।

१४ समान-क्रोधी विश्वदेवगण मनुके (मेरे) लिये धनादि दानके निमित्त एक साथ प्रवृत्त हों । आज और दूसरे दिन—सब दिनोंमें मेरे लिये और मेरे पुत्रके लिये वरणीय (सम्भजनीय) धनके दाता हों ।

प्र वः शंसाम्यद्रुहः संस्थ उपस्तुतीनाम् ।
न तं धूर्तिर्वरुण मित्र मर्त्यं यो वो धामभ्योऽविधत् ॥१५॥
प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो यो वो वराय दाशति ।
प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्पर्यरिष्टः सर्व एधते ॥१६॥
ऋते स विन्दते युधः सुगेभिर्यात्यध्वनः ।
अर्यमा मित्रो वरुणः सरातयो यं त्रायन्ते सजोषसः ॥१७॥
अज्रे चिदस्मै कृणुथा न्यञ्चनं दुर्गे चिदा सुसरणम् ।
एषा चिदस्मादशनिः परो नु सास्रेधन्ती वि नश्यतु ॥१८॥
यदद्य सूर्य उद्यति प्रियक्षत्रा ऋतं दध ।
यन्निम्रुचि प्रबुधि विश्ववेदसो यद्वा मध्यन्दिने दिवः ॥१९॥
यद्वाभिपित्वे असुरा ऋतं यते छर्दिर्येम वि दाशुषे ।
वयं तद्वो वसवो विश्ववेदस उप स्थेयाम मध्य आ ॥२०॥

१५ अहिंसनीय देवो, स्तोत्रके आधार यज्ञमें तुम्हारी खूब स्तुति करता हूँ। वरुण और मित्र, तुम्हारे शरीरके लिये जो हवि धारण करता है, उसे शत्रुओंकी हिंसा बाधा नहीं देती।

१६ देवो, जो मनुष्य वरणीय धनके लिये तुम्हें हव्य देता है, वह अपना गृह बढ़ाता, अन्न बढ़ाता, यज्ञके द्वारा प्रजा (पुत्रादि) से सम्पन्न होता है और सबके द्वारा अहिंसित होकर समृद्ध होता है।

१७ वह युद्धके बिना भी धन प्राप्त करता है, सुन्दर गमनवाले अश्वोंसे मार्गको अतिक्रम करता है तथा मित्र, वरुण और अर्यमा मिलित और समान दानसे युक्त होकर उसकी रक्षा करते हैं।

१८ देवो, अगम्य और दुर्गम्य पथको सुगम करो। यह अशनि (आयुध) किसीकी हिंसा न करके विनिष्ट हो जाय।

१९ बल-प्रिय देवो, सूर्यके उदित होनेपर आज तुम कल्याणवाहक गृहको धारण करो। सारे धनोंसे युक्त देवो, सायंकाल धारण करो, प्रातःकाल धारण करो और मध्याह्न कालमें मनुके लिये धन धारण करो।

२० प्राज्ञ (असुर) देवो, यज्ञके प्रति तुम्हारे लाभके लिये हवि देनेवाले और यज्ञगामी यजमानको यदि तुमलोग गृह प्रदान करते हो, तो हे वासदाता और सर्व-धन-संयुक्त देवो, हम तुम्हारे उसी मङ्गलकर गृहमें तुम्हारी पूजा करेंगे।

यदद्य सूर उदिते यन्मध्यन्दिन आतुचि ।
वामं धत्थ मनवे विश्ववेदसो जुह्वानाय प्रचेतसे ॥२१॥
वयं तद्वः सम्राज आ वृणीमहे पुत्रो न बहुपाय्यम् ।
अश्याम तदादित्या जुह्वते हविर्येन वस्योऽनशामहै ॥२२॥

२८ सूक्त

विश्वदेवगण देवता । मनु ऋषि । गायत्री और पुर उष्णिक् छन्द ।

ये त्रिंशति त्रयस्परो देवासो बर्हिरासदन् । विदन्नह द्वितासनन् ॥१॥
वरुणो मित्रो अर्यमा स्मद्रातिषाचो अग्नयः ।
पत्नीवन्तो वषट्कृताः ॥२॥
ते नो गोपा अपाच्यास्त उदक्त इत्था न्यक् । पुरस्तात् सर्वया विशा ॥३॥
यथा वशन्ति देवास्तथेदसत्तदेषां नकिरा मिनत् । अरावा चन मर्त्यः ॥४॥

---

२१ सर्व-धन-सम्पन्न देवो, आज सूर्योदय होनेपर, मध्याह्नमें और सायंकालमें हव्यदाता और प्रकृष्ट ज्ञानी मनु ऋषिके (मेरे) लिये जो रमणीय धन तुम लोग धारण करते हो—

२२ दीप्तिमान् देवो, तुम्हारे पुत्रोंके समान हम बहुत लोगोंके भोगके योग्य उसी धनको प्राप्त करेंगे। आदित्यो, यज्ञ करते हुए हम इस धनके द्वारा अतीव धनाढ्यता प्राप्त करेंगे ।

---

१ जो तेतीस देवता कुशोंपर बैठे थे, वे हमें समझें और बार-बार हमें धन दें ।

२ वरुण, मित्र और अर्यमा सुन्दर हव्य देनेवाले यजमानोंके साथ मिलकर और देव-पत्नियोंके सहित, नानाविध वषट्कारों (हि, वौषट् आदि शब्दों)के द्वारा बुलाये गये हैं ।

३ वे वरुणादि देव, अपने सारे अनुचरोंके साथ, सम्मुख, पीछे, ऊपर और नीचे हमारे रक्षक हों ।

४ देवता लोग जैसी इच्छा करते हैं, वैसा ही होता है। देवोंकी कामनाको कोई विनष्ट नहीं कर सकता। अदाता मनुष्य (यदि वह हवि देने लगे) की भी कोई हिंसा नहीं कर सकता।

सप्तानां सप्त ऋष्टयः सप्त द्युम्नान्येषाम्। सप्तो अधि श्रियो धिरे ॥ ११ ॥

२९ सूक्त

विश्वदेवगण देवता। मरीचिके पुत्र कश्यप वा वैवस्वत ऋषि। द्विपदा और विराट् छन्द।

बभ्रुरेको विषुणः सूनरो युवाञ्ज्यङ्क्ते हिरण्ययम् ॥१॥

योनिमेक आ ससाद द्योतनोऽन्तर्देवेषु मेधिरः ॥२॥

वाशीमेको बिभर्ति हस्त आयसीमन्तर्देवेषु निध्रुविः ॥३॥

वज्रमेको बिभर्ति हस्त आहितं तेन वृत्राणि जिघ्नते ॥४॥

तिग्ममेको बिभर्ति हस्त आयुधं शुचिरुग्रो जलाषभेषजः ॥५॥

पथ एकः पीपाय तस्करो यथाँ एष वेद निधीनाम् ॥६॥

त्रीण्येक उरुगायो विचक्रमे यत्र देवासो मदन्ति ॥७॥

---

११ (इन्द्रके अंश-रूप) सात मरुतोंके सात प्रकारके आयुध हैं, सात प्रकारके आभरण हैं और सात प्रकारकी दीप्तियाँ हैं।

---

१ बभ्रु वर्ण (पीले रंगके), सवग, रात्रिओंके नेता, युवक और एकाकी सोमदेव हिरण्यमय आभरणको प्रकाशित करते हैं।

२ देवोंमें दीप्यमान, मेधावी और अकेले अग्नि अपना स्थान प्राप्त करते हैं।

३ देवोंके बीच निश्चल स्थानमें वर्त्तमान त्वष्टा हाथोंमें लौहमय कुठारको धारण करते हैं।

४ इन्द्र अकेले हस्त-निहित वज्र धारण करते और वृत्रादिका नाश करते हैं।

५ सुखावह भिषक्, पवित्र और उग्र रुद्र हाथोंमें तीखा आयुध रखते हैं।

६ एक (पूषा) मार्गकी रक्षा करते हैं। वे चोरके समान सारे धनोंको जानते हैं।

७ एक (विष्णु) बहुतोंकी स्तुतिके योग्य हैं। उन्होंने तीन पैरोंसे तीनों लोकोंका प्रक्रमण किया। इससे देवता लोग प्रसन्न हुए।

विभिर्द्वा चरत एकया सह प्र प्रवासेव वसतः ॥८॥
सदो द्वा चक्राते उपमा दिवि सम्राजा सर्पिरासुती ॥९॥
अर्चन्त एके महि साम मन्वत तेन सूर्यमरोचयन् ॥१०॥

३० सूक्त

विश्वदेवगण देवता। वैवस्वत मनु ऋषि। पुर उष्णिक् बृहती और अनुष्टुप् छन्द।

नहि वो अस्त्यर्भको देवासो न कुमारकः।
विश्वे सतोमहान्त इत् ॥१॥
इति स्तुतासो असथा रिशादसो ये स्थ त्रयश्च त्रिंशच्च।
मनोर्देवा यज्ञियासः ॥२॥
ते नस्त्राध्वं तेऽवत त उ नो अधि वोचत।
मा नः पथः पित्र्यान्मानवादधि दूरं नैष्ट परावतः ॥३॥
ये देवास इह स्थन विश्वे वैश्वानरा उत।
अस्मभ्यं शर्म सप्रथो गवेऽश्वाय यच्छत ॥४॥

---

८ दो (अश्विद्वय) एक स्त्री (सूर्या) के साथ, दो प्रवासी पुरुषोंके समान, रहते और अश्व द्वारा संचरण करते हैं।

९—१० अपनी कान्तिके परस्पर उपमेय दो (मित्र और वरुण) अतीव दीप्तिशाली और घृतरूप हविवाले हैं। वे द्युलोकके स्थानका निर्माण करते हैं। स्तोता लोग महान् साम-मन्त्रका उच्चारण करके सूर्यको दीप्त करते हैं।

१ देवो, तुम लोगोंमें कोई बालक नहीं है, कोई कुमार नहीं है। तुम सब महान् हो।

२ शत्रु-भक्षक और मनुके (मेरे) यज्ञार्ह देवो, तुमलोग तेंतीस हो। इसी प्रकार तुम लोग स्तुत हुए हो।

३ तुमलोग हमें राक्षसोंसे बचाओ और धनादि देकर हमारी रक्षा करो। हमसे तुमलोग भली भाँति बोलो। देवो, पिता मनुसे आये हुए मार्गसे हमें भ्रष्ट नहीं करना; दूरस्थित मार्गसे भी भ्रष्ट नहीं करना।

४ देवो और यज्ञोत्पन्न अग्नि, तुम सब लोग हो। तुम सब यहाँ ठहरो। अनन्तर सर्वत्र प्रख्यात सुख, गौ और अश्व हमें दान करो।

५ अनुवाक । ३१ सूक्त

१-४ ऋकोंके यज्ञ देवता; अनन्तर यज्ञ-प्रशंसा देवता । वैवस्वत मनु ऋषि ।
अनुष्टुप्, पङ्क्ति और गायत्री छन्द ।

यो यजाति यजात इत् सुनवच्च पचाति च । ब्रह्मेदिन्द्रस्य चाकनत् ॥१॥
पुरोडाशं यो अस्मै सोमं ररत आशिरं । पादित्तं शक्रो अंहसः ॥२॥
तस्य द्युमाँ असद्रथो देवजूतः स शूशुवत् । विश्वा वन्वन्नमित्रिया ॥३॥
अस्य प्रजावती गृहेऽसश्चन्ती दिवेदिवे । इला धेनुमती दुहे ॥४॥
या दम्पती समनसा सुनुत आ च धावतः । देवासो नित्ययाशिरा ॥५॥
प्रति प्राशव्याँ इतः सम्यञ्चा बर्हिराशाते । न ता वाजेषु वायतः ॥६॥
न देवानामपि ह्नुतः सुमतिं न जुगुक्षतः । श्रवो बृहद्विवासतः ॥७॥
पुत्रिणा ता कुमारिणा विश्वमायुर्व्यश्नुतः । उभा हिरण्यपेशसा ॥८॥

---

१ जो यजमान यज्ञ करता है, जो पुनः यज्ञ करता है, वह सोमका अभिषव और पुरोडाशादिका पाक करता है और इन्द्रके स्तोत्रकी बार-बार कामना करता है।

२ जो यजमान इन्द्रको पुरोडाश और दूध मिला सोम प्रदान करता है, निश्चय ही पापसे उसे इन्द्र बचाते हैं।

३ देव-प्रेरित और प्रकाशमान रथ उसी यजमानका हो जाता है और वह उसके द्वारा शत्रुकी बाधाओंको नष्ट करके समृद्ध होता है।

४ पुत्रादि-युक्त, विनाश-शून्य और धेनु-सहित अन्न प्रतिदिन इस यजमानके गृहमें प्राप्त किया जा सकता है।

५ देवो, जो दम्पती एक मनसे अभिषव करते हैं, दशापवित्र द्वारा सोमका शोधन करते हैं और मिश्रण द्रव्य (क्षीरादि) के द्वारा सोमको मिलाते हैं—

६ वे भोजनके योग्य अन्न आदि प्राप्त करते हैं और मिलकर यज्ञमें आते हैं। वे अन्नके लिये कहीं नहीं जाते।

७ वे दम्पती इन्द्रादि देवोंका अपलाप नहीं करते—तुम्हारी शोभन बुद्धिको नहीं ढकते। महान् अन्नके द्वारा तुम्हारी परिचर्या करते हैं।

८ वे पुत्रवाले हैं—कुमार (षोडशवर्षीय) पुत्रवाले हैं। वे स्वर्ण-विभूषित होकर पूर्ण आयु प्राप्त करते हैं।

वीतिहोत्रा कृतद्वसू दशस्यन्तामृताय कम् ।
समूधो रोमशं हतो देवेषु कृणुतो दुवः ॥९॥
आ शर्म पर्वतानां वृणीमहे नदीनाम् । आ विष्णोः सचाभुवः ॥१०॥
ऐतु पूषा रयिर्भगः स्वस्ति सर्वधातमः । उरुरध्वा स्वस्तये ॥११॥
अरमतिरनर्वणो विश्वो देवस्य मनसा । आदित्यानामनेह इत् ॥१२॥
यथा नो मित्रो अर्यमा वरुणः सन्ति गोपाः । सुगा ऋतस्य पन्थाः ॥१३॥
अग्निं वः पूर्व्यं गिरा देवमीळे वसूनाम् ।
सपर्यन्तः पुरुप्रियं मित्रं न क्षेत्रसाधसम् ॥१४॥
मक्षू देववतो रथः शूरो वा पृत्सु कासु चित् ।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वनो भुवत् ॥१५॥

९ प्रिय यज्ञवाले इन दम्पतीकी स्तुति देवोंका कामना करतो है। वे देवोंको सुखप्रद अन्न प्रदान करते हैं। वे उपयुक्त धन हैं। वे अमरत्व या सन्ततिके लाभके लिये रोमश (पुरुषेन्द्रिय) और ऊध (स्त्रीकी जननेन्द्रिय) का संयोग करते हैं। वे देवोंकी सेवा करते हैं।

१० हम पर्वतके सुख (स्थिरता आदि) और नदीके सुख (जप आदि)की प्रार्थना करते हैं। देवोंके साथ विष्णुके सुखकी भी हम प्रार्थना करते हैं।

११ धनोंके दाता, भजनीय और सबके पोषक पूषा रक्षाके साथ आवें। उनके आनेपर विस्तृत मार्ग हमारे लिये मङ्गलकर हो।

१२ शत्रुओंके द्वारा न दबने योग्य और प्रकाशक पूषाके सारे स्तोता श्रद्धासे पर्याप्त स्तुतिसे युक्त होते हैं। आदित्योंका दान पाप-शून्य होता है।

१३ मित्र, वरुण और अर्यमा जैसे हमारे रक्षक हैं, वैसे ही सारे यज्ञ-मार्ग भी सुगम हों।

१४ देवो, तुमलोगोंके मुख्य और दीप्तिमान् अग्निकी, धनकी प्राप्तिके लिये, स्तुति-वचनके द्वारा, स्तुति करता हूँ। तुम्हारे परिचर्याकर्ता मनुष्य अनेक लोगोंके प्रिय होते हैं। वे यज्ञ-साधक मित्रके समान अग्निकी स्तुति करते हैं।

१५ देववान् व्यक्तिका रथ उसी तरह शीघ्र दुर्गमें प्रवेश करता है, जिस तरह शूर किसी सेनाके मध्यमें घुसता है। जो यजमान देवोंके मनकी स्तुति द्वारा पूजा करनेकी इच्छा करता है, वह यज्ञ-शून्यको हराता है।

न यजमान रिष्यसि न सुन्वान न देवयो ।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वनो भुवत् ॥१६॥
नकिष्टं कर्मणा नशन्न योषन्न योषति ।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वनो भुवत् ॥१७॥
असदत्र सुवीर्यमुत त्यदाश्वश्व्यम् ।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वनो भुवत् ॥१८॥

---

१६ यजमान, तुम विनष्ट नहीं होगे। सोमाभिषवकारी, तुम विनष्ट नहीं होगे। देवाभिलाषी, तुम नहीं विनष्ट होगे। जो यजमान देवोंके मनकी ही पूजा करना चाहता है, वह यज्ञ-रहितोंको हराता है।

१७ जो यजमान देवोंके मनका यज्ञ करनेकी इच्छा करता है, उसे कर्म द्वारा कोई व्याप्त नहीं कर सकता। वह कभी भी अपने स्थानसे अलग नहीं होता। वह पुत्रादिसे भी पृथक् नहीं होता। जो यजमान देवोंके मनको, स्तुतिके द्वारा, पूजा करनेकी इच्छा करता है, वह यज्ञ-शून्योंको अभिभूत करता है।

१८ जो यजमान देवोंके मनका यज्ञ करनेकी इच्छा करता है, उसे सुन्दर वीर्यवाला पुत्र उत्पन्न होता है, अश्वोंसे युक्त धन भी उसे होता है। जो यजमान देवोंके मनको, स्तुतिके द्वारा, पूजा करनेकी इच्छा करता है, वह यज्ञ-शून्योंको अभिभूत करता है।

द्वितीय अध्याय समाप्त

तृतीय अध्याय

३२ सूक्त

इन्द्र देवता। कण्वगोत्रीय मेधातिथि ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र कृतान्यृजीषिणः कण्वा इन्द्रस्य गाथया। मदे सोमस्य वोचत ॥१॥

यः सृविन्दमनर्शनिं पिप्रुं दासमहीशुवम्। वधीदुग्रो रिणन्नपः ॥२॥

न्यर्बुदस्य विष्टपं वर्ष्माणं बृहतस्तिर। कृषे तदिन्द्र पौंस्यम् ॥३॥

प्रति श्रुताय वो धृषत्तूर्णाशं न गिरेरधि। हुवे सुशिप्रमूतये ॥४॥

स गोरश्वस्य व्रजं मन्दानः सोम्येभ्यः। पुरं न शूर दर्षसि ॥५॥

यदि मे रारणः सुत उक्थे वा दधसे चनः। आरादुप स्वधा गहि ॥६॥

वयं घा ते अपि ष्मसि स्तोतार इन्द्र गिर्वणः। त्वन्नो जिन्व सोमपाः॥७॥

उत नः पितुमा भर संरराणो अविक्षितम्। मघवन् भूरि ते वसु ॥८॥

---

१ कण्वगण, इन्द्रकी गाथाके द्वारा इन्द्रके मत्त होनेपर तुम लोग "ऋजीष" सोमके कर्मोंको कीर्तित करो।

२ जल प्रेरित करते हुए उग्र इन्द्रने सृविन्द, अनर्शनि, पिप्रु, दास और अहीशुवका बध किया था।

३ इन्द्र, मेघके आवरक स्थानको छेदो। इस वीर-कर्मका सम्पादन करो।

४ स्तोताओ, जैसे मेघसे जलकी प्रार्थना की जाती है, वैसे ही शत्रुओंके दमन-कर्त्ता और शोभन जबड़ेवाले इन्द्रसे तुम्हारी स्तुति सुनने और तुम्हारी रक्षाकी प्रार्थना करता हूँ।

५ शूर, तुम प्रसन्न होकर शत्रु-नगरोंके समान सोमके योग्य स्तोताओंके लिये गौ और अश्वके रहनेके द्वार खोलते हो।

६ इन्द्र, यदि मेरे अभिषुत सोम अथवा स्तोत्रमें अनुरक्त हो और यदि मुझे अन्न देते हो। तो दूर देशसे, अन्नके साथ, पास आओ।

७ स्तुति-योग्य इन्द्र, हम तुम्हारे स्तोता हैं। हे सोमपायी, तुम हमें प्रसन्न करते हो।

८ धनी इन्द्र, प्रसन्न होकर तुम हमें अक्षय्य अन्न दो। तुम्हारे पास प्रचुर धन है।

उत नो गोमतस्कृधि हिरण्यवतो अश्विनः। इळाभिः सं रभेमहि ॥९॥
बृबदुक्थं हवामहे सृप्रकरस्नमूतये, साधु कृण्वन्तमवसे ॥१०॥
यः संस्थे चिच्छतक्रतुरादीं कृणोति वृत्रहा। जरितृभ्यः पुरूवसुः ॥११॥
स नः शक्रश्चिदा शकद्दानवाँ अन्तराभरः। इन्द्रो विश्वाभिरूतिभिः ॥१२॥
यो रायोऽवनिर्महान्त्सुपारः सुन्वतः सखा। तमिन्द्रमभि गायत ॥१३॥
आयन्तारं महि स्थिरं पृतनासु श्रवोजितम्। भूरेरीशानमोजसा ॥१४॥
नकिरस्य शचीनां नियन्ता सूनृतानाम्। नकिर्वक्ता न दादिति ॥१५॥
न नूनं ब्रह्मणामृणं प्राशूनामस्ति सुन्वताम्। न सोमो अप्रता पपे ॥१६॥
पन्य इदुप गायत पन्य उक्थानि शंसत। ब्रह्मा कृणोत पन्य इत् ॥१७॥
पन्य आ दर्दिरच्छता सहस्रा वाज्यवृतः। इन्द्रो यो यज्वनो वृधः ॥१८॥

९ तुम हमें गौ, अश्व और हिरण्यसे सम्पन्न करो। हम अन्न-युक्त हों।

१० संसारकी रक्षाके लिये इन्द्र भुजाओंको पसारते और पालनके लिये साधु कार्य करते हैं। वे महान् उक्थवाले हैं। हम इन्द्रको बुलाते हैं।

११ जो इन्द्र संग्राममें बहुकर्मा होते और अनन्तर शत्रु-वध करते है, जो इन्द्र वृत्र-हन्ता हैं और स्तोताओंके लिये बहुधनवान् होते हैं—

१२ वे ही शक्र (शक्र=इन्द्र) हमें शक्तिशाली करें। इन्द्र दानी हैं और वे सारी रक्षाओंके द्वारा हमारे छिद्रोंको परिपूर्ण करते हैं।

१३ जो इन्द्र धनके रक्षक, सर्वोत्तम, शोभन पारवाले और सोमाभिषव-कारीके सखा हैं, उन्हीं इन्द्रके लिये स्तुति करो।

१४ इन्द्र आनेवाले, युद्ध-क्षेत्रमें अविचल, अन्नके विजेता और बल-पूर्वक प्रचुर धनके ईश्वर हैं।

१५ इन्द्रके शोभन कार्योंका कोई नियामक नहीं है। इन्द्र दाता नहीं हैं, यह कोई नहीं कहता।

१६ सोमाभिषवकारी और सोमपायी ब्राह्मणों (स्तोताओं)के पास ऋण (देव-ऋण) नहीं है। प्रचुर धनवाला ही सोमपान कर सकता है।

१७ स्तुत्य इन्द्रके लिये गान करो। स्तुत्य इन्द्रके लिये स्तोत्र उच्चारण करो। स्तुत्य इन्द्रके लिये स्तोत्रोंको बनाओ।

१८ स्तुत्य और बली इन्द्रने सैकड़ो और हजारो शत्रुओंको विदारित किया है। वह शत्रुओंके द्वारा अनाच्छादित हैं। वे यज्ञकारीके वर्द्धक हैं।

वि षू चर स्वधा अनु कृष्टीनामन्वाहुवः । इन्द्र पिब सुतानाम् ॥१९॥
पिब स्वधैनवानामुत यस्तुग्र्ये सचा । उतायमिन्द्र यस्तव ॥२०॥
अतीहि मन्युषाविणं सुषुवांसमुपारणे । इमं रातं सुतं पिब ॥२१॥
इहि तिस्रः परावत इहि पञ्च जनाँ अति । धेना इन्द्रावचाकशत् ॥२२॥
सूर्यो रश्मिं यथा सृजा त्वा यच्छन्तु मे गिरः ।
निम्नमापो न सध्र्यक् ॥२३॥
अध्वर्यवा तु हि षिञ्च सोमं वीराय शिप्रिणे । भरा सुतस्य पीतये ॥२४॥
य उद्नः फलिगं भिनन्न्यक्सिन्धूँरवासृजत् । यो गोषु पक्वं धारयत् ॥२५॥
अहन्वृत्रमृचीषम और्णवाभमहीशुवम् । हिमेनाविध्यदर्बुदम् ॥२६॥
प्र व उग्राय निष्टुरेऽषाळ्हाय प्रसक्षिणे । देवत्तं ब्रह्म गायत ॥२७॥

---

१९ आह्वानके योग्य इन्द्र, मनुष्योंके हव्यके निकट विचरण करो और अभिषुत सोम पियो ।

२० इन्द्र, गायके बदलेमें खरीदे गये और जलसे प्रस्तुत किये गये अपने इस सोमका पान करो ।

२१ इन्द्र, क्रोधके साथ अभिषव करनेवाले और अनुपयुक्त स्थानमें अभिषव करनेवालेको लाँघकर चले आओ । हमारे द्वारा प्रदत्त इस अभिषुत सोमका पान करो ।

२२ इन्द्र, हमारी स्तुतिको तुमने देखा अथवा समझा है । तुम दूर देशसे हमारे आगे, पीछे और पार्श्वमें आओ । तुम गन्धर्वों, पितरों, देवों, असुरों और राक्षसों (पञ्चजनों) को लाँघकर पधारो ।

२३ सूर्य जैसे किरणोंको देते हैं, वैसे ही धन दो । जैसे नीची भूमिमें जल मिलता है, वैसे ही मेरी स्तुतियाँ तुम्हारे साथ मिलें ।

२४ अध्वर्युओ, सुन्दर शिरस्त्राण अथवा जबड़ेवाले और वीर इन्द्रके लिये शीघ्र सोमका सेचन करो । सोमपानके लिये इन्द्रको बुलाओ ।

२५ जिन्होंने जलके लिये मेघको भिन्न किया है, जिन्होंने अन्तरीक्षसे जलको नीचे भेजा है और जिन्होंने गौओंको पक्व दुग्ध प्रदान किया है, वही इन्द्र हैं ।

२६ दीप्ति-समान इन्द्रने वृत्र, और्णनाभ और अहीशुवका बध किया है । इन्द्रने तुषार-जलसे मेघको फोड़ा है ।

२७ उद्गाताओ, उग्र, निष्ठुर, अभिभवकर्त्ता और बल-पूर्वक हरण-कर्त्ता इन्द्रके लिये देवोंकी प्रसन्नतासे प्राप्त स्तोत्र गाओ ।

यो विश्वान्यभि व्रता सोमस्य मदे अन्धसः । इन्द्रो देवेषु चेतति ॥२८॥
इह त्या सधमाद्या हरी हिरण्यकेश्या । वोळ्हामभि प्रयो हितम् ॥२९॥
अर्वाञ्चं त्वा पुरुष्टुतः प्रियमेधस्तुता हरी । सोमपेयाय वक्षतः ॥३०॥

३२ सूक्त

इन्द्र देवता । कण्वगोत्रीय प्रियमेध ऋषि । बृहती, गायत्री और अनुष्टुप् छन्द ।

वयं घ त्वा सुतावन्त आपो न वृक्तबर्हिषः ।
पवित्रस्य प्रस्रवणेषु वृत्रहन् परि स्तोतार आसते ॥१॥
स्वरन्ति त्वा सुते नरो वसो निरेक उक्थिनः ।
कदा सुतं तृषाण ओक आ गम इन्द्र स्वब्दीव वंसगः ॥२॥
कण्वेभिर्धृष्णवा धृषद्वाजं दर्षि सहस्रिणम् ।
पिशङ्गरूपं मघवन् विचर्षणे मक्षू गोमन्तमीमहे ॥३॥

---

२८ सोमकी मत्तता उत्पन्न होनेपर इन्द्र देवोंके पास सारे कर्मोंको सूचित करते हैं ।

२९ वे एक साथ ही प्रमत्त और हिरण्य केशवाले दोनों हरि नामके अश्व इस यज्ञमें सोम-रूप अन्नके अभिमुख इन्द्रको ले आवें ।

३० अनेकोंके द्वारा स्तुत इन्द्र, प्रियमेध द्वारा स्तुत अश्वद्वय, सोमपानके लिये, तुम्हें हमारे अभि-मुख ले आवें ।

---

१ वृत्रघ्न इन्द्र, हमलोगोंने सोमाभिषव किया है । जलके समान हम तुम्हारे सामने जाते हैं । पवित्र सोमके प्रस्तुत होनेपर कुश-विस्तार किये हुए स्तोता लोग तुम्हारी उपासना करते हैं ।

२ निवास-दाता इन्द्र, अभिषुत सोमके निर्गत होनेपर उक्थवाले नेतालोग स्तोत्र करते हैं । सोमके पिपासु होकर, बैलके समान शब्द करते हुए, यज्ञ-स्थानमें इन्द्र कब आवेंगे ?

३ शत्रुओंके दमनकारी इन्द्र, कण्वोंके लिये सहस्र-सङ्ख्यक अन्न दो । धनी और विशेष द्रष्टा इन्द्र, हम धृष्ट, पिशंग (पीले) रूपवाले और गोमान् अन्नकी याचना करते हैं ।

पाहि गायान्धसो मद इन्द्राय मेध्यातिथे ।
यः संमिश्लो हर्योर्यः सुते सचा वज्री रथो हिरण्ययः ॥४॥
यः सुषव्यः सुदक्षिण इनो यः सुक्रतुर्गृणे ।
य आकरः सहस्रा यः शतामघ इन्द्रो यः पूर्भिदारितः ॥५॥
यो धृषितो योऽवृतो यो अस्ति श्मश्रुषु श्रितः ।
विभूतद्युम्नश्च्यवनः पुरुष्टुतः क्रत्वा गौरिव शाकिनः ॥६॥
क ईं वेद सुते सचा पिबन्तं कद्वयो दधे ।
अयं यः पुरो विभिनत्त्योजसा मन्दानः शिप्र्यन्धसः ॥७॥
दाना मृगो न वारणः पुरुत्रा चरथं दधे ।
नकिष्ट्वा नियमदा सुते गमो महाँश्चरस्योजसा ॥८॥
य उग्रः सन्ननिष्टृतः स्थिरो रणाय संस्कृतः ।
यदि स्तोतुर्मघवा शृणवद्धवं नेन्द्रो योषत्या गमत् ॥९॥

---

४ मेध्यातिथि, सोमपान करो। जो हरि नामक अश्वोंको रथमें जोतते हैं, जो सोममें सहायक हैं, जो वज्रधर हैं और जिनका रथ सोनेका है, सोम-जन्य मत्तता होनेपर उन्हीं इन्द्रकी स्तुति करो।

५ जिनका बायाँ हाथ सुन्दर है, दाहिना हाथ सुन्दर है, जो ईश्वर, सुन्दर-प्रज्ञ और सहस्रोंके कर्त्ता हैं, जो बहुधनशाली हैं, जो पुरीको तोड़ते हैं और जो यज्ञमें स्थिर हैं, उन्हीं इन्द्रकी स्तुति करो।

६ जो शत्रुओंके धर्षक हैं, जो शत्रुओंके द्वारा अनाच्छादित हैं, युद्धमें जिनके आश्रित हुआ जाता है, जो प्रचुर धनवाले हैं, जो सोमपायी हैं और जो बहुतोंके द्वारा स्तुत हैं वह इन्द्र सत्कर्ममें समर्थ यजमानके लिये दुग्धदायिनी गौके समान हैं। उन इन्द्रकी स्तुति करो।

७ जो इन्द्र सुन्दर जबड़ेवाले हैं, जो सोम द्वारा परितृप्त हैं और जो बलसे पुरीका भेदन करते हैं, सोमाभिषव होनेपर ऋत्विकोंके साथ सोमपायी उन इन्द्रको कौन जानता है? कौन उनके लिये अन्न धारण करता है?

८ जैसे शत्रुओंकी खोज करनेवाला हाथी मद-जल धारण करता है, वैसे ही इन्द्र यज्ञमें चरणशील मत्तता धारण करते हैं। इन्द्र, तुम्हें कोई नियमित नहीं कर सकता। सोमाभिषवकी ओर पधारो। महान् तुम बलके द्वारा सर्वत्र विचरण करते हो।

९ इन्द्रके उग्र होनेपर शत्रुलोग उन्हें आच्छादित नहीं कर सकते। वे अचल हैं। वे युद्धके लिये शस्त्रों द्वारा अलङ्कृत हैं। धनी इन्द्र यदि स्तोताका आह्वान सुनते हैं, तब अन्यत्र नहीं जाते, केवल वहीं आते हैं।

सत्यमित्था वृषेदसि वृषजूतिर्नोऽवृतः ।
वृषाह्युग्र शृण्विषे परावति वृषो अर्वावति श्रुतः ॥१०॥
वृषणस्ते अभीशवो वृषा कशा हिरण्ययी ।
वृषा रथो मघवन् वृषणा हरी वृषा त्वं शतक्रतो ॥११॥
वृषा सोता सुनोतु ते वृषन्नृजोपिन्नाभर ।
वृषा दधन्वे वृषणं नदीष्वा तुभ्यं स्थातर्हरीणाम् ॥१२॥
एन्द्र याहि पीतये मधु शविष्ठ सोम्यम् ।
नायमच्छा मघवा शृणवद्गिरो ब्रह्मोक्था च सुक्रतुः ॥१३॥
वहन्तु त्वा रथेष्ठामा हरयो रथयुजः ।
तिरश्चिदर्यं सवनानि वृत्रहन्नन्येषां या शतक्रतो ॥१४॥
अस्माकमद्यान्तमं स्तोमं धिष्व महामह ।
अस्माकं ते सवना सन्तु शन्तमा मदाय द्युक्ष सोमपाः ॥१५॥

---

१० उग्र इन्द्र तुम सचमुच ऐसे हो मनोरथ-वर्षक हो। तुम काम-वर्षकोंके द्वारा आकृष्ट हो और हमारे शत्रुओंके द्वारा अनाच्छादित हो। तुम अभीष्ट-वर्षक कहकर विख्यात हो। तुम दूर और समीपमें अभीष्टवर्षी कहकर विख्यात हो।

११ धनी इन्द्र, तुम्हारी घोड़ेकी रस्सियाँ (लगाम) अभीष्टवर्षक हैं; तुम्हारी, सोनेकी कशा (चाबुक) अभीष्टवर्षक है, तुम्हारे दोनों अश्व अभीष्ट-दाता हैं और हे शतक्रतु इन्द्र, तुम अभीष्ट-वर्षक हो।

१२ काम-वर्षक इन्द्र, तुम्हारा सोमाभिषव करनेवाला अभीष्ट-वर्षक होकर सोमका अभिषव करे। सरल-गामी इन्द्र, धन दो। इन्द्र, अश्वोंके अभिमुख स्थित और वर्षक तुम्हारे लिये जलमें सोमका अभिषव करनेवालेने सोमको धारण किया था।

१३ श्रेष्ठबली इन्द्र, सोम-रूप मधुके पानके लिये आओ। बिना आये धनी और सुकृती इन्द्र स्तुति, स्तोत्र और उक्थ नहीं सुनते।

१४ वृत्रघ्न और बहुप्रज्ञ इन्द्र, तुम रथस्थ और ईश्वर हो। रथमें जोते हुए अश्व दूसरोंके यज्ञोंका तिरस्कार करके तुम्हें हमारे यज्ञमें ले आवें।

१५ महामह (महापूज्य) इन्द्र, आज हमारे समीपके सोमको धारण करो। दीप्त सोमके पीनेवाले इन्द्र, तुम्हारी मत्तताके लिये हमारे यज्ञ कल्याणवाही हों।

नहि षस्तव नो मम शास्त्रे अन्यस्य रण्यति ।
यो अस्मान्वीर आनयत् ॥१६॥
इन्द्रश्चिद्धा तदब्रवीत् स्त्रिया अशास्यं मनः ।
उतो अह क्रतुं रघुम् ॥१७॥
सती चिद्धा मदच्युता मिथुना वहतो रथम् ।
एवेद्धूर्वृष्ण उत्तरा ॥१८॥
अधः पश्यस्व मोपरि सन्तरां पादकौ हर ।
मा ते कशप्लकौ दृशन्स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ ॥१९॥

३४ सूक्त

इन्द्र देवता । कण्वगोत्रीय नीपातिथि ऋषि । अनुष्टुप् और गायत्री छन्द ।

एन्द्र याहि हरिभिरुप कण्वस्य सुष्टुतिम् ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१॥

१६ वीर इन्द्र हमारे नेता हैं । वे मेरे, तुम्हारे और दूसरेके शासनमें प्रसन्न नहीं होते ।

१७ (मेध्यातिथिके धनदाता प्रायोगि जिस समय पुरुषसे स्त्री हुए थे, उस समय) इन्द्रने ही कहा था कि, "स्त्रीके मनका शासन करना असम्भव है । स्त्रीकी बुद्धि छोटी होती है ।"

१८ सोमके अभिमुख जानेवाले दोनों अश्व इन्द्रके रथको ले जाते हैं । इसी प्रकार अभीष्ट-वर्षक इन्द्रका रथ अश्वोंकी दृष्टिसे श्रेष्ठ है ।

१९ (इन्द्रने कहा) प्रायोगि, तुम नीचे देखा करो, ऊपर नहीं । (स्त्रियोंका यही धर्म है ।) पैरोंको संकुचित रखो (मिलाये रखो) । (इस प्रकार कपड़े पहनो कि,) तुम्हारे कश (ओष्ठ-प्रान्त) और प्लक (नारी-कटिका निम्न भाग) को कोई देखने नहीं पावे । यह सब इसलिये करो कि, तुम स्तोता होकर भी स्त्री हुए हो ।

१ इन्द्र, अश्वोंके साथ तुम कण्वोंकी सुन्दर स्तुतिके अभिमुख आओ । इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं । दीप्त हविवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ ।

आ त्वा ग्रावा वदन्निह सोमी घोषेण यच्छतु ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥२॥
अत्रा वि नेमिरेषामुरां न धूनुते वृकः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥३॥
आ त्वा कण्वा इहावसे हवन्ते वाजसातये ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥४॥
दधामि ते सुतानां वृष्णे न पूर्वपाय्यम् ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥५॥
स्मत्पुरन्धिर्न आ गहि विश्वतोधीर्न ऊतये ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥६॥
आ नो याहि महेमते सहस्रोते शतामघ ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥७॥

---

२ इस यज्ञमें सोमवान् अभिषव-प्रस्तर शब्द करते हुए, ध्वनिके साथ, तुम्हें दान करे। इन्द्र, द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

३ इस यज्ञमें अभिषव-पाषाण सोमलताको उसी प्रकार कँपाता है, जिस प्रकार तेंदुआ भेड़को कँपाता है। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

४ रक्षण और अन्न-प्राप्तिके लिये कण्वलोग इन्द्रको इस यज्ञमें बुलाते हैं। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

५ कामवर्षक वायुको जैसे प्रथम सोमरस प्रदान किया जाता है, वैसे ही मैं तुम्हें अभिषुत सोम प्रदान करूँगा। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

६ स्वर्गके कुटुम्बी इन्द्र, तुम हमारे पास आओ। सारे संसारके रक्षक इन्द्र, हमारे रक्षणके लिये आओ। इन्द्र, द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

७ महामति, सहस्र रक्षावाले और प्रचुर धनी इन्द्र, हमारे पास आओ। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

आ त्वा होता मनुर्हितो देवत्रा वक्षदीड्यः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥८॥

आ त्वा मदच्युता हरी श्येनं पक्षेव वक्षतः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥९॥

आ याह्यर्य आ परि स्वाहा सोमस्य पीतये ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१०॥

आ नो याह्युपश्रुत्युक्थेषु रणया इह ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥११॥

सरूपैरा सु नो गहि संभृतैः संभृताश्वः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१२॥

आयाहि पर्वतेभ्यः समुद्रस्याधि विष्टपः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१३॥

८ इन्द्र, देवोंमें स्तुत्य और मनुष्योंके द्वारा गृहमें स्थापित होता अग्नि तुम्हें वहन करें। इन्द्र, द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

९ जैसे श्येन पक्षी (बाज) अपने दोनों पंखोंको ढोता है, वैसे ही मदस्रावी अश्वद्वय तुम्हें वहन करें। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

१० स्वामी इन्द्र, तुम चारों तरफसे आओ। तुम्हें पीनेके लिये मैं सोमका स्वाहा करता हूँ। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

११ उक्थोंका पाठ होनेपर तुम इस यज्ञमें हमारे समीप आओ और हमें प्रसन्न करो। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

१२ पुष्ट अश्ववाले इन्द्र, पुष्ट और समान रूपवाले अश्वोंके साथ आओ। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

१३ तुम पर्वतसे आओ। तुम अन्तरीक्ष-प्रदेशसे आओ। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

आ नो गव्यान्यश्व्या सहस्रा शूर दर्दृहि ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१४॥
आ नः सहस्रशो भरायुतानि शतानि च ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१५॥
आ यदिन्द्रश्च दद्वहे सहस्रं वसुरोचिषः । ओजिष्ठमश्व्यं पशुम् ॥१६॥
य ऋज्रा वातरंहसोऽरुषासो रघुष्यदः । भ्राजन्ते सूर्याइव ॥१७॥
पारावतस्य रातिषु द्रवच्चक्रेष्वाशुषु । तिष्ठं वनस्य मध्य आ ॥१८॥
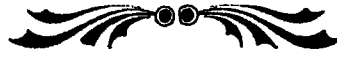
३५ सूक्त

अश्विद्वय देवता । कण्वगोत्रीय श्यावाश्व ऋषि । ज्योति, पङ्क्ति और महाबृहती छन्द ।

अग्निनेन्द्रेण वरुणेन विष्णुनादित्यैरुद्रैर्वसुभिः सचाभुवा ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं पिबतमश्विना ॥१॥

---

१४ शूर इन्द्र, तुम हमें सहस्र गायें और अश्व दो । इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं । दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ ।

१५ इन्द्र, हमें सहस्र, दश सहस्र और सौ अभीष्ट दान करो । इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं । दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ ।

१६ हम धनके द्वारा सुशोभित होते हैं । सहस्र सङ्ख्यक हम और नेता इन्द्र बलवान् अश्व-पशु ग्रहण करते हैं ।

१७ सरलगामी, वायुके समान वेगवाले, रुचिकर और अल्प-आर्द्र अश्व सूर्यके समान कान्ति पाते हैं ।

१८ जिस समय पारावतने रथचक्रोंको गतिशील बनानेवाले इन अश्वोंको प्रदान किया था, उस समय मैं वनके मध्यमें था ।

---

१ अश्विद्वय, तुम लोग अग्नि, इन्द्र, वरुण, विष्णु, आदित्यगण, रुद्रगण और वसुगणके साथ और उषा तथा सूर्यके साथ मिलकर सोम पान करो ।

विश्वाभिर्धीभिर्भुवनेन वाजिना दिवा पृथिव्याद्रिभिः सचाभुवा ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं पिबतमश्विना ॥२॥
विश्वैर्देवैस्त्रिभिरेकादशैरिहाद्भिर्मरुद्भिर्भृगुभिः सचाभुवा ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं पिबतमश्विना ॥३॥
जुषेथां यज्ञं बोधतं हवस्य मे विश्वेह देवौ सवनाव गच्छतम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चेषं नो वोह्लमश्विना ॥४॥
स्तोमं जुषेथां युवशेव कन्यनां विश्वेह देवौ सवनाव गच्छतम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चेषं नो वोह्लमश्विना ॥५॥
गिरो जुषेथामध्वरं जुषेथां विश्वेह देवौ सवनाव गच्छतम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चेषं नो वोह्लमश्विना ॥६॥
हारिद्रवेव पतथो वनेदुप सोमं सुतं महिषेवाव गच्छथः ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना ॥७॥

---

२ बली अश्विद्वय; तुमलोग सारी प्रजा, प्राणि-समुदाय, द्युलोक, पृथिवी और पर्वतके साथ तथा उषा और सूर्यके साथ मिलकर सोमका पान करो ।

३ अश्विद्वय, तुमलोग इस यज्ञमें भक्षणकर्ता तेंतीस देवों, मरुतों और भृगुओंके साथ तथा उषा और सूर्यसे मिलकर सोम पान करो ।

४ देव अश्विद्वय, तुमलोग यज्ञका सेवन करो। मेरे आह्वानको समझो। इस यज्ञमें सारे सवनोंको प्राप्त करो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर हमारा अन्न ग्रहण करो ।

५ देव अश्विद्वय, जैसे युवक कन्याओंकी बुलाहटको सेवित करते हैं, वैसे ही तुमलोग इस यज्ञमें स्तोमकी सेवा करो। इस यज्ञमें स्तोमकी सेवा करो। इस यज्ञमें सारे सवनोंको प्राप्त करो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर हमारा सोम-रूप अन्न ग्रहण करो।

६ देव अश्विद्वय, हमारी स्तुतिका सेवन करो। यज्ञकी सेवा करो। इस यज्ञमें सारे सवनोंको प्राप्त करो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर हमारा अन्न ग्रहण करो।

७ जैसे दो हारिद्रव पक्षी (शुक अथवा हारीत ?) जलपर गिरते हैं, वैसे ही तुमलोग अभिषुत सोमकी ओर गिरो। दो भैंसोंके समान सोमको जाओ। उषा और सूर्यके साथ मिलकर त्रिमार्गोंमें जाओ।

हंसाविव पतथो अध्वगाविव सोमं सुतं महिषेवावगच्छथः ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना ॥८॥
श्येनाविव पतथो हव्यदातये सोमं सुतं महिषेवावगच्छथः ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना ॥९॥
पिबतं च तृष्णुतं चा च गच्छतं प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चोर्जं नो धत्तमश्विना ॥१०॥
जयतं च प्र स्तुतं च प्र चावतं प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चोर्जं नो धत्तमश्विना ॥११॥
हतं च शत्रून्यततं च मित्रिणः प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चोर्जं नो धत्तमश्विना ॥१२॥
मित्रावरुणवन्ता उत धर्मवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चादित्यैर्यातमश्विना ॥१३॥

---

८ अश्विद्वय, दो हंसों और दो पथिकोंके समान अभिषुत सोमके अभिमुख आओ और दो भैंसों-के समान सोमको समझो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर त्रिमार्गमें गमन करो।

९ अश्विद्वय तुमलोग दो श्येन पक्षियोंके समान अभिषुत सोमकी ओर आओ और दो भैंसोंके समान सोमको जानो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर त्रिमार्गमें गमन करो।

१० अश्विद्वय, सोमपान करो। तृप्त होओ। आओ सन्तान दो। धन दो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर हमें बल दो।

११ अश्विद्वय, तुम शत्रुओंको जीतो स्तोताओंकी प्रशंसा और रक्षा करो। सन्तान दो। धन दो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर हमें बल दो।

१२ अश्विद्वय, तुमलोग शत्रुका विनाश करो। मैत्रीसे युक्त होकर गमन करो। सन्तान दो। धन दो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर हमें बल दो।

१३ अश्विद्वय, तुमलोग मित्र, वरुण, धर्म और मरुतोंसे युक्त हो। तुमलोग स्तोताके आह्वानकी ओर जाओ और उषा, सूर्य और आदित्योंके सहित जाओ।

अङ्गिरस्वन्ता उत विष्णुवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चादित्यैर्यातमश्विना ॥१४॥

ऋभुमन्ता वृषणा वाजवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चादित्यैर्यातमश्विना ॥१५॥

ब्रह्म जिन्वतमुत जिन्वतं धियो हतं रक्षांसि सेधतममीवाः ।
सजोषासा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना ॥१६॥

क्षत्रं जिन्वतमुत जिन्वतं नॄन् हतं रक्षांसि सेधतममीवाः ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना ॥१७॥

धेनूर्जिन्वतमुत जिन्वतं विशो हतं रक्षांसि सेधतममीवाः ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना ॥१८॥

अत्रेरिव शृणुतं पूर्व्यस्तुतिं श्यावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चाश्विना तिरो अह्न्यम् ॥१९॥

---

१४ अश्विद्वय, तुमलोग अङ्गिरा, विष्णु और मरुतोंके साथ स्तोताके आह्वानकी ओर जाओ तथा उषा, सूर्य और आदित्योंके साथ जाओ।

१५ अश्विद्वय, तुमलोग ऋभु, काम-वर्षक वाज और मरुतोंके साथ स्तोताके आह्वानकी ओर जाओ और उषा, सूर्य तथा आदित्योंके साथ गमन करो।

१६ अश्विद्वय, तुमलोग स्तोत्र और कर्मको जीतो। राक्षसोंका शासन और बध करो। उषा और सूर्यके साथ अभिषव-कर्त्ताके सोमका पान करो।

१७ अश्विद्वय, तुमलोग क्षत्र (बल) और योद्धाओंको जीतो। राक्षसोंका शासन और बध करो। उषा और सूर्यके साथ सोमाभिषवकारीका सोमपान करो।

१८ अश्विद्वय, धेनु और विशों (वैश्यों) को जीतो, राक्षसोंका शासन और बध करो। उषा और सूर्यके साथ सोमके अभिषव-कर्त्ताका सोमपान करो।

१९ अश्विद्वय, तुमलोग शत्रुओंका गर्व खर्व करनेवाले हो, तुमलोग जैसे अत्रिकी स्तुतिको सुनते थे, वैसे ही श्यावाश्वकी (मेरी) मुख्य स्तुति सुनो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर प्रातःकालके यज्ञमें सोमपान करो।

सर्गाँ इव सृजतं सुष्टुतीरुप श्यावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चाश्विना तिरो अह्न्यम् ॥२०॥
रश्मींरिव यच्छतमध्वराँ उप श्यावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चाश्विना तिरो अह्न्यम् ॥२१॥
अर्वाग्रथं नि यच्छतं पिबतं सोम्यं मधु ।
आयातमश्विना गतमवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे ॥२२॥
नमोवाके प्रस्थिते अध्वरे नरा विवक्षणस्य पीतये ।
आयातमश्विना गतमवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे ॥२३॥
स्वाहाकृतस्य तृम्पतं सुतस्य देवावन्धसः ।
आयातमश्विना गतमवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे ॥२४॥

---

२० अश्विद्वय, श्यावाश्वकी सुन्दर स्तुतिको, आभरणके समान, ग्रहण करो । उषा और सूर्यके साथ मिलकर प्रातःकलके यज्ञमें सोमपान करो ।

२१ अश्विद्वय; अश्व-रज्जु (लगाम)के समान श्यावाश्वके यज्ञाभिमुख गमन करो । उषा और सूर्यके साथ मिलकर प्रातःकालके यज्ञमें सोमपान करो ।

२२ अश्विद्वय, अपना रथ हमारे सामने ले आओ, सोमरूप मधुका पान करो, यज्ञमें आगमन करो और सोमके अभिमुख आगमन करो । रक्षाभिलाषी होकर मैं तुम्हें बुलाता हूँ । हव्यदाताको (मुझे) रत्न दान करो ।

२३ अश्विद्वय, तुमलोग नेता हो । मुझ हवनशीलके इस किये जाते हुए नमोवाक्य-युक्त यज्ञमें सोमपानके लिये आओ । सोमके अभिमुख आओ । मैं रक्षाभिलाषी होकर तुम्हें बुलाता हूँ । हव्यदाताको रत्न दान करो ।

२४ देव अश्विद्वय, तुमलोग अभिषुत और स्वाहाकृत सोमसे तृप्ति प्राप्त करो । यज्ञमें आओ । सोमके अभिमुख आओ । मैं रक्षाभिलाषी होकर तुम्हें बुलाता हूँ । तुम हव्यदाताको रत्न दो ।

३६ सूक्त

इन्द्र देवता । श्यावाश्व ऋषि । शक्वरी और महापङ्क्ति छन्द ।

अवितासि सुन्वतो वृक्तबर्हिषः पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यन्ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः
समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥१॥
प्राव: स्तोतारं मघवन्नव त्वां पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यन्ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः
समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥२॥
ऊर्जा देवाँ अवस्योजसा त्वां पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यन्ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः
समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥३॥
जनिता दिवो जनिता पृथिव्याः पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यन्ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः
समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥४॥

---

१ बहुकर्मा (शतक्रतु) इन्द्र, सोमका अभिषव करनेवाले और कुश-विस्तार करनेवाले यजमानके तुम रक्षक हो । सत्पति (सज्जनोंके स्वामी) और मरुतोंसे युक्त इन्द्र, देवोंने तुम्हारे लिये जो सोमका भाग निश्चित किया है, सारी शत्रु-सेना और प्रचुर वेगको अभिभूत करके और जल-मध्यमें जेता होकर मत्त होनेके लिये उस सोम-भागको पियो ।

२ धनी इन्द्र, स्तोताकी रक्षा करो । सोम-पानके द्वारा अपनी भी रक्षा करो । सत्पति और मरुतोंसे युक्त बहुकर्मा इन्द्र, देवोंने तुम्हारे लिये जो सोम-भाग कल्पित किया है, सारी सेना और बहु-वेगको अभिभूत करके और जल-मध्यमें विजेता होकर मत्त होनेके लिये उस सोम-भागको पियो ।

३ अन्न द्वारा देवोंकी रक्षा करते हो और अपनेको बलके द्वारा बचाते हो । सत्पति और मरुतोंसे युक्त बहुकर्मा इन्द्र, देवोंने तुम्हारे लिये जो सोमभाग निश्चित किया है, सारी सेना और बहु-वेगको दबाकर और जलके बीच विजयी होकर मत्त होनेके लिये उस सोम-भागको पियो ।

४ तुम द्युलोक और पृथिवीके जनक हो । सत्पति और मरुतोंसे युक्त बहुकर्मा इन्द्र, तुम्हारे लिये देवोंने जो सोम-भाग निश्चित किया है, सारी शत्रु-सेना और बहुवेगको अभिभूत करके तथा जल-मध्यमें विजयी होकर मत्त होनेके लिये उसी सोम-भागको पियो ।

जनिताश्वानां जनिता गवामसिम पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यन्ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः
समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥५॥
अत्रीणां स्तोममद्रिवो महस्कृधि पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यन्ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः
समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥६॥
श्यावाश्वस्य सुन्वतस्तथा शृणु यथा शृणोरत्रेः कर्माणि कृण्वतः ।
प्र त्रसदस्युमाविथ त्वमेक इन्नृषाह्य इन्द्र ब्रह्माणि वर्धयन् ॥७॥

३७ सूक्त

इन्द्र देवता। श्यावाश्व ऋषि। अतिजगती और महापङ्क्ति छन्द।

प्रेदं ब्रह्म वृत्रतूर्येष्वाविथ प्र सुन्वतः शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥१॥

---

५ तुम अश्वों और गौओंके जनक (पिता) हो । सत्पति और मरुतोंसे युक्त बहुकर्मा इन्द्र, तुम्हारे लिये देवोंने जो सोम-भाग परिकल्पित किया है, सारी शत्रु-सेना और बहुवेगको अभिभूत करके तथा जल-मध्यमें विजयी होकर मत्त होनेके लिये उसी सोम-भागको पियो।

६ पर्वतवाले इन्द्र, अत्रिलोगों (हमलोगों) का साम पूजित करो। सत्पति और मरुतोंसे युक्त बहुकर्मा इन्द्र देवोंने तुम्हारे लिये जो सोमभाग परिकल्पित किया है, समस्त शत्रु-सेना और बहुवेगको दबाकर तथा जलमध्यमें विजेता बनकर मत्त होनेके लिये उसी सोम-भागको पियो।

७ इन्द्र, तुमने जैसे यज्ञ-कर्त्ता अत्रि ऋषिकी स्तुति सुनी थी, वैसे ही सोमाभिषव-कर्त्ता श्यावाश्वकी (मेरी) स्तुति सुनो। अकेले ही तुमने युद्धमें स्तोत्रोंको वर्द्धित करते हुए त्रसदस्युको बचाया था।

---

१ यज्ञपति इन्द्र, युद्धमें तुम सारे रक्षणोंसे इस स्तोत्र (ब्राह्मण) की रक्षा करो। सोमाभिषवकी भी रक्षा करना। अनिन्द्य वज्री और वृत्रघ्न इन्द्र, माध्यन्दिन सवनका सोम पियो।

सेहान उग्र पृतना अभि द्रुहः शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥२॥
एकराळस्य भुवनस्य राजसि शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥३॥
सस्थावाना यवयसि त्वमेक इच्छचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥४॥
क्षेमस्य च प्रयुजश्च त्वमीशिषे शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥५॥
क्षत्राय त्वमवसि न त्वमाविथ शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥६॥
श्यावाश्वस्य रेभतस्तथा शृणु यथाशृणोरत्रेः कर्माणि कृण्वतः ।
प्र त्रसदस्युमाविथ त्वमेक इन्नृषाह्य इन्द्र क्षत्राणि वर्धयन् ॥७॥

---

२ कर्मपति (शचीपति) और उग्र इन्द्र, शत्रु-सेनाओंको अभिभूत करके सारी रक्षाओंके द्वारा स्तोत्र (ब्राह्मण) की रक्षा करो। अनिन्दनीय (प्रशंसनीय) वज्रधर और वृत्रहन्ता इन्द्र, माध्यन्दिन सवनका सोम पियो।

३ यज्ञपति इन्द्र, तुम इस भुवनके एकमात्र राजा होकर और सारी रक्षाओंसे युक्त होकर शोभा पाते हो। अनिन्दनीय वज्रधर और वृत्रघ्न इन्द्र, माध्यन्दिन सवनका सोम पियो।

४ यज्ञपति इन्द्र, समान रूपसे अवस्थित इस लोक-द्वयको तुम्हीं अलग करते हो। अनिन्दनीय, वज्रधर और वृत्रघ्न इन्द्र, माध्यन्दिन सवनका सोम पियो।

५ यज्ञपति (शचीपति) इन्द्र, सारी रक्षाओंसे युक्त होकर समस्त संसार, मङ्गल और प्रयोगके ईश्वर हो। अनिन्दनीय, वज्रधर और वृत्रघ्न इन्द्र, माध्यन्दिन सवनका सोम पियो।

६ यज्ञपति इन्द्र, सारी रक्षाओंसे युक्त होकर संसारके बलके लिये होते हो—आश्रितोंकी रक्षा करते हो। तुम्हारी रक्षा कोई नहीं करता। अनिन्दनीय, वज्री और वृत्रघ्न, माध्यन्दिन सवनका सोम पियो।

७ इन्द्र, तुमने जैसे यज्ञ-कर्त्ता अत्रिकी स्तुति सुनी थी, वैसे ही (मुझ) स्तोता श्यावाश्वकी स्तुति सुनो। तुमने अकेले ही युद्धमें स्तोत्रोंको वर्द्धित करके त्रसदस्युकी रक्षा की थी।

३८ सूक्त

इन्द्र और अग्नि देवता। श्यावाश्व ऋषि। गायत्री छन्द।

यज्ञस्य हि स्थ ऋत्विजा सस्नी वाजेषु कर्मसु।
इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥१॥

तोशासा रथयावाना वृत्रहणापराजिता।
इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥२॥

इदं वां मदिरमध्वधुक्षन्नद्रिभिर्नरः। इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥३॥

जुषेथां यज्ञमिष्टये सुतं सोमं सधस्तुती।
इन्द्राग्नी आ गतं नरा ॥४॥

इमा जुषेथां सवना येभिर्हव्यान्यूहथुः।
इन्द्राग्नी आ गतं नरा ॥५॥

इमां गायत्रवर्तनिं जुषेथां सुष्टुतिं मम।
इन्द्राग्नी आ गतं नरा ॥६॥

---

१ इन्द्र और अग्नि, तुमलोग शुद्ध और ऋत्विक् हो। युद्धों और कर्मोंमें मुझ यजमान-की स्तुतिको जानो।

२ इन्द्र और अग्नि, तुमलोग शत्रु-हिंसक, रथके द्वारा गमनशील, वृत्रघ्न और अपराजित हो। तुम मुझे जानो।

३ इन्द्र और अग्नि, यज्ञके नेताओंने तुम्हारे लिये, पाषाणके द्वारा, इस मदकर मधु (सोम) का दोहन किया है। तुम मुझे जानो।

४ एक साथ ही स्तुत्य और नेता इन्द्र तथा अग्नि, यज्ञकी सेवा करो। यज्ञके लिये अभि-षुत सोमकी ओर आओ।

५ इन्द्र और अग्नि, तुमलोग नेता हो। तुमलोग जिसके द्वारा हव्यका वहन करते हो, उसी सवनकी सेवा करो। यहाँ आओ।

६ नेता इन्द्र और अग्नि, तुमलोग इस गायत्र-मार्गको सुन्दर स्तुतिकी सेवा करो। आओ।

प्रातर्यावभिरा गतं देवेभिर्जेन्यावसू ।
इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥७॥
श्यावाश्वस्य सुन्वतोऽत्रीणां शृणुतं हवम् ।
इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥८॥
एवा वामह्न ऊतये यथाहुवन्त मेधिराः ।
इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥९॥
आहं सरस्वतीवतोरिन्द्राग्न्योरवो वृणे ।
याभ्यां गायत्रमृच्यते ॥१०॥

३९ सूक्त

अग्नि देवता । कण्वगोत्रीय नाभाक ऋषि । महापङ्क्ति छन्द ।

अग्निमस्तोष्यृग्मियमग्निमीळा यजध्यै ।
अग्निर्देवाँ अनक्तु न उभे हि विदथे
कविरन्तश्चरति दूत्यं नभन्तामन्यके समे ॥१॥

७ धन-विजयी इन्द्र और अग्नि, तुमलोग प्रातःकाल देवोंके साथ सोमपानके लिये आओ।

८ इन्द्र और अग्नि, सोमपानके लिये तुमलोग सोमका अभिषव करनेवाले श्यावाश्वके ऋत्विकोंका आह्वान सुनो।

९ इन्द्र और अग्नि, जैसे प्राज्ञोंने तुम्हें बुलाया है, वैसे ही मैं, रक्षा और सोमपानके लिये, तुम्हें बुलाता हूँ।

१० जिनके लिये साम-गान किया जाता है, मैं उन्हीं स्तुतिवाले इन्द्र और अग्निके पास रक्षणकी प्रार्थना करता हूँ।

---

१ ऋक् मन्त्रोंके योग्य अग्निकी मैं स्तुति करता हूँ। यज्ञके लिये स्तुति द्वारा मैं अग्निकी स्तुति करता हूँ। हमारे यज्ञमें अग्नि हव्य द्वारा देवोंकी पूजा करें। कवि अग्नि स्वर्ग और पृथिवीके बीच दूत-कर्म करते हैं। अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

न्यग्ने नव्यसा वचस्तनूषु शंसमेषाम् ।
न्यराती रराव्णां विश्वा अर्यो अरातीरितो
युच्छन्त्वामुरो नभन्तामन्यके समे ॥२॥
अग्ने मन्मानि तुभ्यं कं घृतं न जुह्व आसनि ।
स देवेषु प्र चिकिद्धि त्वं ह्यसि पूर्व्यः शिवो
दूतो विवस्वतो नभन्तामन्यके समे ॥३॥
तत्तदग्निर्वयो दधे यथायथा कृपण्यति ।
ऊर्जाहुतिर्वसूनां शं च योश्च मयो दधे
विश्वस्यै देवहूत्यै नभन्तामन्यके समे ॥४॥
स चिकेत सहीयसाग्निश्चित्रेण कर्मणा ।
स होता शश्वतीनां दक्षिणाभिरभीवृत
इनोति च प्रतीव्यं नभन्तामन्यके समे ॥५॥

---

२ अग्नि, नवीन स्तोत्रोंके द्वारा हमारे अङ्गोंमें जो शत्रुओंकी (भावी) हिंसा है, उसे जलाना। हव्यदाताओंके शत्रुओंको जलाओ। अभिगमनवाले सारे मूढ़ शत्रु यहाँसे चले जायँ। अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

३ अग्नि, तुम्हारे मुँहमें सुखकर घृतके समान स्तोत्रका होम करता हूँ। देवोंमें तुम हमारी स्तुतिको जानो। तुम प्राचीन हो, सुखकर हो और देवोंके दूत हो। अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

४ स्तोता लोग जो-जो अन्न माँगते हैं, अग्नि वही-वही अन्न प्रदान करते हैं। अग्नि अन्नके द्वारा बुलाये जाकर यजमानोंको शान्तिकर और विषयोपभोग-जन्य सुख देते हैं। वह सारे देवोंके आह्वानोंमें रहते हैं। अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

५ वह अग्नि अभिभवकारक नाना प्रकारके कर्मोंके द्वारा जाने जाते हैं। वह सारे देवोंके होता हैं। वह पशुओंसे घेरे गये हैं। वह शत्रुओंके सम्मुख गमन करते हैं। अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

अग्निर्जाता देवानामग्निर्वेद मर्तानामपीच्यम् ।
अग्निः स द्रविणोदा अग्निर्द्वारा व्यूर्णुते
स्वाहुतो नवीयसा नभन्तामन्यके समे ॥६॥
अग्निर्देवेषु संवसुः स विक्षु यज्ञियास्वा ।
स मुदा काव्या पुरु विश्वं भूमेव पुष्यति
देवो देवेषु यज्ञियो नभन्तामन्यके समे ॥७॥
यो अग्निः सप्तमानुषः श्रितो विश्वेषु सिन्धुषु ।
तमागन्म त्रिपस्त्यं मन्धातुर्दस्युहन्तममग्निं
यज्ञेषु पूर्व्यं नभन्तामन्यके समे ॥८॥
अग्निस्त्रीणि त्रिधातून्या क्षेति विदथा कविः ।
स त्रीँरेकादशाँ इह यक्षच्च पिप्रयच्च नो विप्रो दूतः
परिष्कृतो नभन्तामन्यके समे ॥९॥

६ अग्नि देवोंका जन्म जानते हैं। अग्नि मनुष्योंके गोपनीयको जानते हैं। अग्नि धनद हैं। वह अभिनव हव्य द्वारा भली भाँति आहुत होकर धनका द्वार उद्घाटित करते हैं। अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

७ अग्नि देवोंमें रहते हैं। वह यज्ञाई प्रजागणमें रहते हैं जैसे भूमि सारे संसारका पोषण करती है, वैसे ही वह सहर्ष सारे कार्योंका पोषण करते हैं। अग्नि देवोंमें यज्ञ-योग्य हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

८ अग्नि सात मनुष्यों (सिन्धु आदि सात नदियोंके तट-वासियों) वाले और सारी नदियोंमें आश्रित हैं। वह तीन स्थानों (द्यौ, पृथिवी और अन्तरीक्ष) वाले हैं। अग्निने यौवनाश्वके पुत्र मान्धाताके लिये सर्वापेक्षा अधिक दस्यु-हनन किया है। वह यज्ञोंमें मुख्य हैं। अग्नि समस्त शत्रुओंको मारें।

९ कवि (क्रान्तदर्शी) अग्नि द्यौ आदि तीन प्रकारके तीन स्थानोंमें रहते हैं। अग्नि दूत, प्राज्ञ और अलङ्कृत होकर इस यज्ञमें तेंतीस देवोंका यज्ञ करें। हमारी अभिलाषा पूर्ण करें। अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

त्वं नो अग्न आयुषु त्वं देवेषु पूर्व्य वस्व एक इरज्यसि ।
त्वामापः परिस्रुतः परि यन्ति स्वसेतवो नभन्तामन्यके समे ॥१०॥
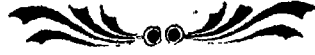
४० सूक्त

इन्द्र और अग्नि देवता। नाभाक ऋषि। शक्वरी, त्रिष्टुप् और महापङ्क्ति छन्द।

इन्द्राग्नी युवं सुनः सहन्ता दासथो रयिम् ।
येन दृह्ळा समत्स्वा वीळु चित् साहिषीमह्यग्निर्वनेव
वात इन्नभन्तामन्यके समे ॥१॥
नहि वां वव्रयामहेऽथेन्द्रमिद्यजामहे शविष्ठं नृणां नरम् ।
स नः कदा चिदर्वता गमदा वाजसातये
गमदा मेधसातये नभन्तामन्यके समे ॥२॥
ता हि मध्यं भराणामिन्द्राग्नी अधिक्षितः ।
ता उ कवित्वना कवी पृच्छ्यमाना सखीयते
सन्धीतमश्नुतं नरा नभन्तामन्यके समे ॥३॥

---

१० प्रवीन अग्नि, तुम अकेले ही हो; परन्तु मनुष्यों और देवोंके ईश्वर हो। तुम सेतु-स्वरूप हो। तुम्हारी चारों ओर जल जाता है। अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

१ इन्द्र और अग्नि, शत्रुओंको हराते हुए, हमें धन दो। जैसे अग्नि वायु द्वारा वनको अभिभूत करते हैं, वैसे ही हम भी उस धनकी सहायतासे दृढ़ शत्रु-बलको दबावेंगे। इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

२ इन्द्र और अग्नि, हम तुमसे धनकी याचना नहीं करते। सबसे बली और नेताओंके नेता इन्द्रका ही यज्ञ करते हैं। इन्द्र अभी अश्वपर चढ़कर अन्न-प्राप्तिके लिये आते हैं और कभी यज्ञ-प्राप्तिके लिये आते हैं। इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

३ वे प्रसिद्ध इन्द्र और अग्नि युद्धके मध्यस्थलमें निवास करते हैं। नेताओ, कवि (क्रान्तकर्मी) द्वारा पूछे जानेपर तुम्हीं लोग मित्रता चाहनेवाले यजमानके कृत कर्मको व्याप्त करते हो। इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुओंको हिंसा करें।

अभ्यर्च नभाकवदिन्द्राग्नीयजसा गिरा ।
ययोर्विश्वमिदं जगदियं द्यौः पृथिवी मह्यु-
पस्थे विभृतो वसु नभन्तामन्यके समे ॥४॥

प्र ब्रह्माणि नभाकवदिन्द्राग्निभ्यामिरज्यत ।
या सप्तबुध्नमर्णवं जिह्मबारमपोर्णुत
इन्द्र ईशान ओजसा नभन्तामन्यके समे ॥५॥

अपि वृश्च पुराणवद्व्रततेरिव गुष्पितमोजो दासस्य दम्भय ।
वयं तदस्य संभृतं वस्विन्द्रेण वि भजेमहि नभन्तामन्यके समे ॥६॥

यदिन्द्राग्नी जना इमे विह्वयन्ते तना गिरा ।
अस्माकेभिर्नृभिर्वयं सासह्याम पृतन्यतो
वनुयाम वनुष्यतो नभन्तामन्यके समे ॥७॥

---

४ यज्ञ और स्तुतिके द्वारा नाभाकवाले इन्द्र और अग्निकी पूजा करो। इन्द्र और अग्निमें यह सारा संसार विद्यमान है। इन्हीं इन्द्र और अग्निकी गोदमें महती मही और द्युलोक धनको धारण करते हैं। इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

५ नाभाकके समान ऋषि इन्द्र और अग्निके लिये स्तुति प्रेरित करते हैं। ये इन्द्र और अग्नि सप्त मूलवाले हैं और अवरुद्ध द्वारवाले समुद्रको तेजके द्वारा आच्छादित करते हैं। इन्द्र बल द्वारा ईश्वर हैं। इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

६ इन्द्र, प्राचीन मनुष्य जैसे लताकी शाखाको काटता है, वैसे ही तुम सारे शत्रुओंको काटो। दास नामक शत्रुके बलका विनाश करो। हम इन्द्रकी कृपासे दासके उस संगृहीत धनका विभाग कर लेंगे। इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

७ ये जो सब मनुष्य धन और स्तुतिके द्वारा इन्द्र और अग्निको बुलाते हैं, उनमें ससैन्य हम अपने मनुष्योंकी सहायतासे शत्रुओंको हरावेंगे और स्तुतिवाले शत्रुको ग्रहण करेंगे।

या नु श्वेताववो दिव उच्चरात उप द्युभिः ।
इन्द्राग्न्योरनु व्रतमुहाना यन्ति सिन्धवो
यान्त्सीं बन्धादमुञ्चतां नभन्तामन्यके समे ॥८॥
पूर्वीष्ट इन्द्रोपमातयः पूर्वीरुत प्रशस्तयः सूनो हिन्वस्य हरिवः
वस्वो वीरस्यापृचो या नु साधन्तनो धियो नभन्तामन्यके समे ॥९॥
तं शिशीता सुवृक्तिभिस्त्वेषं सत्वानमृग्मियम् ।
उतो नु चिद्य ओजसा शुष्णस्याण्डानि भेदति
जेषत् स्वर्वतीरपो नभन्तामन्यके समे ॥१०॥
तं शिशीता स्वध्वरं सत्यं सत्वानमृत्वियम् ।
उतो नु चिद्य ओहत आण्डा शुष्णस्य
भेदत्यजैः स्वर्वतीरपो नभन्तामन्यके समे ॥११॥

८ जो श्वेतवर्ण (सात्त्विक) इन्द्र और अग्नि नीचेसे दीप्ति द्वारा द्यौके ऊपर जाते हैं, उन्हींके लिये हविका वहन करते हुए यजमान कर्मानुष्ठान करते हैं। उन्होंने ही प्रख्यात सिन्धु आदि नदियोंको बन्धनसे मुक्त किया था। इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुको मारें।

९ हरि नामक अश्ववाले, वज्रधर और प्रेरक इन्द्र, तुम प्रीतिकर, वीर और धनी हो। तुम्हारे लिये उपमानकी अनेक वस्तुएं हैं। तुम्हारी अनेक प्राचीन प्रशस्तियाँ भी हैं। ये प्रशस्तियाँ हमारी बुद्धिको सिद्ध करें। इन्द्र और अग्नि शत्रुओंको मारें।

१० स्तोताओ, दीप्त, धन-पात्र और ऋग्-मन्त्रके योग्य इन्द्रको उत्तम स्तुति द्वारा संस्कृत करो। जो इन्द्र शुष्ण नामक असुरके अपत्योंको मारते हैं, वही स्वर्गीय जलको जीतते हैं। इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

११ स्ताताओ, सुन्दर यज्ञवाले, अविनाशी, धनी और याग-योग्य इन्द्रको स्तुति द्वारा संस्कृत करो। जो इन्द्र यज्ञके अभिमुख जाते हैं, वह शुष्णके अण्डों (अपत्यों) को मारते और स्वर्गीय जलको जीतते हैं। इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

एवेन्द्राग्निभ्यां पितृवन्नवीयो मन्धातृवदङ्गिरस्वदवाचि ।
त्रिधातुना शर्मणा पातमस्मान्वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥१२॥

४१ सूक्त

वरुण देवता । नाभाक ऋषि । महापङ्क्ति छन्द ।

अस्मा ऊ षु प्रभूतये वरुणाय मरुद्भ्योऽर्चा विदुष्टरेभ्यः ।
यो धीता मानुषाणां पश्वो गा इव रक्षति नभन्तामन्यके समे ॥१॥
तमू षु समना गिरा पितॄणां च मन्मभिः ।
नाभाकस्य प्रशस्तिभिर्यः सिन्धूनामुपोदये
सप्तस्वसा स मध्यमो नभन्तामन्यके समे ॥२॥
स क्षपः परिषस्वजे न्युस्रो मायया दधे स विश्वं परिदर्शतः ।
तस्य वेनीरनु व्रतमुषस्तिस्रो अवर्धयन्नभन्तामन्यके समे ॥३॥

१२ मैंने पिता मान्धाता और अङ्गिराके समान इन्द्र और अग्निके लिये नवीन स्तुतियोंका पाठ किया है। वे तीन पर्वों (काठों) वाले गृह द्वारा हमारा पालन करें। हम धनाधिपति होंगे।

---

१ स्तोता, प्रचुर धनकी प्राप्तिके लिये, इन वरुण और अतिशय विद्वान् मरुतोंके निमित्त स्तुति करो। कर्म द्वारा वरुण मनुष्योंके पशुओं, गौओंके समान रक्षा करते हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

२ योग्य स्तुतिके द्वारा मैं उन वरुणकी स्तुति करता हूँ। स्तोत्रोंके द्वारा पितरोंकी स्तुति करता हूं। नाभाक ऋषिकी स्तुतियोंके द्वारा स्तुति करता हूँ। वह नदियोंके पास उद्गत होते हैं। उनकी सात बहनें हैं। वह मध्यम हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

३ वरुण रात्रियोंका आलिङ्गन करते हैं। वह दर्शनीय हैं। वह ऊपर गमन करते हुए माया वा कर्मके द्वारा सारे संसारको धारण करते हैं। उनके कर्माभिलाषी मनुष्य तीन उषाओं (प्रातः, माध्यन्दिन और सायम्) को वर्द्धित करते हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

यः ककुभो निधारयः पृथिव्यामधि दर्शतः ।
स माता पूर्व्यं पदं तद्वरुणस्य सप्त्यं स हि
गोपाइवेर्यो नभन्तामन्यके समे ॥४॥
यो धर्ता भुवनानां य उस्राणामपीच्या वेद नामानि गुह्या ।
स कविः काव्या पुरु रूपं द्यौरिव पुष्यति नभन्तामन्यके समे ॥५॥
यस्मिन्विश्वानि काव्या चक्रे नाभिरिव श्रिता ।
त्रितं जूती सपर्यत व्रजे गावो न संयुजे युजे
अश्वाँ अयुक्षत नभन्तामन्यके समे ॥६॥
य आस्वत्क आशये विश्वा जातान्येषाम् ।
परि धामानि मर्मृशद्वरुणस्य पुरो गये
विश्वे देवा अनु व्रतं नभन्तामन्यके समे ॥७॥
स समुद्रो अपीच्यस्तुरो द्यामिव रोहति नि यदासु यजुर्दधे ।
स माया अर्चिना पदास्तृणान्नाकमारुहन्नभन्तामन्यके समे ॥८॥

४ जो वरुण पृथिवीके ऊपर दिशाओंको धारण करते हैं, वह दर्शनीय निर्माता हैं। प्राचीन स्थान (स्वर्ग) और जहाँ हम विचरण करते हैं—इन दोनों स्थानोंके स्वामी वरुण हैं। वही ईश्वर होकर हमारी गौओंकी रक्षा करते हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

५ जो वरुण भुवनोंके धारक और रश्मियोंके अन्तर्हित तथा गुहामें निहित नामोंको जानते हैं, वही वरुण प्राज्ञ होकर अनेक कवि-कर्मों (काव्यों) का, द्युलोकके समान, पोषण करते हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

६ सारे कवि-कर्म, चक्रकी नाभिके समान, जिन वरुणका आश्रय किये हुए हैं, उन्हीं स्थान-त्रयशाले वरुणकी शीघ्र परिचर्या करो। जैसे गोशालामें गौ जाती है, वैसे ही हमें हरानेके लिये, युद्धके निमित्त, शत्रुलोग अश्वको जोतते हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

७ वरुण सारी दिशाओंको व्याप्त किये हुए हैं। वह शत्रुओंके चारो ओर फैले हुए नगरोंका विनाश करते हैं। वरुणके रथके सम्मुख सारे देवता कर्मानुष्ठान करते हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

८ समुद्र-स्वरूप वह वरुण अन्तर्हित होकर शीघ्र ही आदित्यके समान स्वर्गारोहण करते और चारो दिशाओंमें प्रजाको दान देते हैं। वह द्युतिमान् पदके द्वारा मायाका विनाश करते और स्वर्ग-गमन करते हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

यस्य श्वेता विचक्षणा तिस्रो भूमीरधिक्षितः ।
त्रिरुत्तराणि पप्रतुर्वरुणस्य ध्रुवं सदः स
सप्तानामिरज्यति नभन्तामन्यकेसमे ॥९॥
यः श्वेताँ अधिनिर्णिजश्चक्रे कृष्णाँ अनु व्रता ।
स धाम पूर्व्यं ममे यः स्कम्भेन वि रोदसी
अजो न द्यामधारयन्नभन्तामन्यके समे ॥१०॥

४२ सूक्त

१-३ के वरुण और शेष के अश्विद्वय देवता । अर्चनाना वा नाभाक ऋषि । त्रिष्टुप् और अनुष्टुप् छन्द ।

अस्तभ्नाद्द्यामसुरो विश्ववेदा अमिमीत वरिमाणं पृथिव्याः ।
आसीदद्विश्वा भुवनानि सम्राड्विश्वेत्तानि वरुणस्य व्रतानि ॥१॥
एवा वन्दस्व वरुणं बृहन्तं नमस्या धीरममृतस्य गोपाम् ।
स नः शर्म त्रिवरूथं वि यंसत् पातं नो द्यावापृथिवी उपस्थे ॥२॥

९ अन्तरीक्षमें रहनेवाले जिन वरुणके शुभ्रवर्ण और विलक्षण तीन तेज तीनों भुवनोंमें प्रसिद्ध हैं, उन वरुणका स्थान अविचल है। वह सातों सिन्धु आदि नदियोंके अधीश्वर हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

१० जो दिनमें अपनी किरणोंको शुभ्रवर्ण और रातमें कृष्णवर्ण करते हैं, उन्हीं वरुणने अपने कर्मके लिये द्युलोक और अन्तरीक्ष लोकका निर्माण किया है। जैसे आदित्य द्युलोकको धारण करते हैं, वैसे ही वरुणने अन्तरीक्षके द्वारा द्यावापृथिवीको धारण किया है। वह सारे शत्रुओंको मारें।

१ सर्वज्ञ और बली (असुर) वरुणने द्युलोकको रोक रखा था, पृथिवीके विस्तारका परिमाण किया था और सारे भुवनोंके सम्राट् होकर आसीन हुए थे। वरुणके ऐसे अनेक कार्य हैं।

२ स्तोता, इस प्रकार बृहत् वरुणकी वन्दना करो, अमृतके रक्षण और प्राज्ञ (धीर) वरुणको नमस्कार करो। वरुण हमें तीन तल्लोंका मकान दें। हम उनकी गोदमें वर्त्तमान हैं। द्यावापृथिवी हमारी रक्षा करें।

इमां धियं शिक्षमाणस्य देव क्रतुं दक्षं वरुण सं शिशाधि ।
ययाति विश्वा दुरिता तरेम सुतर्माणमधि नावं रुहेम ॥३॥

आ वां ग्रावाणो अश्विना धीभिर्विप्रा अचुच्यवुः ।
नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे ॥४॥

यथा वामत्रिरश्विना गीर्भिर्विप्रो अजोहवीत् ।
नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे ॥५॥

एवा वामह्व ऊतये यथाहुवन्त मेधिराः ।
नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे ॥६॥

६ अनुवाक । ४३ सूक्त

अग्नि देवता । अङ्गिराके पुत्र विरूप ऋषि । गायत्री छन्द ।

इमे विप्रस्य वेधसोऽग्नेरस्तृतयज्वनः । गिरः स्तोमास ईरते ॥१॥

३ दिव्य वरुण, कर्मानुष्ठान करनेवाले मेरे कर्म, प्रज्ञान और बलको तीक्ष्ण करो। जिसके द्वारा हम सारे दुष्कर्मोंको लाँघ सकें, ऐसी सरलतासे पार जानेवाली नौकापर हम चढ़ेंगे।

४ सत्यस्वरूप अश्विद्वय, प्राज्ञ ऋत्विक् (विप्र) और अभिषवके समस्त पाषाण, सोमपानके लिये, अपने-अपने कार्यों द्वारा तुम्हारे अभिमुख जाते हैं। अश्विद्वय सारे शत्रुओंकी हिंसा करें।

५ नासत्य अश्विद्वय, प्राज्ञ अत्रिने जैसे स्तुति द्वारा, सोमपानके लिये, तुम्हें बुलाया था, वैसे ही मैं बुलाता हूँ। अश्विद्वय सारे शत्रुओंको मारें।

६ नासत्यद्वय, मेधावियोंने जैसे सोमपानके लिये तुम्हें बुलाया था, वैसे ही मैं भी, रक्षाके लिये, बुलाता हूँ। अश्विद्वय सारे शत्रुओंको मारें।

१ हमारे ये स्तोता अग्निके लिये स्तुति करते हैं। अग्नि मेधावी और विधाता हैं। वह कभी यजमानकी हिंसा नहीं करते।

अस्मै ते प्रतिहर्यते जातवेदो विचर्षणे । अग्ने जनामि सुष्टुतिम् ॥२॥
आरोकाइव घेदह तिग्मा अग्ने तव त्विषः । दद्भिर्वनानि बप्सति ॥३॥
हरयो धूमकेतवो वातजूता उप द्यवि । यतन्ते वृथगग्नयः ॥४॥
एते त्ये वृथगग्नय इद्धासः समदृक्षत । उषसामिव केतवः ॥५॥
कृष्णा रजांसि पत्सुतः प्रयाणे जातवेदसः । अग्निर्यद्रोधति क्षमि ॥६॥
धासिं कृण्वान ओषधीर्बप्सदग्निर्न वायति । पुनर्यन्तरुणीरपि ॥७॥
जिह्वाभिरह नन्नमदर्चिषा जञ्जणाभवन । अग्निर्वनेषु रोचते ॥८॥
अप्स्वग्ने सधिष्टव सौषधीरनु रुध्यसे । गर्भे सञ्जायसे पुनः ॥९॥
उदग्ने तव तद्घृतादर्ची रोचत आहुतम् । निंसानं जुह्वो मुखे ॥१०॥
उक्षान्नाय वशान्नाय सोमपृष्ठाय वेधसे । स्तोमैर्विधेमाग्नये ॥११॥

२ जातप्रज्ञ और विशेष दर्शक अग्नि तुम दान देनेवाले हो; इसलिये तुम्हारे लिये सुन्दर स्तुति उत्पन्न करता हूँ।

३ अग्नि तुम्हारी तीखी ज्वालाएँ आरोचमान पशुओंके समान दाँतोंके द्वारा अरण्यका भक्षण करती हैं।

४ हरणशील, वायु-प्रेरित और धूम-ध्वज सारे अग्नि अन्तरीक्षमें अलग अलग जाते हैं।

५ पृथक्-पृथक् समिद्ध ये अग्नि, होताओंके द्वारा उषाके केतुके समान दिखाई दे रहे हैं।

६ जातप्रज्ञ अग्नि जिस समय पृथिवीपर शुष्क काष्ठका आश्रय करते हैं, उस समय अग्निके प्रस्थान-कालमें धूलियाँ काली हो जाती हैं।

७ अग्नि ओषधियोंको अन्न समझकर और उन्हें खाकर शान्त नहीं होते वह तरुण ओषधियोंके प्रति जाते हैं।

८ अग्नि जिह्वाके द्वारा वनस्पतियोंको नवाकर अथवा भक्षण कर तेजके द्वारा प्रज्वलित होकर वनमें शोभा पाते हैं।

९ अग्नि जलके बीचमें तुम्हारे प्रवेशका स्थान है। तुम ओषधियोंको रोकते और पुनः उन्हींके गर्भमें जन्म ग्रहण करते हो।

१० अग्नि, घृत द्वारा आहूत जुहू (स्रुक्) के मुँहको तुम चाटते हो। तुम्हारी शिखा शोभा पाती है।

११ जो हव्य भक्षणीय है और जिनका अन्न अभिलषणीय है, उन्हीं सोम-पृष्ठ और अभीष्ट-विधाता अग्निकी हम, स्तोत्र द्वारा, परिचर्या करते हैं।

उत त्वा नमसा वयं होतर्वरेण्यक्रतो। अग्ने समिद्भिरीमहे ॥१२॥

उत त्वा भृगुवच्छुचे मनुष्वदग्न आहुत। अङ्गिरस्वद्धवामहे ॥१३॥

त्वं ह्यग्ने अग्निना विप्रो विप्रेण सन्त्सता।

सखा सख्या समिध्यसे ॥१४॥

स त्वं विप्राय दाशुषे रयिं देहि सहस्रिणम्। अग्ने वीरवतीमिषम् ॥१५॥

अग्ने भ्रातः सहस्कृत रोहिदश्व शुचिव्रत। इमं स्तोमं जुषस्व मे ॥१६॥

उत त्वाग्ने मम स्तुतो वाश्राय प्रतिहर्यते। गोष्ठं गाव इवाशत ॥१७॥

तुभ्यं ता अङ्गिरस्तम विश्वाः सुक्षितयः पृथक्।

अग्ने कामाय येमिरे ॥१८॥

अग्निं धीभिर्मनीषिणो मेधिरासो विपश्चितः। अद्मसद्याय हिन्विरे ॥१९॥

तं त्वामज्मेषु वाजिनं तन्वाना अग्ने अध्वरम्। वह्निं होतारमीळते ॥२०॥

---

१२ देवोंको बुलानेवाले और वरणीय-प्रज्ञ अग्नि, नमस्कार और समिधा प्रदान करके तुमसे हम याचना करते हैं।

१३ शुद्ध और आहूत अग्नि, हम तुम्हें भृगु और मनुके समान बुलाते हैं।

१४ अग्नि, तुम विप्र, साधु और सखा हो। तुम विप्र, साधु और सखा अग्निकी सहायतासे दीप्त होते हो।

१५ अग्नि, तुम हव्यदाता मेधावीको सहस्र-सङ्ख्यक धन और वीर पुत्रादिसे युक्त अन्न दो।

१६ यजमानोंके भ्रातृ-भूत, बलके द्वारा उत्पादित, रोहित नामक अश्ववाले और शुद्ध-कर्मा अग्नि, हमारे स्तोत्रका आश्रय करो।

१७ अग्नि, हमारी स्तुतियाँ तुम्हारे पास जा रही हैं। इसी प्रकार गायें उत्सुक होकर और बोलते हुए, बछड़ोंके लिये, गोशालामें जाती हैं।

१८ अग्नि, तुम अङ्गिरा लोगोंमें श्रेष्ठ हो। सारी प्रजाए अभिलषित सिद्धिके लिये तुम्हारे प्रति आसक्त होती हैं।

१९ मनीषी, प्राज्ञ और मेधावी लोग, अन्न-प्राप्तिके लिये, अग्निको प्रसन्न करते हैं।

२० अग्नि, तुम बलवान्, हव्यवाहक, होता और प्रसिद्ध हो। जो स्तोता गृहमें यज्ञका विस्तार करते हैं, वे तुम्हारा स्तव करते हैं।

पुरुत्रा हि सदृङ्ङसि विशो विश्वा अनु प्रभुः । समत्सु त्वा हवामहे ॥२१॥

तमीळिष्व य आहुतोऽग्निर्विभ्राजते घृतैः । इमं नः शृणवद्धवम् ॥२२॥

तं त्वा वयं हवामहे शृण्वन्तं जातवेदसम् । अग्ने घ्नन्तमप द्विषः ॥२३॥

विशां राजानमद्भुतमध्यक्षं धर्मणामिमम् । अग्निमीळे स उ श्रवत् ॥२४॥

अग्निं विश्वायुवेपसं मर्यं न वाजिनं हितम् । सप्तिं न वाजयामसि ॥२५॥

घ्नन्मृध्राण्यप द्विषो दहन्रक्षांसि विश्वहा ।

अग्ने तिग्मेन दीदिहि ॥२६॥

यं त्वा जनास इन्धते मनुष्वदङ्गिरस्तम ।

अग्ने स बोधि मे वचः ॥२७॥

यदग्ने दिविजा अस्यप्सुजा वा सहस्कृत । तं त्वा गीर्भिर्हवामहे ॥२८॥

तुभ्यं घेत्ते जना इमे विश्वाः सुक्षितयः पृथक् । धासिं हिन्वन्त्यत्तवे ॥२९॥

---

२१ अग्नि, तुम प्रभु और सर्वत्र सभी प्रजाके लिये समदर्शी हो; इसलिये हम तुम्हें संग्राममें बुलाते हैं।

२२ घृत द्वारा आहुत होकर अग्नि शोभा पाते हैं। जो अग्नि हमारे आह्वानको सुनते हैं, उनकी स्तुति करो।

२३ अग्नि, तुम जातधन, शत्रु-हिंसक और हमारा आह्वान सुननेवाले हो; इसलिये तुम्हें हम बुलाते हैं।

२४ मनुष्योंके ईश्वर, महान् और कर्मोंके अध्यक्ष इन अग्निकी मैं स्तुति करता हूँ। वह सुनें।

२५ सर्वत्रगामी बलवाले, शक्तिशाली और मनुष्योंके समान हितकर अग्निकी, अश्वके समान, हम बली करेंगे।

२६ अग्नि, तुम हिंसकोंको मारकर और राक्षसोंको जलाकर तीक्ष्ण तेजके द्वारा दीप्त होओ।

२७ अङ्गिरा लोगोंमें श्रेष्ठ अग्नि, मनुष्य लोग तुम्हें मनुके समान दीप्त करते हैं। तुम मनुष्यके समान मेरी स्तुतिको समझो।

२८ अग्नि, तुम स्वर्गीय और अन्तरीक्षजन्य बलके द्वारा सहसा उत्पन्न किये गये हो। तुम्हें स्तुति द्वारा हम बुलाते हैं।

२९ ये सब लोग और सारी प्रजा तुम्हें खानेके लिये पृथक्-पृथक् हवीरूप अन्न देते हैं।

ते घेदग्ने स्वाध्योऽहा विश्वा नृचक्षसः । तरन्तः स्याम दुर्गहा ॥३०॥
अग्निं मन्द्रं पुरुप्रियं शीरं पावकशोचिषम् । हृद्भिर्मन्द्रेभिरीमहे ॥३१॥
स त्वमग्ने विभावसुः सृजन्त्सूर्यो न रश्मिभिः ।
शर्धन्तमांसि जिघ्नसे ॥३२॥
तत्ते सहस्व ईमहे दात्रं यन्नोपदस्यति । त्वदग्ने वार्यं वसु ॥३३॥

४४ सूक्त

अग्नि देवता । अङ्गिराके पुत्र विरूप ऋषि । गायत्री छन्द ।

समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् । आस्मिन् हव्या जुहोतन ॥१॥
अग्ने स्तोमं जुषस्व मे वर्धस्वानेन मन्मना । प्रति सूक्तानि हर्य नः ॥२॥
अग्निं दूतं पुरोदधे हव्यवाहमुप ब्रुवे । देवाँ आ सादयादिह ॥३॥

३० अग्नि, तुम्हारे ही लिये हम सुकृती और सर्वदर्शी होकर सारे दुर्गम स्थानोंको पार करेंगे।

३१ अग्नि प्रसन्न, बहु-प्रिय, यज्ञमें शयनशील और पवित्र दीप्तिसे युक्त हैं। हम हर्षयुक्त स्तोत्रसे उनसे याचना करते हैं।

३२ अग्नि, तुम दीप्ति-रोचन हो। सूर्यके समान तुम किरणोंके द्वारा बलका विस्तार करते हुए अन्धकारका विनाश करते हो।

३३ बली अग्नि, तुम्हारा जो दान-योग्य और वरणीय धन है, वह क्षीण नहीं होता उसे हम तुमसे माँगते हैं।

---

१ ऋत्विको, अतिथिके समान अग्निकी, हव्य द्वारा, परिचर्या करो। हव्य द्वारा जगाओ, अग्निमें आहुति गिराओ।

२ अग्नि, हमारे स्तोत्रका सेवन करो। इस मनोहर स्तोत्र द्वारा बढ़ो। हमारे सूक्तकी कामना करो।

३ देवोंके दूत और हव्यवाहक अग्निको मैं सम्मुख स्थापित करता हूँ। उनकी स्तुति करता हूं। वह यज्ञमें देवोंको बुलाव।

उत्ते बृहन्तो अर्चयः समिधानस्य दीदिवः । अग्ने शुक्रास ईरते ॥४॥

उप त्वा जुह्वो मम घृताचीर्यन्तु हर्यत । अग्ने हव्या जुषस्व नः ॥५॥

मन्द्रं होतारमृत्विजं चित्रभानुं विभावसुम् । अग्निमीळे स उ श्रवत् ॥६॥

प्रत्नं होतारमीड्यं जुष्टमग्निं कविक्रतुम् । अध्वराणामभिश्रियम् ॥७॥

जुषाणो अङ्गिरस्तमेमा हव्यान्यानुषक् । अग्ने यज्ञं नय ऋतुथा ॥८॥

समिधान उ सन्त्य शुक्रशोच इहा वह । चिकित्वान् दैव्यं जनम् ॥९॥

विप्रं होतारमद्रुहं धूमकेतुं विभावसुम् । यज्ञानां केतुमीमहे ॥१०॥

अग्ने नि पाहि नस्त्वं प्रति ष्म देव रीषतः । भिन्धि द्वेषः सहस्कृत ॥११॥

अग्निः प्रत्नेन मन्मना शुम्भानस्तन्वं स्वाम् । कविर्विप्रेण वावृधे ॥१२॥

---

४ दीप्त अग्नि, तुम्हारे प्रज्ज्वलित होनेपर तुम्हारी महती और उज्ज्वल ज्वालाएँ ऊपर उठती हैं ।

५ अभिलाषी अग्नि, हमारी घी देनेवाली स्रुक् तुम्हारे पास जायँ तुम हमारे हव्यका सेवन करो ।

६ मैं प्रसन्न, होता, ऋत्विक्, विलक्षण-दीप्ति और दीप्ति-धन (विभावसु) अग्निकी स्तुति करता हूँ । वह मेरी स्तुतिको सुनें ।

७ अग्नि प्राचीन, होता, स्तुतियोग्य, प्रीत, कवि, कार्यकर्त्ता और यज्ञमें आश्रित हैं । उनकी मैं स्तुति करता हूँ ।

८ अङ्गिरा लोगोंमें श्रेष्ठ अग्नि, क्रमशः इन हव्योंका सेवन करो । समय-समयपर यज्ञको सुसम्पन्न करो ।

९ भजनशील और उज्ज्वल दीप्तिवाले अग्नि, तुम समिद्ध (प्रज्वलित) होते ही देव जनको जानकर इस यज्ञमें ले आओ ।

१० अग्नि, मेधावी, होता, द्रोह शून्य, धूम-ध्वज, विभावसु और यज्ञके पताका-रूप हैं । उनसे हम अभीष्ट माँगते हैं ।

११ बलके द्वारा उत्पादित अग्निदेव, हम हिंसकोंकी रक्षा करो । शत्रुओंको फाड़ो ।

१२ क्रान्तकर्मा अग्नि प्राचीन और मनोरम स्तोत्रके द्वारा अपने शरीरको सुशोभित करके विप्रके साथ बढ़ते हैं ।

ऊर्जोनपातमा हुवेऽग्निं पावकशोचिषम् अस्मिन्यज्ञे स्वध्वरे ॥१३॥
स नोमित्रमहस्त्वमग्ने शुक्रेण शोचिषा । देवैरा सत्सि बर्हिषि ॥१४॥
यो अग्निं तन्वो दमे देवं मर्तः सपर्यति । तस्मा इद्दीदयद्वसु ॥१५॥
अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत् पतिः पृथिव्या अयम् । अपां रेतांसि जिन्वति ॥१६॥
उदग्ने शुचयस्तव शुक्रा भ्राजन्त ईरते । तव ज्योतींष्यर्चयः ॥१७॥
ईशिषे वार्यस्य हि दात्रस्याग्ने स्वर्पतिः । स्तोता स्यां तव शर्मणि ॥१८॥
त्वामग्ने मनीषिणस्त्वां हिन्वन्ति चित्तिभिः । त्वां वर्धन्तु नो गिरः ॥१९॥
अदब्धस्य स्वधावतो दूतस्य रेभतः सदा । अग्नेः सख्यं वृणीमहे ॥२०॥
अग्निः शुचिव्रततमः शुचिर्विप्रः शुचिः कविः । शुची रोचत आहुतः ॥२१॥

१३ अन्नके पुत्र और पवित्र दीप्तिवाले अग्निको इस हिंसा-शून्य यज्ञमें बुलाता हूँ।

१४ मित्रोंके पूजनीय अग्नि, तुम देवोंके सङ्ग उज्ज्वल तेजके साथ, यज्ञमें बैठो।

१५ जो मनुष्य अपने गृहमें, धन-प्राप्तिके लिये, अग्निकी परिचर्या करता है, उसे अग्नि धन देते हैं।

१६ देवोंके मस्तक, द्युलोकके ककुद् (वृषस्कन्धकी खूँटी) और पृथिवीके पति थे। अग्नि जलके वीर्यस्वरूप प्राणियोंको प्रसन्न करते हैं।

१७ अग्नि, तुम्हारी निर्मल, शुभ्रवर्ण और दीप्त प्रभाएँ तुम्हारे तेजको प्रेरित करती हैं।

१८ अग्नि, तुम स्वर्गके स्वामी हो; वरणीय और दान-योग्य धनके ईश्वर हो। मैं तुम्हारा स्तोता हूँ। सुखके लिये मैं तुम्हारा स्तोता बनूँ।

१९ अग्नि, मनीषी लोग तुम्हारी स्तुति करते हैं। तुम्हें ही कर्मके द्वारा प्रसन्न करते हैं। हमारी स्तुतियाँ तुम्हें वर्द्धित करें।

२० अग्नि, तुम हिंसा-शून्य, बली, देवोंके दूत और स्तोता हो। हम सदा तुम्हारी मैत्रीके लिये प्रार्थना करते हैं।

२१ अग्नि अतीव शुद्ध-कर्मा, पवित्र, मेधावी और कवि हैं। वह पवित्र और आहुत होकर शोभा पाते हैं।

उत त्वा धीतयो मम गिरो वर्धन्तु विश्वहा।
अग्ने सख्यस्य बोधिनः ॥२२॥

यदग्ने स्यामहं त्वं त्वं वा घा स्या अहम्। स्युष्टे सत्या इहाशिषः ॥२३॥

वसुर्वसुपतिर्हि कमस्यग्ने विभावसुः। स्याम ते सुमतावपि ॥२४॥

अग्ने धृतव्रताय ते समुद्रायेव सिन्धवः। गिरो वाश्रास ईरते ॥२५॥

युवानं विश्पतिं कविं विश्वादं पुरुवेपसम्। अग्निं शुम्भामि मन्मभिः ॥२६॥

यज्ञानां रथ्ये वयं तिग्मजंभाय वीलवे। स्तोमैरिषेमाग्नये ॥२७॥

अयमग्ने त्वे अपि जरिता भूतु सन्त्य। तस्मै पावक मृलय ॥२८॥

धीरो ह्यस्यद्मसद्विप्रो न जागृविः सदा। अग्ने दीदयसि द्यवि ॥२९॥

पुराग्ने दुरितेभ्यः पुरा मृध्रेभ्यः कवे। प्र ण आयुर्वसो तिर ॥३०॥

---

२२ अग्नि, मेरे कर्म और स्तुतियाँ सदा तुम्हें वर्द्धित करें। हमारे बन्धुत्व-कर्मको तुम सदा समझो।

२३ अग्नि, यदि मैं बहुधन हो जाऊँ; तो भी तुम तुम ही रहोगे और मैं मैं ही रहूँगा। तुम्हारे आशीर्वाद सत्य हों।

२४ अग्नि, तुम वासप्रद, धनपति और दीप्तिधन हो। हम तुम्हारा अनुग्रह पावें।

२५ अग्नि, तुम धृतकर्मा हो। मेरी शब्दवाली स्तुतियाँ उसी प्रकार तुम्हारे लिये गमन करती हैं, जिस प्रकार नदियाँ समुद्रकी ओर जाती हैं।

२६ अग्नि तरुण, लोकपति, कवि, सर्वभक्षक और बहुकर्मा हैं। उन्हें स्तोत्रके द्वारा मैं सुशोभित करता हूँ।

२७ यज्ञके नेता, तीखो ज्वालावाले और बलवान् अग्निके लिये हम स्तोत्रके द्वारा स्तुति करनेकी इच्छा करते हैं।

२८ शोधक और भजनीय अग्नि, हमारा स्तोता तुममें आसक्त हो। अग्नि, उसे सुखी करो।

२९ अग्नि, तुम धीर हो, हव्यदानके लिये बैठे हुए मेधावीके समान तुम सदा जागरूक होकर अन्तरीक्षमें प्रदीप्त होते हो।

३० वासदाता और कवि अग्नि, पापियों और हिंसकोंके हाथोंसे हमें बचाकर हमारी आयुको बढ़ाओ।

४५ सूक्त

इन्द्र देवता। कण्वगोत्रीय त्रिशोक ऋषि। गायत्री छन्द।

आ घा ये अग्निमिन्धते स्तृणन्ति बर्हिरानुषक्। येषामिन्द्रो युवा सखा ॥१॥

बृहन्निदिध्म एषां भूरि शस्तं पृथुः स्वरुः। येषामिन्द्रो युवा सखा ॥२॥

अयुद्ध इद्युधा वृतं शूर आजति सत्वभिः। येषामिन्द्रो युवा सखा ॥३॥

आ बुन्दं वृत्रहा ददे जातः पृच्छद्वि मातरम्। क उग्राः के ह शृण्विरे ॥४॥

प्रति त्वा शवसी वदद्गिरावप्सो न योधिषत्। यस्ते शत्रुत्वमाचके ॥५॥

उत त्वं मघवञ्छृणु यस्ते वष्टि ववक्षि तत्। यद्वीलयासि वीळु तत् ॥६॥

यदाजिं यात्याजिकृदिन्द्रः स्वश्वयुरुप। रथीतमो रथीनाम् ॥७॥

वि षु विश्वा अभियुजो वज्रिन्विष्वग्यथा वृह। भवा नः सुश्रवस्तमः ॥८॥

---

१ जो ऋषि भली भाँति अग्निको प्रदीप्त करते हैं, जिनके मित्र तरुण इन्द्र हैं, वे परस्पर मिलकर कुश बिछाते हैं।

२ इन ऋषियोंकी समिधा महती है। इनका स्तोत्र प्रचुर है। इनका स्वरूप (यज्ञ) महान् है। युवा इन्द्र इनके सखा हैं।

३ कौन अयोद्धा व्यक्ति शत्रुओंके द्वारा वेष्टित होकर और अपने बलसे बलवान् होकर शत्रुओंको नीचा दिखता है?

४ उत्पन्न होकर इन्द्रने वाण धारण किया और अपनी मातासे पूछा कि, "संसारमें कौन कौन उग्र बलवाले हैं?"

५ बलवती माताने उत्तर दिया, "जो तुमसे शत्रुता करना चाहता है, वह पर्वतमें दर्शनीय गजके समान युद्ध करता है।"

६ धनी इन्द्र, तुम हमारी स्तुतिको सुनो। स्तोता तुम्हारे पास जो चाहता है, उसे वह देते हो। तुम जिसे दृढ़ करते हो, वह दृढ़ होता है।

७ युद्धकर्त्ता इन्द्र जिस समय सुन्दर अश्वकी इच्छासे युद्धमें जाते हैं, उस समय वह रथियोंमें प्रधान रथी होते हैं।

८ वज्रधर इन्द्र, जिससे सारी अभिकाङ्क्षिणी प्रजा वृद्धिको प्राप्त हो, इस प्रकार तुम प्रवृद्ध होओ। हमारे लिये सबसे अधिक अन्नवाले बनो।

अस्माकं सुरथं पुर इन्द्रः कृणोतु सातये । नयं धूर्वन्ति धूर्तयः ॥९॥
वृज्याम ते परि द्विषोऽरन्ते शक्र दावने । गमेमेदिन्द्र गोमतः ॥१०॥
शनैश्चिद्यन्तो अद्रिवोऽश्वावन्तः शतग्विनः । विवक्षणा अनेहसः ॥११॥
ऊर्ध्वा हि ते दिवेदिवे सहस्रा सूनृता शता । जरितृभ्यो विमंहते ॥१२॥
विद्मा हि त्वा धनञ्जयमिन्द्र दृह्ला चिदारुजम् । आदारिणं यथा गयम् ॥१३॥
ककुहं चित्त्वा कवे मन्दन्तु धृष्णविन्दवः । आ त्वा पणिं यदीमहे ॥१४॥
यस्ते रेवाँ अदाशुरिः प्रममर्ष मघत्तये । तस्य नो वेद आ भर ॥१५॥
इम उ त्वा विचक्षते सखाय इन्द्र सोमिनः । पुष्टावन्तो यथा पशुम् ॥१६॥
उत त्वाबधिरं वयं श्रुत्कर्णं सन्तमूतये । दूरादिह हवामहे ॥१७॥

९ जिन इन्द्रकी हिंसा हिंसक (धूर्त) नहीं कर सकते, वही इन्द्र हमें अभीष्ट देनेके लिये सामने सुन्दर रथ स्थापित करें ।

१० इन्द्र, हम तुम्हारे शत्रुओंके निकट उपस्थित नहीं हों । जिस समय तुम प्रचुर गौवाले होओ, उस समय अभीष्ट प्रदान करनेवाले तुम्हारे ही पास हम उपस्थित हों ।

११ वज्रधर इन्द्र, धीरे-धीरे जाते हुए हम अश्ववाले, बहुत धनसे युक्त, विलक्षण और उपद्रववाले होंगे ।

१२ इन्द्र, यजमान तुम्हारे स्तोताओंके लिये प्रतिदिन सौ और सहस्र, उत्तम और प्रिय वस्तु देता है ।

१३ इन्द्र, तुम्हें हम धनञ्जय, पराक्रमशाली शत्रुओंके मथनकर्त्ता, धनापहारक और गृहके समान उपद्रवसे रक्षक जानते हैं ।

१४ कवि और धर्षक इन्द्र, तुम वणिक् हो । तुम्हारे पास जिस समय हम अभीष्टकी प्रार्थना करते हैं, उस समय सोम तुम्हें मत्त करे । तुम ककुद् (वृषभस्कन्धका ऊपरी भाग) वा उत्तम हो ।

१५ इन्द्र, जो मनुष्य धनी होकर दान नहीं करता और धनदाता तुमसे ईर्ष्या करता है, उसका धन हमारे लिये ले आओ ।

१६ इन्द्र, जैसे लोग घास लाकर पशुको देखते हैं, वैसे ही हमारे ये सखा सोमाभिषव करके तुम्हें देखते हैं ।

१७ इन्द्र, तुम बहरे नहीं हो । तुम्हारा कान सुननेवाला है; इसलिये रक्षणके लिये हम इस यज्ञमें तुम्हें दूरसे बुलाते हैं ।

यच्छुश्रूया इमं हवं दुर्मर्षञ्चक्रिया उत । भवेरापिर्नो अन्तमः ॥१८॥

यच्चिद्धि ते अपि व्यथिर्जगन्वांसो अमन्महि । गोदा इदिन्द्र बोधि नः ॥१९॥

आ त्वा रम्भं न जिव्रयो ररम्भा शवसस्पते । उश्मसि त्वा सधस्थ आ ॥२०॥

स्तोत्रमिन्द्राय गायत पुरुनृम्णाय सत्वने । नकिर्यं वृण्वते युधि ॥२१॥

अभि त्वा वृषभा सुते सुतं सृजामि पीतये । तृम्पा व्यश्नुही मदम् ॥२२॥

मा त्वा मूरा अविष्यवो मोपहस्वान आ दभन् ।
माकीं ब्रह्मद्विषो वनः ॥२३॥

इह त्वा गोपरीणसा महे मदन्तु राधसे । सरो गौरो यथा पिब ॥२४॥

या वृत्रहा परावति सना नवा च चुच्युवे । ता संसत्सु प्र वोचत ॥२५॥

---

१८ इन्द्र, हमारे इस आह्वानको सुनो और अपने बलको शत्रुओंके लिये दुःसह करो। तुम हमारे समीपतम बन्धु बनो।

१९ इन्द्र, जब हम दरिद्रताके द्वारा पीड़ित होकर तुम्हारे पास जायंगे और तुम्हारी स्तुति करेंगे, तब हमें गोदान करनेके लिये जागना।

२० बलपति, हम क्षीण होकर, दण्डके समान, तुम्हें प्राप्त करेंगे। यज्ञमें हम तुम्हारी कामना करेंगे।

२१ प्रचुर-धनी और दानशील इन्द्रके लिये स्तोत्र पाठ करो। युद्धमें उन्हें कोई नहीं हरा सकता।

२२ बली इन्द्र, सोमके अभिषुत होनेपर उसी अभिषुत सोमको, पानके लिये, तुम्हें देता हूँ। तृप्त होओ। मदकर सोमका पान करो।

२३ इन्द्र, मूढ़ मनुष्य, रक्षाभिलाषी होकर, तुम्हें न मारें। वे तुम्हें हँसें नहीं। ब्राह्मण-द्वेषियोंका कभी आश्रय नहीं करना।

२४ इन्द्र, इस यज्ञमें महाधनकी प्राप्तिके लिये मनुष्य दुग्धादिसे मिले सोमपानसे मत्त हों। गौरमृग जैसे सरोवरमें जल पीता है, वैसे ही तुम सोमपान करो।

२५ वृत्रघ्न इन्द्र, तुमने दूर देशमें जो नया और पुराना धन प्रेरित किया है, उसे यज्ञमें बताओ।

अपिबत् कद्रुवः सुतमिन्द्रः सहस्रबाह्वे । अत्रादेदिष्ट पौंस्यम् ॥२६॥

सत्यं तत्तुर्वशे यदौ विदानो अह्नवाय्यम् । व्यानट् तुर्वणे शमि ॥२७॥

तरणिं वो जनानां त्रदं वाजस्य गोमतः । समान मु प्र शंसिषम् ॥२८॥

ऋभुक्षणं न वर्तव उक्थेषु तुग्र्यावृधम् । इन्द्रं सोमे सचा सुते ॥२९॥

यः कृन्तदिद्वि योन्यं त्रिशोकाय गिरिं पृथुम् । गोभ्यो गातुं निरेतवे ॥३०॥

यद्दधिषे मनस्यसि मन्दानः प्रेदियक्षसि । मा तत् करिन्द्र मृळय ॥३१॥

दभ्रं चिद्धि त्वावतः कृतं शृण्वे अधि क्षमि । जिगात्विन्द्र ते मनः ॥३२॥

तवेदु ताः सुकीर्तयोऽसन्नुत प्रशस्तयः । यदिन्द्र मृळयासि नः ॥३३॥

मा न एकस्मिन्नागसि मा द्वयोरुत त्रिषु । वधीर्मा शूर भूरिषु ॥३४॥

---

२६ इन्द्र, तुमने कद्रु ऋषिके अभिषुत सोमका पान किया है और सहस्रबाहु नामक शत्रुका नाश भी किया है । उस समय इन्द्रका वीर्य अतीव दीप्त हुआ था ।

२७ तुर्वश और यदु नामक राजाओंके प्रसिद्ध कर्मको तुमने सत्य समझकर उनके लिये युद्धमें अह्नवाय्यको व्याप्त किया था ।

२८ स्तोताओ, तुम्हारे पुत्रादिके तारक, शत्रु-विमर्दक, गोविशिष्ट, अन्नदाता और साधारण इन्द्रकी मैं स्तुति करता हूँ ।

२९ जल-वर्द्धक और महान् इन्द्रकी, धन देनेके लिये, सोमाभिषव होनेपर, उक्थोंके उच्चारण-कालमें, स्तुति करता हूँ ।

३० जिन इन्द्रने जल-निर्गमनके लिये द्वार-रूप और विस्तृत मेघको, त्रिशोक ऋषिके लिये, विच्छिन्न किया था, उन्होंने ही जल-गतिके लिये मार्ग बनाया था ।

३१ इन्द्र, प्रसन्न होकर जो तुम धारण करते हो, जो पूजते हो, जो दान करते हो, सो सब हमारे लिये क्यों नहीं करते ? हमें सुखी करो ।

३२ इन्द्र, तुम्हारे समान थोड़ा भी कर्म करनेपर मनुष्य पृथिवीमें प्रसिद्ध हो जाता है । तुम्हारा मन मेरे प्रति गमन करे ।

३३ इन्द्र, तुम जिनके द्वारा हमें सुखी करते हो, वे तुम्हारी प्रसिद्धियाँ और स्तुतियाँ तुम्हारी हों ।

३४ इन्द्र, एक अपराध करनेपर हमें नहीं मारना, दो-तीन अथवा बहुत अपराध करनेपर भी हमें नहीं मारना ।

बिभया हि त्वावत उग्रादभिप्रभङ्गिणः । दस्मादहमृतीषहः ॥३५॥

मा सख्युः शूनमा विदे मा पुत्रस्य प्रभूवसो । आवृत्वद्भूतु ते मनः ॥३६॥

को नु मर्या अमिथितः सखा सखायमब्रवीत् । जहा को अस्मदीषते ॥३७॥

एवारे वृषभा सुतेऽसिन्वन् भूर्यावयः । श्वघ्नीव निवता चरन् ॥३८॥

आ त एता वचोयुजा हरी गृभ्णे सुमद्रथा । यदी ब्रह्मभ्य इद्ददः ॥३९॥

भिन्धि विश्वा अप द्विषः परि बाधो जही मृधः ।

वसु स्पार्हं तदा भर ॥४०॥

यद्वीलाविन्द्र यत् स्थिरे यत् पर्शाने पराभृतम् । वसु स्पार्हं तदा भर ॥४१॥

यस्य ते विश्वमानुषो भूरेर्दत्तस्य वेदति । वसु स्पार्हं तदा भर ॥४२॥

३५ इन्द्र, तुम्हारे समान उग्र, शत्रुओंको मारनेवाले, पापियोंके विनाशक और शत्रुओंकी हिंसाको सहनेवाले देवतासे मैं निर्भय होऊँ ।

३६ प्रचुर धनवाले इन्द्र, तुम्हारे सखाकी समृद्धिकी बातको निवेदित करता हूँ, उसके पुत्रकी कथाको निवेदित करता हूँ । तुम्हारा मन मुझसे फिर न जाय ।

३७ मनुष्यो, इन्द्रके अतिरिक्त कौन अहिंसा सखा, प्रश्न करनेके पूर्व ही, सखाको कह सकता है कि, मैंने किसको मारा है ? कौन हमसे डर कर भागेगा ?

३८ अभीष्टदाता इन्द्र, अभिषुत होनेपर सोम, एवार नामक व्यक्तिको बहुधन न देकर, धूर्तके समान, तुम्हारे पास आता है। नीचे मुँह करके देवता लोग निकल गये।

३९ सुन्दर रथवाले और मन्त्रके द्वारा जोते जानेवाले इन दोनों हरि नामक अश्वोंको मैं आकृष्ट करता हूँ । तुम ब्राह्मणोंको ही यह धन देते हो ।

४० इन्द्र, तुम सारे शत्रुओंको फाड़ो, हिंसा करो, संग्रामको बन्द करो और अभिलषणीय धन ले आओ ।

४१ इन्द्र, दृढ़ स्थानपर तुमने जो धन रखा है, स्थिर स्थानमें जो धन रखा है और सन्दिग्ध स्थानमें जो धन रखा है, वह अभिलषणीय धन ले आओ ।

४२ इन्द्र, लोगोंको अभिज्ञतामें तुम्हारे द्वारा दिया गया जो धन है, उस अभिलषणीय धनको ले आओ ।

:०:

तृतीय अध्याय समाप्त

चतुर्थ अध्याय

४६ सूक्त

२१ - २४ तक कनीतके पुत्र पृथुश्रवाका दान देवता, २५—२८ और ३२के वायु देवता, शेषके इन्द्र देवता। अश्व-पुत्र वश ऋषि। ककुप्, गायत्री, बृहती, अनुष्टुप्, सतो-बृहती, विराट् जगती, पङ्क्ति, उष्णिक् आदि छन्द।

त्वावतः पुरूवसो वयमिन्द्र प्रणेतः। स्मसि स्थातर्हरीणाम् ॥१॥

त्वां हि सत्यमद्रिवो विद्म दातारमिषाम्। विद्म दातारं रयीणाम् ॥२॥

आ यस्य ते महिमानं शतमूते शतक्रतो। गीर्भिर्गृणन्ति कारवः ॥३॥

सुनीथो घा स मर्त्यो यं मरुतो यमर्यमा। मित्रः पान्त्यद्रुहः ॥४॥

दधानो गोमदश्ववत् सुवीर्यमादित्यजूत एधते। सदा राया पुरुस्पृहा ॥५॥

तमिन्द्रं दानमीमहे शवसानमभीर्वम्। ईशानं राय ईमहे ॥६॥

---

१ बहु-धनी और कर्म-प्रापक इन्द्र, तुम्हारे समान पुरुषके ही हम आत्मीय हैं। तुम हरि नामके अश्वोंके अधिष्ठाता हो।

२ वज्री इन्द्र, तुम्हें हम अन्नदाता जानते हैं। धनदाता भी जानते हैं।

३ असीम रक्षणों और बहु कर्मोंवाले इन्द्र, तुम्हारी महिमाको स्तोता लोग स्तुति द्वारा गाते हैं।

४ द्रोह-शून्य मरुद्गण जिसकी रक्षा करते हैं और अर्यमा तथा मित्र जिसकी रक्षा करते हैं, वही मनुष्य सुन्दर यज्ञवाला होता है।

५ आदित्य द्वारा अनुगृहीत यजमान गौ और अश्ववाला होकर तथा सुन्दर वीर्यसे युक्त सदा बढ़ता है। वह बहु-संख्यक और अभिलषणीय धनके द्वारा बढ़ता है।

६ बलका प्रयोग करनेवाले, निर्भय तथा सबके स्वामी उन प्रख्यात इन्द्रके पास हम धनकी याचना करते हैं।

तस्मिन् हि सन्त्यूतयो विश्वा अभीरवः सचा ।
तमावहन्तु सप्तयः पुरूवसुं मदाय हरयः सुतम् ।
यस्ते मदो वरेण्यो य इन्द्र वृत्रहन्तमः ।
य आददिः स्वर्नृभिर्यः पृतनासु दुष्टरः ।८॥
यो दुष्टरो विश्ववार श्रवाय्यो वाजेष्वस्ति तरुता ।
स नः शविष्ठ सवना वसो गहि गमेम गोमति व्रजे ॥९॥
गव्यो षु णो यथा पुराश्वयोत रथया । वरिवस्य महामह ॥१०॥
नहि ते शूर राधसोऽन्तं विन्दामि सत्रा ।
दशस्या नो मघवन्नू चिदद्रिवो धियो वाजेभिराविथ ॥११॥
य ऋष्वः श्रावयत्सखा विश्वेत् स वेद जनिमा पुरुष्टुतः ।
तं विश्वे मानुषा युगेन्द्रं हवन्ते तविषं यतस्रुचः ॥१२॥
स नो वाजेष्वविता पुरूवसुः पुरःस्थाता मघवा वृत्रहा भुवत् ॥१३॥

---

७ सर्वत्रगामी, निर्भय और सहायक मरुद्रूप सेना इन्द्रकी ही है। गतिपरायण हरि अश्व हर्षके लिये बहुधन-दाता इन्द्रको अभिषुत सोमके निकट ले आवें।

८ इन्द्र, तुम्हारा जो मद वरणीय है, जिसके द्वारा संग्राममें तुम शत्रुओंका अतीव वध करते हो, जिसके द्वारा शत्रुके पाससे धन ग्रहण करते हो और संग्राममें जिसके द्वारा पार हुआ जाता है—

९ सब-वरेण्य, युद्धमें दुर्धर्ष शत्रुओंके पारगामी, सर्वत्र विख्यात, सर्वापेक्षा बली और वास-प्रदाता इन्द्र, अपने उसी मद (हर्ष) के साथ हमारे यज्ञमें आओ। हम गायुक्त गोष्ठमें जायँगे।

१० महाधनी इन्द्र, गोप्राप्ति, अश्वलाभ और रथ–संप्राप्तिकी हमारी इच्छा होनेपर पहलेकी ही तरह हमें वह सब देना।

११ शूर इन्द्र, सचमुच मैं तुम्हारे धनकी सीमा नहीं जानता। धनी और वज्री इन्द्र, हमें शीघ्र धन दो। अन्न द्वारा हमारे कर्मकी रक्षा करो।

१२ जो इन्द्र दर्शनीय हैं, जिनके मित्र ऋत्विक् लोग हैं, जो बहुतोंके द्वारा स्तुत हैं, वह संसारके सारे प्राणियोंको जानते हैं, सारे मनुष्य हव्य ग्रहण करके सदा उन्हीं बलवान् इन्द्रको बुलाते हैं।

१३ वही प्रचुर धनवाले, मघवा और वृत्रहन्ता इन्द्र युद्धक्षेत्रमें हमारे रक्षक और अग्रवर्ती हों।

अभि वो वीरमन्धसो मदेषु गाय गिरा महा विचेतसम् ।
इन्द्रं नाम श्रुत्यं शाकिनं वचो यथा ॥१४॥
ददी रेक्णस्तन्वे ददिर्वसु ददिर्वाजेषु पुरुहूत वाजिनम् । नूनमथ ॥१५॥
विश्वेषामिरज्यन्तं वसूनां सासह्वांसं चिदस्य वर्पसः ।
कृपयतो नूनमत्यथ ।१६॥
महः सु वो अरमिषे स्तवामहे मीळ्हुषे अरङ्गमाय जग्मये ।
यज्ञेभिर्गीर्भिर्विश्वमनुषां मरुतामियक्षसि गाये त्वा नमसा गिरा ॥१७॥
ये पातयन्ते अज्मभिर्गिरीणां स्नुभिरेषाम् ।
यज्ञं महिष्वणीनां सुम्नं तुविष्वणीनां प्राध्वरे ॥१८॥
प्रभङ्गं दुर्मतीनामिन्द्र शविष्ठा भर ।
रयिमस्मभ्यं युज्यं चोदयन्मते ज्येष्ठं चोदयन्मते ॥१९॥

---

१४ स्तोताओ, तुम लोगोंके हितके लिये सोम-जात मत्तता उत्पन्न होनेपर वीर, शत्रुओंकी अवनति करनेवाले, विशिष्ट प्रज्ञावाले, सर्वत्र प्रसिद्ध और शक्तिशाली इन्द्रकी, तुम्हारी जैसी वाक्य-स्फूर्ति हो, उसके अनुकूल, महती स्तुति द्वारा, स्तुति करो ।

१५ इन्द्र, तुम मेरे शरीरके लिये इसी समय धनदाता बनो । संग्रामोंमें अन्नवान् धनके दाता बनो । बहुतों द्वारा आहूत इन्द्र, पुत्रोंको धन दो ।

१६ सारे धनोंके अधिपति और बाधक तथा युद्ध-कम्पन-कर्त्ता शत्रुओंको हरानेवाले इन्द्रकी स्तुति करो । वह शीघ्र धन दान करेंगे ।

१७ इन्द्र, तुम महान् हो । मैं तुम्हारे आगमनकी कामना करता हूँ । तुम गमनशील हो, सम्पूर्ण-गामी और सेचक हो । यज्ञ और स्तुति द्वारा हम तुम्हारा स्तव करते हैं । तुम मरुतोंके नेता हो । सारे मनुष्योंके ईश्वर हो । नमस्कार और स्तुति द्वारा तुम्हारा गुण-गान करता हूँ ।

१८ जो मरुत् मेघोंके प्राचीन और बलकर जलके साथ जाते हैं, उन्हीं बहुत ध्वनिवाले मरुतोंके लिये हम यज्ञ करेंगे और उस यज्ञमें महाध्वनिवाले मरुद्गण जो सुख दे सकेंगे, उसे हम प्राप्त करेंगे ।

१९ तुम दुष्ट बुद्धियोंके विनाशक हो । तुम्हारे समीप हम याचना करते हैं । अतीव बली इन्द्र, हमारे लिये योग्य धन ले आओ । तुम्हारी बुद्धि सदा धन-प्रेरणमें तत्पर रहती है । देव, उत्तम धन ले आओ ।

सनितः सुसनितरुग्र चित्र चेतिष्ठ सूनृत ।
प्रासहा सम्राट् सहुरिं सहन्तं भुज्युं वाजेषु पूर्व्यम् ॥२०॥

आ स एतु य ईवदाँ अदेवः पूर्णमाददे ।
यथा चिद्वशो अश्व्यः पृथुश्रवसि कानीते स्या व्युष्याददे ॥२१॥

षष्टिं सहस्राश्व्यस्यायुतासनमुष्ट्राणां विंशतिं शता ।
दश श्यावीनां शता दश त्र्यरुषीणां दश गवां सहस्रा ॥२२॥

दश श्यावा ऋधद्रयो वीतवारास आशवः ।
मथ्रा नेमिं नि वावृतुः ॥२३॥

दानासः पृथुश्रवसः कानीतस्य सुराधसः ।
रथं हिरण्ययं ददन्मंहिष्ठः सूरिरभूद्वर्षिष्ठमकृत श्रवः ॥२४॥

आ नो वायो महे तने याहि मखाय पाजसे ।
वयं हि ते चकृमा भूरि दावने सद्यश्चिन्महि दावने ॥२५॥

२० दाता, उग्र, विचित्र, प्रिय, सत्यवक्ता, शत्रु-पराभवकर्त्ता और सबके स्वामी इन्द्र, शत्रु को हरानेवाले, भोग योग्य तथा प्रवृद्ध धन संग्राममें हमें देना ।

२१ अश्वके पुत्र जिन वशने कन्याके पुत्र (कानीन) पृथुश्रवा राजासे प्रातःकाल धन प्राप्त किया था; इसलिये देव रहित वशके पूर्ण धन ग्रहण कर लेनेके कारण, वश यहाँ आवें ।

२२ (आकर वशने कहा) "मैंने साठ सहस्र और अयुत (दश सहस्र) अश्वोंको प्राप्त किया है । बीस सौ ऊंटोंको पाया है । काले रंगकी दस सौ घोड़ियोंको पाया है । तीन स्थानोंमें शुभ्र रङ्गवाली दस सहस्र गायोंको पाया है ।"

२३ दस कृष्णवर्ण अश्व रथ नेमि (रथ-चक्रका प्रान्त वा परिधि) वहन करते हैं । वे अतीव वेग और बलवाले तथा मन्थन-कर्त्ता हैं ।

२४ उत्कृष्ट धनवाले कन्यापुत्र पृथुश्रवाका यही दान है । उन्होंने सोनेका रथ दिया है; वह अतीव दाता और प्राज्ञ हैं । उन्होंने अत्यन्त प्रवृद्ध कीर्त्ति प्राप्त की है ।

२५ वायु, महान् धन और पूजनीय बलके लिये हमारे समीप आओ । तुम प्रचुर धन देनेवाले हो । हम तुम्हारी स्तुति करते हैं । तुम महान् धनके दाता हो । तुम्हारे आनेके साथ ही हम तुम्हारी स्तुति करते हैं ।

यो अश्वेभिर्वहते वस्त उस्रास्त्रिः सप्त सप्ततीनाम् ।
एभिः सोमेभिः सोमसुद्भिः सोमपा दानाय शुक्रपूतपाः ॥२६॥
यो म इमं चिदु त्मनामन्दच्चित्रं दावने ।
अरट्वे अक्षे नहुषे सुकृत्वनि सुकृत्तराय सुक्रतुः ॥२७॥
उचथ्ये वपुषि यः स्वराळुत वायो घृतस्नाः ।
अश्वेषितं रजेषितं शुनेषितं प्राज्म तदिदन्नु तत् ॥२८॥
अध प्रियमिषिराय षष्टिं सहस्रासनम् । अश्वानामिन्न वृष्णाम् ॥२९॥
गावो न यूथमुप यन्ति वध्रय उप मा यन्ति वध्रयः ॥३०॥
अध यच्चारथे गणे शतमुष्ट्राँ अचिक्रदत् ।
अध श्वित्नेषु विंशतिं शता ॥३१॥
शतं दासे बल्बूथे विप्रस्तरुक्ष आददे ।
ते ते वायविमे जना मदन्तीन्द्रगोपा मदन्ति देवगोपाः ॥३२॥

---

२६ सोमपाता, दीप्त और पवित्र सोमके पानकर्त्ता वायु जो पृथुश्रवा अश्वोंके साथ आते हैं, गृहमें निवास करते हैं और त्रिगुणित सप्तसप्तति गायोंके साथ जाते हैं, वही तुम्हें सोम देनेके लिये सोम संयुक्त हुए है और अभिषव-कर्त्ताओंके साथ मिले हैं।

२७ जो पृथुश्रवा "मेरे लिये ये गौ, अश्व आदि देनेके लिये हैं" ऐसा विचार कर प्रसन्न हुए थे, उन शोभनकर्मा राजा पृथुश्रवाने अपने कर्माध्यक्ष अरट्व, अक्ष, नहुष और सुकृत्वको आज्ञा दी।

२८ वायु, जो उचथ्य और वपु नामके राजाओंसे भी अधिक साम्राज्य करते हैं, उन घृतके समान शुद्ध राजाने घोड़ों ऊँटों और कुत्तोंकी पीठसे जो अन्न प्रेरित किया है, वह यही है। यह तुम्हारा ही अनुग्रह है।

२९ इस समय धनादिका प्रेरण करनेवाले उन राजाके अनुग्रहसे सेचन करनेवाले अश्वके समान साठ हजार प्रिय गायोंको भी मैंने पाया।

३० जैसे गायें अपने झुण्डमें जाती हैं, वैसे ही पृथुश्रवाके दिये हुए बैल मेरे समीप आते हैं।

३१ जिस समय ऊँट वनके लिये भेजे गये थे, उस समय वह एक सौ ऊँट हमारे लिये लाये थे। श्वेतवर्ण गायोंके बीच बीस सौ गायें लाये।

३२ मैं विप्र हूं। मैं गो और अश्वका रक्षक हूं। बल्बूथ नामक दासके समीपसे मैंने सौ गौ और अश्व पाये थे। वायु, ये सब लोग तुम्हारे ही हैं। ये इन्द्र और देवोंके द्वारा रक्षित होकर आनन्दित होते हैं।

अध स्या योषणा मही प्रतीची वशमश्व्यम्। अधिरुक्मा वि नीयते ॥३३॥

---

४७ सूक्त

आदित्य देवता। आप्त्यत्रित ऋषि। महापङ्क्ति छन्द।

महि वो महतामवो वरुण मित्र दाशुषे।
यमादित्या अभि द्रुहो रक्षथा नेमघं
नशदनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१॥
विदा देवा अघानामादित्यासो अपाकृतिम्।
पक्षा वयो यथोपरि व्यस्मे शर्म
यच्छतानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥२॥
व्यस्मे अधि शर्म तत् पक्षा वयो न यन्तन।
विश्वानि विश्ववेदसो वरूथ्या
मनामहेऽनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥३॥

---

३३ इस समय वह स्वर्णके आभरणोंसे विभूषित, पूजनीय और राजा पृथुश्रवाके दानके साथ दी गयी कन्याको अश्वके पुत्र वशाके सामने ले आ रहे हैं।

१ मित्र और वरुण, हवि देनेवाले यजमानके लिये जो तुम्हारा रक्षण है, वह महान् है। शत्रुके हाथसे जिस यजमानको बचाते हो, उसे पाप नहीं छू सकता। तुमलोगोंकी रक्षा करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारा रक्षण शोभन है।

२ आदित्यो, तुमलोग दुःख-निवारणको जानते हो। जैसे चिड़ियाँ अपने बच्चोंपर पंख फैलाती हैं, वैसे ही तुम हमें सुख दो। तुमलोगोंकी रक्षा होनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारा रक्षण शोभन रक्षण है।

३ पक्षियोंके पक्षके समान तुमलोगोंके पास जो सुख है, उसे हमें प्रदान करो। सर्वधनी आदित्यो, समस्त गृहके उपयुक्त धन तुमसे हम माँगते हैं। तुम्हारे रक्षण करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा सुरक्षा है।

यस्मा अरासत क्षयं जीवातुं च प्रचेतसः ।
मनोर्विश्वस्य घेदिम आदित्या राय
ईशतेऽनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥४॥

परि णो वृणजन्नघा दुर्गाणि रथ्यो यथा ।
स्यामेदिन्द्रस्य शर्मण्यादित्यानामुता-
वस्यनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥५॥

परिह्वृतेदना जनो युष्मादत्तस्य वायति।
देवा अदभ्रमाशवो यमादित्या
अहेतनानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥६॥

न तं तिग्मं चन त्यजो न द्रासदभि तं गुरु ।
यस्मा उ शर्म सप्रथ आदित्यासो
अराध्वमनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥७॥

---

४ उत्तम-चेता आदित्यगण जिसके लिये गृह और जीवनके उपयुक्त अन्न प्रदान करते हैं, उसके लिये ये सारे मनुष्योंके धनके स्वामी हो जाते हैं। तुम्हारी रक्षामें उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा शोभन रक्षा है।

५ रथ ढोनेवाले अश्व जैसे दुर्गम प्रदेशोंका परित्याग कर देते हैं, वैसे ही हम पापका परित्याग कर देंगे। हम इन्द्रका सुख और आदित्यका रक्षण प्राप्त करेंगे। तुम्हारी रक्षा होनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा सुरक्षा है।

६ क्लेशके द्वारा ही मनुष्य तुम्हारा धन प्राप्त करते हैं। देवो, तुमलोग शीघ्र गमनवाले हो। तुमलोग जिस यजमानको प्राप्त करते हो, वह अधिक धन प्राप्त करता है। तुम्हारी रक्षा होनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा सुरक्षा है।

७ आदित्यो, जिसे तुम विस्तृत सुख प्रदान करते हो, वह व्यक्ति दृढ़ होनेपर भी क्रोधसे निर्विघ्न रहता है। उसके पास अपरिहार्य दुःख भी नहीं जाता। तुम्हारी रक्षा होनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

युष्मे देवा अपि ष्मसि युध्यन्त इव वर्मसु ।
यूयं महो न एनसो यूयमर्भा-
दुरुष्यतानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥८॥

अदितिर्न उरुष्यत्वदितिः शर्म यच्छतु ।
माता मित्रस्य रेवतोर्यम्णो वरुणस्य
चानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥९॥

यद्देवाः शर्म शरणं यद्भद्रं यदनातुरम्
त्रिधातु यद्वरूथ्यं तदस्मासु
वियन्तनानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१०॥

आदित्या अव हि ख्यताधि कूलादिव स्पशः ।
सुतीर्थमर्वतो यथानु नो नेषथा सुगमनेहसो ।
व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥११॥

---

८ आदित्यो, हम तुम्हारे आश्रयमें ही रहेंगे। इसी प्रकार योद्धा लोग कवचके आश्रयमें रहते हैं। तुम हमें महान् अनिष्ट और अल्प अनिष्टसे बचाओ। तुम्हारी रक्षा होनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

९ अदिति हमारी रक्षा करें; अदिति हमें सुख प्रदान करें। वह धनवती हैं और मित्र, वरुण तथा अर्यमाकी माता हैं। तुम्हारी रक्षा करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ह सुरक्षा है।

आदित्यो, तुमलोग हमें शरणके योग्य, सेवनके योग्य, रोगशून्य, त्रिगुण-युक्त और गृहके योग्य सुख प्रदान करो। तुम्हारी रक्षा करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

११ आदित्यो, जैसे मनुष्य तटसे नीचेके पदार्थोंको देखता है, वैसे ही तुम ऊपरसे नीचे स्थित हमें देखो। जैसे अश्वको अच्छे घाटपर ले जाया जाता है, वैसे ही हमें सन्मार्गसे ले जाओ। तुम्हारी रक्षा करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा हैं।

नेह भद्रं रक्षस्विने नावयै नोपया उत ।
गवे च भद्रं धेनवे वीराय च श्रवस्यतेऽ
नेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१२॥
यदाविर्यदपीच्यं देवासो अस्ति दुष्कृतं ।
त्रिते तद्विश्वमाप्त्य आरे अस्मद्दधातनानेहसो ।
व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१३॥
यच्च गोषु दुःष्वप्न्यं यच्चास्मे दुहितर्दिवः ।
त्रिताय तद्विभावर्याप्त्याय परा वहाने-
हसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१४॥
निष्कं वा घा कृणवते स्रजं वा दुहितर्दिवः ।
त्रिते दुःष्वप्न्यं सर्वमाप्त्ये परि
दद्मस्यनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१५॥

---

१२ आदित्यो, इस संसारमें हमारे हिंसक और बली व्यक्तिको सुख न हो; गौओं, गायों और अन्नाभिलाषी वीरको सुख प्राप्त हो। तुम्हारी रक्षा करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

१३ आदित्यदेवो, जो पाप प्रकट हुआ है और जो पाप छिपा हुआ है, उनमेंसे मुझ आप्त्य-त्रितको एक भी न हो। इन पापोंको दूर रखो। तुम्हारी रक्षा करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

१४ स्वर्गकी पुत्री उषा, हमारी गायोंमें जो दुष्ट स्वप्न (पीड़ा) है और हमारा जो दुःस्वप्न है, हे विभावरी, वह सब आप्त्यत्रितके लिये दूर कर दो। तुम्हारी रक्षा करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

१५ स्वर्गकी पुत्री उषा, स्वर्णकार अथवा मालाकारमें जो दुःस्वप्न है, वह आप्त्यत्रितके पाससे दूर हो। तुम्हारी रक्षा करनेपर दुःस्वप्न नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

तदन्नाय तदपसे तं भागमुपसेदुषे ।
त्रिताय च द्विताय चोषो दुःष्वप्न्यं वहानेहसो
व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१६॥
यथा कलां यथा शफं यथ ऋणं सन्नयामसि ।
एवादुःष्वप्न्यं सर्वमाप्त्ये सं नयामस्यनेहसो
व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१७॥
अजैष्माद्यासनाम चाभूमानागसो वयम् ।
उषो यस्माद्दुःष्वप्न्यादभैष्माप तदुच्छत्वनेहसो
व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१८॥

४८ सूक्त

सोम देवता । कण्वपुत्र प्रगाथ ऋषि । त्रिष्टुप् और जगती छन्द ।

स्वादोरभक्षि वयसः सुमेधाः स्वाध्यो वरिवोवित्तरस्य ।
विश्वे यं देवा उत मर्त्यासो मधु ब्रुवन्तो अभि सञ्चरन्ति ॥१॥

---

१६ स्वप्नमें अन्न (मधु, पायस आदि भोज्य) पानेवाले आप्त्यत्रितसे, दुःस्वप्नसे उत्पन्न कष्टको दूर करो। तुम्हारी रक्षा होनेपर उपद्रव नहीं होता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

१७ जैसे यज्ञमें दानके लिये पशुके हृदय, खुर, सींग आदि सब क्रमानुसार विलुप्त अथवा दत्त होते हैं, जैसे ऋणको क्रमशः दिया जाता है, वैसे ही हम आप्त्यत्रितके सारे दुःस्वप्न क्रमशः दूर करेंगे।

१८ आज हम जीतेंगे, आज हम सुख प्राप्त करेंगे, आज हम पाप-शून्य होंगे। उषा देवी, हम दुःस्वप्नसे डर गये हैं; इसलिये वह भय दूर हो। तुम्हारी रक्षा करनेवाला उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

---

१ मैं सुन्दर प्रज्ञा, अध्ययन और कर्मसे युक्त हूँ। मैं अतीव पूजित और स्वादु अन्नका आस्वाद ग्रहण कर सकूं। विश्वदेवगण और मनुष्य इस अन्नको मनोहर कहकर इसको प्राप्त करते हैं।

अन्तश्च प्रागा अदितिर्भवास्यवयाता हरसो दैव्यस्य ।
इन्दविन्द्रस्य सख्यं जुषाणः श्रौष्टीव धुरमनु राय ऋध्याः ॥२॥
अपाम सोममममृता अभूमागन्म ज्योतिरविदाम देवान् ।
किं नूनमस्मान् कृणवदरातिः किमु धूर्तिरमृत मर्त्यस्य ॥३॥
शं नो भव हृद आ पीत इन्दो पितेव सोम सूनवे सुशेवः ।
सखेव सख्य उरुशंस धीरः प्र ण आयुर्जीवसे सोम तारीः ॥४॥
इमे मा पीता यशस उरुष्यवो रथं न गावः समनाह पर्वसु ।
ते मा रक्षन्तु विस्रसश्चरित्रादुत मा स्रामाद्यवयन्त्विन्दवः ॥५॥
अग्निं न मा मथितं सं दिदीपः प्र चक्षय कृणुहि वस्यसो नः ।
अथा हि ते मद आ सोम मन्ये रेवाँ इव प्र चरा पुष्टिमच्छ ॥६॥
इषिरेण ते मनसा सुतस्य भक्षीमहि पित्र्यस्येव रायः ।
सोम राजन् प्र ण आयूंषि तारीरहानीव सूर्यो वासराणि ॥७॥

---

२ सोम, तुम हृदय वा यज्ञागारके बीचमें गमन करते हो। तुम अदिति हो। तुम देवोंके क्रोधको अलग करते हो। इन्दु (सोम), इन्द्रकी मैत्री प्राप्त करके तुम उसी प्रकार शीघ्र आकर हमारे धनका वहन करो, जिस प्रकार अश्व भार वहन करता है।

३ अमर सोम, हम तुम्हें पीकर अमर होंगे। पश्चात् द्युतिमान् स्वर्गमें जायंगे और देवोंको जानेंगे। हमारा शत्रु क्या करेगा? मैं मनुष्य हूँ; मेरा हिंसक क्या करेगा?

४ सोम, जैसे पिता पुत्रके लिये सुखकर होता है, वैसे ही पीनेपर तुम हृदयके लिये सुखकर होओ। अनेकों द्वारा प्रशंसित सोम, तुम बुद्धिमान् हो। हमलोगोंके जीवनके लिये आयुको बढ़ाओ।

५ पिये जानेपर, कीर्त्तिकर और रक्षणेच्छु सोम मुझे वैसे ही प्रत्येक अङ्गसे कर्ममें बाँधें, जैसे पशु रथको गाँठोंमें जूतते हैं। सोम मुझे चरित्र-भ्रष्टतासे बचावें। मुझे व्याधिसे अलग करें।

६ सोम, पिये जानेपर, मथित अग्निके समान, मुझे दीप्त करो, मुझे विशेष रूपसे देखो और मुझे अत्यन्त धनी करो। सोम, इस समय मैं तुम्हारे हर्षके लिये स्तुति करता हूँ; इसलिये तुम धनी होकर पुष्टि प्राप्त करो।

७ इच्छुक मनसे पैतृक धनके समान अभिषुत सोमका हम पान करेंगे। राजा सोम, तुम हमारी आयु बढ़ाओ। इसी प्रकार सूर्य दिनोंको बढ़ाते हैं।

सोम राजन्मृलया नः स्वस्ति तव स्मसि व्रत्यास्तस्य विद्धि ।
अलर्ति दक्ष उत मन्युरिन्दो मा नो अर्यो अनुकामं परादाः ॥८॥
त्वं हि नस्तन्वः सोम गोपा गात्रेगात्रे निषसत्था नृचक्षाः ।
यत्ते वयं प्रमिनाम व्रतानि स नो मृल सुषखा देव वस्यः ॥९॥
ऋदूदरेण सख्या सचेय यो मा न रिष्येद्धर्यश्व पीतः ।
अयं यः सोमो न्यधाय्यस्मे तस्मा इन्द्रं प्रतिरमेम्यायुः ॥१०॥
अप त्या अस्थुरनिरा अमीवा निरत्रसन्तमिषीचीरभैषुः ।
आ सोमो अस्माँ अरुहद्विहाया अगन्म यत्र प्रतिरन्त आयुः ॥११॥
यो न इन्दुः पितरो हृत्सु पीतोऽमर्त्यो मर्त्यां आविवेश ।
तस्मै सोमाय हविषा विधेम मृलीके अस्य सुमतौ स्याम ॥१२॥
त्वं सोम पितृभिः सन्विदानोऽनु द्यावापृथिवी आ ततन्थ ।
तस्मै त इन्दो हविषा विधेम वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥१३॥

---

८ राजा सोम, अविनाशके लिये हमें सुखी करो। हम व्रतवाले हैं, हम तुम्हारे ही हैं। तुम हमें जानो। इन्द्र, हमारा शत्रु वर्द्धित होकर जा रहा है। क्रोध भी जा रहा है। इन दोनोंके दण्डसे हमारा उद्धार करो।

९ सोम, तुम हमारे शरीरके रक्षक हो। तुम कर्मोंके नेताओंके द्रष्टा हो। इसीलिये तुम सब अङ्गोंमें बैठते हो। यद्यपि हम तुम्हारे कर्मोंमें विघ्न करते हैं, तो भी, हे देव, तुम उत्कृष्ट अन्न-वाले और उत्तम सखा होकर हमें सुखी करो।

१० सोम, तुम उदरमें व्यथा नहीं उत्पन्न करना। तुम सखा हो। मैं तुम्हारे सङ्ग मिलूँगा। पिये जानेपर सोम मुझे नहीं मारें। हरि अश्वोंवाले इन्द्र, यह जो सोम मुझमें निहित हुआ है; उसीके लिये चिर कालतक जठरमें रहनेकी प्रार्थना करता हूँ।

११ असाध्य और सुदृढ़ पीड़ाएँ दूर हों। ये सब पीड़ाएँ बलवती होकर हमें भली भाँति कम्पित करती हैं। महान् सोम हमारे पास आया है। इसका पान करनेसे आयु बढ़ती है। हम मानव हैं। हम इसके पास जायँगे।

१२ पितरो, पिये जानेपर जो सोम अमर होकर हम मर्त्योंके हृदयमें पैठा है, हव्य द्वारा हम उसी सोमकी सेवा करेंगे। इस सोमकी सुबुद्धि और कृपामें हम रहेंगे।

१३ सोम, तुम पितरोंके साथ मिलकर द्यावापृथिवीको विस्तृत करते हो। सोम, हविके द्वारा हम तुम्हारी सेवा करेंगे। हम धनपति होंगे।

त्रातारो देवा अधि वोचता नो मा नो निद्रा ईशत मोत जल्पिः ।
वयं सोमस्य विश्वह प्रियासः सुवीरासो विदथमा वदेम ॥१४॥
त्वं नः सोम विश्वतो वयो धास्त्वं स्वर्विदा विशा नृचक्षाः ।
त्वं न इन्द ऊतिभिः सजोषाः पाहि पश्चातादुत वा पुरस्तात् ॥१५॥

७ अनुवाक । ४६ सूक्त

अग्नि देवता । प्रगाथ-पुत्र भर्ग ऋषि । बृहती और सतोबृहती छन्द ।

अग्न आयाह्यग्निभिर्होतारं त्वा वृणीमहे ।
आ त्वामनक्तु प्रयता हविष्मती यजिष्ठं बर्हिरासदे ॥१॥
अच्छा हि त्वा सहसः सूनो अङ्गिरः स्रुचश्चरन्त्यध्वरे ।
ऊर्जो नपातं घृतकेशमीमहेऽग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम् ॥२॥

---

१४ त्राता देवो, हमसे मीठे वचन बोलो। स्वप्न हमें वशीभूत नहीं करे। निन्दक हमारी निन्दा न करें। हम सदा सोमके प्रिय हों, ताकि सुन्दर स्तोत्रवाले होकर स्तोत्रका उच्चारण करें।

१५ सोम, तुम चारो ओरसे हमारे अन्नदाता हो। तुम स्वर्गदाता और सर्वदर्शी हो। तुम प्रवेश करो। सोम, तुम प्रसन्नताके साथ, रक्षणको लेकर, पीछे और सामने हमें बचाओ। *

१ अग्नि, अन्य अग्निगणके साथ आओ। तुम्हें होता जानकर हम वरण करते हैं। अध्वर्युओंके द्वारा नियत और हविवाली यजनीय-श्रेष्ठ तुम्हें कुशपर बैठाकर अलङ्कृत करे।

२ बलके पुत्र और अङ्गिरा लोगोंमें अन्यतम अग्नि, यज्ञमें तुम्हें प्राप्त करनेके लिये स्रुक् आती है। अन्न-रक्षक बलके पुत्र, प्रदीप्त ज्वालावाले और प्राचीन अग्निको हम यज्ञमें स्तुति करते हैं।

---

* इसके आगे ११ सूक्त "बालखिल्य" सूक्त हैं। उनपर सायणाचार्यका भाष्य नहीं है। इसलिये उन सूक्तोंको यहाँ नहीं दिया गया है। अष्टम मण्डलके अन्तमें उन्हें दिया गया है।

अग्ने कविर्वेधा असि होता पावक यक्ष्यः ।
मन्द्रो यजिष्ठो अध्वरेष्वीड्यो विप्रेभिः शुक्र मन्मभिः ॥३॥
अद्रोघमा वहोशतो यविष्ठ्य देवाँ अजस्र वीतये ।
अभि प्रयांसि सुधिता वसो गहि मन्दस्व धीतिभिर्हितः ॥४॥
त्वमित्सप्रथा अस्यग्ने त्रातर्ऋतस्कविः ।
त्वां विप्रासः समिधान दीदिव आ विवासन्ति वेधसः ॥५॥
शोचा शोचिष्ठ दीदिहि विशे मयो रास्व स्तोत्रे महाँ असि ।
देवानां शर्मन्मम सन्तु सूरयः शत्रूषाहः स्वग्नयः ॥६॥
यथा चिद्वृद्धमतसमग्ने संजूर्वसि क्षमि ।
एवा दह मित्रमहो यो अस्मध्रुग्दुर्मन्मा कश्च वेनति ॥७॥
मा नो मर्ताय रिपवे रक्षस्विने माघशंसाय रीरधः ।
अस्रेधद्भिस्तरणिभिर्यविष्ठ्य शिवेभिः पाहि पायुभिः ॥८॥

३ अग्नि, तुम कवि (मेधावी), फलोंके विधाता, पावक, होता और होम-सम्पादक हो । दीप्त अग्नि, तुम आमोदनीय और सर्वोच्च यजनीय हो । यज्ञमें विप्रलोग मनन-मन्त्र द्वारा तुम्हारा, स्तोत्र करते हैं ।

४ युवतम और नित्य अग्नि, मैं द्रोह-शून्य हूँ । देवता लोग मेरी कामना करते हैं । हवि भक्षणके लिये उन्हें यहाँ ले आओ । वासदाता अग्नि, सुन्दर रीतिसे निहित अन्नके समीप जाओ । स्तुति द्वारा निहित होकर प्रसन्न होओ ।

५ अग्नि, तुम रक्षक, सत्यस्वरूप, कवि और सर्वतः विस्तृत हो । समिध्यमान और दीप्त अग्नि, विप्र स्तोतालोग तुम्हारी परिचर्या करते हैं ।

६ अतीव पवित्र अग्नि, दीप्त होओ और प्रदीप्त करो । प्रजा और स्तोताके लिये सुख प्रदान करो । तुम महान् हो । मेरे स्तोतालोग देव-प्रदत्त सुख प्राप्त करें । वे शत्रु-जेता और सुन्दर अग्निसे युक्त हों ।

७ अग्नि और मित्रोंके पूजक, पृथिवीके सूखे काठको तुम जैसे जलाते हो, वैसे ही हमारे द्रोही और हमारी दुर्बुद्धि चाहनेवालेको जलाओ ।

८ अग्नि, हमें हिंसक और बली मनुष्यके वशमें मत करना । हमारे अनिष्ट चाहनेवालेके वशमें हमें नहीं करना । युवतम अग्नि, अहिंसक, उद्धारक और सुखकर रक्षणोंसे हमारी रक्षा करो ।

पाहि नो अग्न एकया पाह्युत द्वितीयया ।
पाहि गीर्भिस्तिसृभिरूर्जाम्पते पाहि चतसृभिर्वसो ॥९॥
पाहि विश्वस्माद्रक्षसो अराव्णः प्र स्म वाजेषु नोव ।
त्वामिद्धि नेदिष्ठं देवतातय आपिं नक्षमहे वृधे ॥१०॥
आ नो अग्ने वयोवृधं रयिं पावक शंस्यम् ।
रास्वा च न उपमाते पुरुस्पृहं सुनीती स्वयशस्तरम् ॥११॥
येन वंसाम पृतनासु शर्द्धतस्तरन्तो अर्य आदिशः ।
स त्वं नो वर्ध प्रयसा शचीवसो जिन्वा धियो वसुविदः ॥१२॥
शिशानो वृषभो यथाग्निः शृङ्गे दविध्वत् ।
तिग्मा अस्य हनवो न प्रतिधृषे सुजम्भः सहसो यहुः ॥१३॥
नहि ते अग्ने वृषभ प्रतिधृषे जम्भासो यद्वितिष्ठसे ।
स त्वं नो होतः सुहुतं हविष्कृधि वस्वा नो वार्या पुरु ॥१४॥

---

९ अग्नि हमें एक ऋक्के द्वारा बचाओ। हमें द्वितीय ऋक्के द्वारा बचाओ। बली अग्नि, हमें तीन ऋकोंके द्वारा बचाओ। वास-दाता अग्नि, हमें चार वाक्योंके द्वारा बचाओ।

१० सारे राक्षसों और अदातासे हमें बचाओ। युद्धमें हमारी रक्षा करो। तुम निकटवर्त्ती और बन्धु हो। यज्ञ और समृद्धिके लिये हम तुम्हें प्राप्त करेंगे।

११ शोधक अग्नि, हमें अन्न-वर्द्धक और प्रशंसनीय धन प्रदान करो। समीपवर्त्ती और धनदाता अग्नि, हमें सुनीतिके द्वारा अनेकों द्वारा स्पृहणीय और अतीव कीर्त्तिकर धन दो।

१२ जिस धनके द्वारा हम युद्धमें क्षिप्रकारी शत्रु और अस्त्र-क्षेपकोंके हाथोंसे उद्धार पाकर उन्हें मारेंगे, उसे हमें दो। तुम प्रज्ञा द्वारा वासदाता हो। हमें वर्द्धित करो। अन्नके द्वारा वर्द्धित करो। हमारे धन देनेवाले कर्मोंको सुसम्पन्न करो।

१३ वृषभके समान अपने शृङ्ग (ज्वाला)को वर्द्धित करते हुए अग्नि मस्तक कँपा रहे हैं। अग्निके हनु (ज्वाला) तीक्ष्ण हैं; कोई उनका निवारण नहीं कर सकता। अग्निके दाँत उत्तम हैं। वह बलके पुत्र हैं।

१४ वृष्टिदाता अग्नि, तुम बढ़ते हो; इसलिये तुम्हारे दाँत (ज्वाला)का कोई निवारण नहीं कर सकता। अग्नि, तुम होता हो। तुम हमारे हव्यका भलीभाँति हवन करो। हमें वरणीय बहुधन दान करो।

शेषे वनेषु मात्रोः सं त्वा मर्तास इन्धते ।
अतन्द्रो हव्या वहसि हविष्कृत आदिद्देवेषु राजसि ॥१५॥
सप्त होतारस्तमिदीलते त्वाग्ने सुत्यजमह्रयम् ।
भिनत्स्यद्रिं तपसा वि शोचिषा प्राग्ने तिष्ठ जनाँ अति ॥१६॥
अग्निमग्निं वो अध्रिगुं हुवेम वृक्तबर्हिषः ।
अग्निं हितप्रयसः शश्वतीष्वा होतारं चर्षणीनाम् ॥१७॥
केतेन शर्मन्त्सचते सुषामण्यग्ने तुभ्यं चिकित्वना ।
इषण्यया नः पुरुरूपमा भर वाजं नेदिष्टमूतये ॥१८॥
अग्ने जरितर्विश्पतिस्तेपानो देव रक्षसः ।
अप्रोषिवान् गृहपतिर्महाँ असि दिवस्पायुर्दुरोणयुः ॥१९॥
मानो रक्ष आ वेशीदाघृणीवसो मा यातुर्यातुमावताम् ।
परोगव्यूत्यनिरामप क्षुधमग्ने सेध रक्षस्विनः ॥२०॥

१५ अग्नि, मातृ रूप वनमें वर्त्तमान अरणि-द्वयमें तुम रहते हो। मनुष्य तुम्हें भली भाँति वर्द्धित करते हैं। पीछे तुम आलस्य-शून्य होकर हव्यदाताके हव्यको देवोंके निकट ले जाओ। अनन्तर देवोंके बीच शोभा पाओ।

१६ अग्नि, तुम्हारी स्तुति सात होता करते हैं। तुम अभिमतदाता और प्रवृद्ध हो। तुम तापक तेजके द्वारा मेघको फाड़ते हो। अग्नि, हमें अतिक्रम करके आगे जाओ।

१७ स्तोताओ, तुम्हारे लिये हम अग्निका ही आह्वान करते हैं। हमने कुशको छिन्न किया है और हव्यका विधान किया है। अग्नि कर्म-धारक अनेक लोकोंमें वर्तमान और सारे यजमानोंके होता हैं।

१८ अग्नि, उत्तम साम (रथन्तर आदिसे युक्त) और सुखवाले यज्ञमें यजमान, प्रज्ञासे युक्त मनुष्यके साथ, तुम्हारी स्तुति करता है। अग्नि, हमारी रक्षाके लिये, अपनी इच्छासे, निकटवर्ती और नाना-रूपधारी अन्न ले आओ।

१९ देव और स्तुत्य अग्नि, तुम प्रजाके पालक और राक्षसोंके सन्तापक हो। तुम यजमानके गृह-रक्षक हो। उसे तुम कभी नहीं छोड़ते। तुम महान् हो। तुम द्युलोकके पाता हो। तुम यजमानके गृहमें सदा वर्तमान हो।

२० दीप्तधन अग्नि, हमारे अन्दर राक्षस आदि प्रविष्ट न हों। यातुधान लोगोंकी न प्रविष्ट हो। दरिद्रता, हिंसक और बली राक्षसोंको बहुत दूर रखना।

५० सूक्त

इन्द्र देवता। प्रगाथ-पुत्र भर्ग ऋषि। बृहती और सतोबृहती छन्द।

उभयं शृणवच्च न इन्द्रो अर्वागिदं वचः ।
सत्राच्या मघवा सोमपीतये धिया शविष्ठ आगमत् ॥१॥
तं हि स्वराजं वृषभं तमोजसे धिषणे निष्टतक्षतुः ।
उतोपमानां प्रथमो नि षीदसि सोमकामं हि ते मनः ॥२॥
आ वृषस्व पुरूवसो सुतस्येन्द्रान्धसः ।
विद्मा हि त्वा हरिवः पृत्सु सासहिमधृष्टं चिद्दधृष्वणिम् ॥३॥
अप्रामिसत्य मघवन् तथेदसदिन्द्र क्रत्वा यथा वशः ।
सनेम वाजं तव शिप्रिन्नवसा मक्षू चिद्यन्तो अद्रिवः ॥४॥
शग्ध्यू षु शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
भगं न हि त्वा यशसं वसुविदमनु शूर चरामसि ॥५॥

---

१ इन्द्र हमारे स्तोत्र-रूप और शस्त्रात्मक वाक्योंको सुन । हमारे सहगामी कर्मसे युक्त होकर धनी और बली इन्द्र सोमपानके लिये आवें।

२ द्यावापृथिवीने उन शोभन और वृष्टिदाता इन्द्रका संस्कार किया था। उन इन्द्रका बलके लिये संस्कार किया था। इसीलिये, हे इन्द्र, तुम उपमान देवोंमें मुख्य होकर वेदीपर बैठो। तुम्हारा मन सोमाभिलाषी है।

३ प्रचुर-धनी इन्द्र, तुम जठरमें अभिषुत सोमका सिञ्चन करो। हरि अश्वोंवाले इन्द्र, तुम्हें हम युद्धमें शत्रुओंका पराजेता, न दबाने योग्य और दूसरोंको दबानेवाला जानते हैं।

४ धनी इन्द्र, तुम वस्तुतः अहिंसित हो। जिस प्रकार हम कर्मके द्वारा फलकी कामना कर सकें, वैसा ही हो। शिरस्त्राणवाले वज्रधर इन्द्र, तुम्हारे रक्षणमें हम अन्नका सेवन करेंगे और शीघ्र ही शत्रुओंको पराजित करेंगे।

५ यज्ञपति इन्द्र, सारी रक्षाओंके साथ अभिमत फल प्रदान करो। शूर, तुम यशस्वी और धन-प्रापक हो। भाग्यके समान हम तुम्हारी सेवा करते हैं।

पौरोऽश्वस्य पुरुकृद्गवामस्युत्सो देव हिरण्ययः ।
नकिर्हि दानं परिमर्धिषत्त्वे यद्यद्यामि तदाभर ॥६॥
त्वं ह्येहि चेरवे विदा भगं वसुत्तये ।
उद्वावृषस्व मघवन् गविष्टय उदिन्द्राश्वमिष्टये ॥७॥
त्वं पुरू सहस्राणि शतानि च यूथा दानाय मंहसे ।
आ पुरन्दरं चकृम विप्रवचस इन्द्रं गायन्तोवसे ॥८॥
अविप्रो वा यदविधद्विप्रो वेन्द्र ते वचः ।
स प्र ममन्दत्त्वाया शतक्रतो प्राचामन्यो अहंसन ॥९॥
उग्रबाहुर्म्रक्षकृत्वा पुरन्दरो यदि मे शृणवद्धवम् ।
वसूयवो वसुपतिं शतक्रतुं स्तोमैरिन्द्रं हवामहे ॥१०॥
न पापासो मनामहे नारायासो न जल्हवः ।
यदिन्न्विन्द्रं वृषणं सचा सुते सखायं कृणवामहै ॥११॥

६ इन्द्र, तुम अश्वोंके पोषक, गौओंकी संख्या बढ़ानेवाले, सोनेके शरीरवाले और निर्झर स्वरूप हो। हमलोगोंके लिये तुम जो दान करनेकी कामना करते हो, उसकी कोई हिंसा नहीं कर सकता; फलतः मैं जो याचना करता हूँ, उसे ले आओ।

७ इन्द्र, तुम आओ धन-दानके लिये अपने सेवकको भजनीय धन दो। मैं गौ चाहता हूँ। मुझे गौ दो। मैं अश्व चाहता हूँ। मुझे अश्व दो।

८ इन्द्र, तुम अनेक सौ और अनेक सहस्र गौओंका समूह दाता यजमानको देते हो। नगर-भेदक इन्द्रका, रक्षणके लिये स्तव करते हुए विविध वचनोंसे युक्त होकर हम उन्हें अपनी ओर ले आवेंगे।

९ शतक्रतु, अपराजेय क्रोधवाले और संग्राममें अहङ्कारी इन्द्र, जो बुद्धि-हीन वा बुद्धिमान् तुम्हारी स्तुति करता है, तुम्हारी कृपासे वह आनन्दित होता है।

१० उग्रबाहु वधकर्त्ता और पुरी-भेदक इन्द्र यदि मेरा आह्वान सुनें, तो हम धनकी अभि-लाषासे धनपति और बहुकर्मा इन्द्रको, स्तोत्र द्वारा, बुलावेंगे।

११ अब्रह्मचारी हम इन्द्रको नहीं मानते। धन-शून्य और अग्निरहित हम इन्द्रको नहीं जानते। फलतः इस समय हम, सोमाभिषव होनेपर उन वर्षकके लिये इकट्ठे होकर उन्हें अपना मित्र बना लेंगे।

उग्रं युयुज्म पृतनासु सासहिमृणकातिमदाभ्यम् ।
वेदा भृमं चित् सनिता रथीतमो वाजिनं यमिदूनशत् ॥१२॥
यत इन्द्र भयामहे ततो नो अभयं कृधि ।
मघवञ्छग्धि तव तन्न ऊतिभिर्वि द्विषो वि मृधो जहि ॥१३॥
त्वं हि राधस्पते राधसो महः क्षयस्यासि विधतः ।
तं त्वा वयं मघवन्निन्द्र गिर्वणः सुतावन्तो हवामहे ॥१४॥
इन्द्रःस्पलुत वृत्रहा परस्पा नो वरेण्यः ।
स नो रक्षिषच्चरमं स मध्यमं स पश्चात् पातु नः पुरः ॥१५॥
त्वंनः पश्चादधरादुत्तरात् पुर इन्द्र नि पाहि विश्वतः ।
आरे अस्मत् कृणुहि दैव्यं भयमारे हेतीरदेवीः॥१६॥
अद्याद्या श्वश्व इन्द्र त्रास्व परे च नः ।
विश्वा च नो जरितृन्त्सत्पते अहा दिवा नक्तं च रक्षिषः ॥१७॥

१२ उग्र और युद्धमें शत्रुओंके विजेता इन्द्रको हम युक्त करेंगे। उनकी स्तुति ऋणके समान अवश्य फल देनेवाली है। वह अहिंसनीय, रथपति इन्द्र अनेक अश्वोंमें वेगवान् अश्वको पहचानते हैं। वह दाता हैं। वह अनेक यजमानोंमें हमें प्राप्त हुए हैं।

१३ जिस हिंसकसे हम भय पाते हैं, उससे हमें अभय करो, मघवन्, तुम समर्थ हो। हमें अभय प्रदान करनेके लिये रक्षक पुरुषोंके द्वारा शत्रुओं और हिंसकोंको विनष्ट करो।

१४ धनस्वामी तुम्हीं मघाधनके, सेवकके गृहके वर्द्धक हो। मघवा और स्तुति-पात्र इन्द्र, ऐसे तुमको हम, सोमाभिषव करके, बुलाते हैं।

१५ यह इन्द्र सबके ज्ञाता, वृत्रहन्ता पर, पालक और वरणीय हैं। वही इन्द्र हमारे पुत्रकी रक्षा करें। वह चरमपुत्रकी रक्षा करें और मध्यम पुत्रकी रक्षा करें। वह हमारे पीछे और सामने-दोनों दिशाओंमें रक्षा करें।

१६ इन्द्र, तुम हमें आगे, पीछे, नीचे, ऊपर--चारों ओरसे रक्षा करो। इन्द्र हमारे यहांसे देव-भय दूर करो और असुर आयुध भी दूर करो।

१७ इन्द्र, आज, कल और परसों हमारी रक्षा करना। साधु-रक्षक इन्द्र, हम तुम्हारे स्तोता हैं। सारा दिन हमारी रक्षा करना।

प्रभंगी शूरो मघवा तुवीमघः संमिश्लो वीर्याय कम् ।
उभा ते बाहू वृषणा शतक्रतो नि या वज्रं मिमिक्षतुः ॥१८॥

५१ सूक्त

इन्द्र देवता । कण्व-पुत्र प्रगाथ ऋषि । पङ्क्ति और बृहती छन्द ।

प्रो अस्मा उपस्तुतिं भरता यज्जुजोषति ।
उक्थैरिन्द्रस्य माहिनं वयो वर्धन्ति सोमिनो इन्द्रस्य रातयः ॥१॥
अयुजो असमो नृभिरेकः कृष्टीरयास्यः ।
पूर्वीरति प्र वावृधे विश्वा जातान्योजसा भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥२॥
अहितेन चिदर्वता जीरदानुः सिषासति ।
प्रवाच्यमिन्द्र तत्तव वीर्याणि करिष्यतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥३॥
आयाहि कृणवाम त इन्द्र ब्रह्माणि वर्धना ।
येभिः शविष्ठ चाकनो भद्रमिह श्रवस्यते भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥४॥

---

१८ ये धनी, वीर और प्रचुरधनी इन्द्र, वीरत्वके लिये, सबके साथ मिलते हैं । शतक्रतु इन्द्र, वह तुम्हारी अभिलाषप्रद दोनों भुजाएँ वज्र ग्रहण करें ।

---

१ इन्द्र सेवा करते हैं; इसलिये उनको लक्ष्यकर स्तुति करो । लोग सोम-प्रिय इन्द्रके प्रचुर अन्नको उक्थ मन्त्रोंके द्वारा वर्द्धित करते हैं । इन्द्रका दान कल्याणकारक है ।

२ असहाय, असम देवोंमें मुख्य और अविनाशी इन्द्र पुरातन प्रजाको अतिक्रम करके बढ़ते हैं । इन्द्रका दान कल्याणवाहक है ।

३ शीघ्रदाता इन्द्र अप्रेरित अश्वकी सहायतासे भोग करनेकी इच्छा करते हैं । इन्द्र, तुम सामर्थ्यदाता हो । तुम्हारा महत्त्व स्तुत्य है । इन्द्रका दान कल्याणकर है ।

४ इन्द्र, आओ । हम तुम्हारी उत्साहवर्द्धक और उत्कृष्ट स्तुति करते हैं । सबसे बली इन्द्र, इन स्तुतिके द्वारा अन्नेच्छु स्तोताका मङ्गल करनेकी इच्छा करते हो । इन्द्रका दान कल्याणकर है ।

धृषतश्चिद्धृषन्मनः कृणोषीन्द्र यत्त्वम् ।
तीव्रैः सोमैः सपर्यतो नमोभिः प्रतिभूषतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥५॥
अव चष्ट ऋचीषमोऽवतौं इव मानुषः ।
जुष्ट्वी दक्षस्य सोमिनः सखायं कृणुते युजं भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥६॥
विश्वे त इन्द्र वीर्यं देवा अनु क्रतुं ददुः ।
भुवो विश्वस्य गोपतिः पुरुष्टुत भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥७॥
गृणे तदिन्द्र ते शवऽउपमं देवतातये ।
यद्धंसि वृत्रमोजसा शचीपते भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥८॥
समनेव वपुष्यतः कृणवन्मानुषा युगा ।
विदे तदिन्द्रश्चेतनमध श्रुतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥९॥
उज्जातमिन्द्र ते शव उत्त्वामुत्तव क्रतुम् ।
भूरिगो भूरि वावृधुर्मघवन्तव शर्मणि भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥१०॥

५ इन्द्र, तुम्हारा मन अतीव धृष्ट है। मदकर सोमके प्रदान द्वारा सेवा करनेवाले और नमस्कार द्वारा विभूषित करनेवाले यजमानको असीम फल देते हो। इन्द्रका दान कल्याणकर है।

६ इन्द्र, तुम स्तुति द्वारा परिच्छिन्न होकर हमें उसी प्रकार देख रहे हैं, जिस प्रकार मनुष्य कूपका दर्शन करता है। इन्द्र प्रसन्न होकर सोमवाले यजमानके योग्य बन्धु होते हैं। इन्द्रका दान महा कल्याणकर है।

७ इन्द्र, तुम्हारे वीर्य और तुम्हारी प्रज्ञाका अनुधावन करते हुए सारे देवगण वीर्य और प्रज्ञाको धारण करते हैं। इन्द्र, प्रसिद्ध गायों अथवा वचनोंके स्वामी हो। बहुतों द्वारा स्तुत इन्द्र, तुम्हारा दान कल्याणवाहक है।

८ इन्द्र, तुम्हारे उस उपमान बलकी, यज्ञके लिये, मैं स्तुति करता हूँ। यज्ञपति, बलके द्वारा तुमने वृत्रका बध किया है। इन्द्रका दान कल्याणकर है।

९ प्रेमवाली रमणी जैसे रूपाभिलाषी पुरुषको वशीभूत करती है, वैसे ही इन्द्र मनुष्योंको वशीभूत करते हैं। मनुष्य संवत्सर आदिके कालको प्राप्त करते हैं। इन्द्र ही उसे बता देते हैं। इन्द्रका दान कल्याणकर है।

१० इन्द्र, अनेक पशुओंवाले जो यजमान तुम्हारे दिये सुखका भोग करते हैं, वे तुम्हारे उत्पन्न बलको प्रभूत रूपसे वर्द्धित करते हैं, तुम्हें वर्द्धित करते हैं, तुम्हारी प्रज्ञाको वर्द्धित करते हैं। इन्द्रका दान कल्याणकर है।

अहं च त्वं च वृत्रहन्त् सं युज्याव सनिभ्य आ ।
अरातीवा चिदद्रिवोऽनु नौ शूर मंसते भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥११
सत्यमिद्वा उ तं वयमिन्द्रं स्तवाम नानृतम् ।
महाँ असुन्वतो वधो भूरि ज्योतींषि सुन्वतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥१२॥

५२ सूक्त

इन्द्र देवता । अन्तिम ऋचाके देवता देवगण । कण्वके पुत्र प्रगाथ ऋषि । अनुष्टुप्, त्रिष्टुप् और गायत्री छन्द

स पूर्व्यो महानां वेनः क्रतुभिरानजे ।
यस्य द्वारा मनुष्पिता देवेषु धिय आनजे ॥१॥
दिवो मानं नोत्सदन्त् सोमपृष्ठासो अद्रयः । उक्था ब्रह्म च शंस्या ॥२॥
स विद्वाँ अङ्गिरोभ्य इन्द्रो गा अवृणोदप । स्तुषे तदस्य पौंस्यम् ॥३॥
स प्रत्नथा कविवृध इन्द्रो वाकस्य वक्षणिः ।
शिवो अर्कस्य होमन्यस्मत्रा गन्त्ववसे ॥४॥

---

११ इन्द्र, जबतक धन न मिले, तबतक हम मिलित रहें। वृत्रघ्न, वज्री और शूर इन्द्र, अदाता व्यक्ति भी तुम्हारे दानको प्रशंसा करेगा। इन्द्रका दान कल्याणकर है।

१२ हमलोग निश्चय ही इन्द्रकी सत्य स्तुति करेंगे। असत्य स्तुति नहीं करेंगे। इन्द्र यज्ञ-पराङ्मुख लोगोंका बध, बड़ी संख्यामें, करते हैं। वह अभिषव करनेवालेको प्रभूत ज्योति प्रदान करते हैं। इन्द्रका दान कल्याणकर है।

१ इन्द्र मुख्य हैं वह पूजनीयोंके कर्मोंसे कान्त हैं। वह आते हैं। देवोंके बीच पिता मनुने ही इन्द्रको पानेके उपायोंको प्राप्त किया था।

२ सोमाभिषवमें लगे हुए पत्थरोंने स्वर्गके निर्माता इन्द्रको नहीं छोड़ा था। उक्थों और स्तोत्रोंका उच्चारण करना चाहिये।

३ विद्वान् इन्द्रने अङ्गिरा लोगोंके लिये गौओंको प्रकट किया था। इन्द्रके उस पुरुषत्वकी मैं स्तुति करता हूँ।

४ पहलेकी तरह इस समय भी इन्द्र कवियोंके वर्द्धक हैं। वह होताके कार्य-निर्वाहक हैं। वह सुखकर और पूजनीय सोमके हवन-समयमें हमारी रक्षाके लिये जायँ।

आदू नु ते अनु क्रतुं स्वाहा वरस्य यज्यवः ।

श्वात्रमर्का अनूषतेन्द्र गोत्रस्य दावने ॥५॥

इन्द्रे विश्वानि वीर्या कृतानि कर्त्वानि च । यमर्का अध्वरं विदुः ॥६॥

यत् पाञ्चजन्यया विशेन्द्रे घोषा असृक्षत ।

अस्तृणाद्बर्हणा विपोऽर्यो मानस्य स क्षयः ॥७॥

इयमु ते अनुष्टुतिश्चकृषे तानि पौंस्या । प्रावश्चक्रस्य वर्तनिम् ॥८॥

अस्य वृष्णो व्योदन उरु क्रमिष्ट जीवसे । यवं न पश्व आददे ॥९॥

तद्दधाना अवस्यवो युष्माभिर्दक्षपितरः । स्याम मरुत्वतो वृधे ॥१०॥

बळृत्वियाय धाम्न ऋक्वभिः शूर नोनुमः । जेषामेन्द्र त्वया युजा ॥११॥

५ इन्द्र, स्वाहा देवीके पति अग्निके लिये यज्ञ-कर्त्ता तुम्हारी ही कीर्त्तिका गान करते हैं । शीघ्र धन-दानके लिये स्तोतालोग इन्द्रकी स्तुति करते हैं ।

६ सारे वीर्य और सारे कर्त्तव्य-कर्म्म इन्द्रमें वर्त्तमान हैं । स्तोता लोग इन्द्रको अध्वर (अहिंसक) कहते हैं ।

७ जिस समय चारो वर्ण और निषाद इन्द्रके लिये स्तुति करते हैं, उस समय इन्द्र अपनी महिमासे शत्रुओंका वध करते हैं । स्वामी (आर्य) इन्द्र स्तोताकी पूजाके निवास-स्थान हैं ।

८ इन्द्र, तुमने उन सब पुरुषत्व-पूर्ण कार्यों को किया है; इसलिये यह तुम्हारी स्तुति की जाती है । चक्रके मार्गकी रक्षा करो ।

९ वर्षक इन्द्रके दिये हुए नानाविध अन्न पा जानेपर सब लोग जीवनके लिये नाना प्रकारके कर्म करते हैं । पशुओंकी ही तरह वह यव (जौ) ग्रहण करते हैं ।

१० हम स्तोता और रक्षणाभिलाषी हैं । ऋत्विको, तुम्हारे साथ हम मरुतोंसे युक्त इन्द्रके वर्द्धनके लिये अन्नके स्वामी होंगे ।

११ इन्द्र, तुम यज्ञके समयमें उत्पन्न और तेजस्वी हो । शूर इन्द्र, मन्त्रोंके द्वारा हम सचमुच तुम्हारी स्तुति करेंगे । तुम्हारे साहाय्यसे हम जय लाभ करेंगे ।

अस्मे रुद्रा मेहना पर्वतासो वृत्रहत्ये भरहूतौ सजोषाः ।
यः शंसते स्तुवते धायि पज्र इन्द्रज्येष्ठा अस्माँ अवन्तु देवाः ॥१२॥

६३ सूक्त

इन्द्र देवता । प्रगाथ ऋषि । गायत्री छन्द ।

उत्त्वा मन्दन्तु स्तोमाः कृणुष्व राधो अद्रिवः । अव ब्रह्मद्विषो जहि ॥१॥
पदा पणीँरराधसो नि बाधस्व महाँ असि । नहि त्वा कश्चन प्रति ॥२॥
त्वमीशिषे सुतानामिन्द्र त्वमसुतानाम् । त्वं राजा जनानाम् ॥३॥
एहि प्रेहि क्षयो दिव्या घोषञ्चर्षणीनाम् । ओभे पृणासि रोदसी ॥४॥
त्वं चित् पर्वतं गिरिं शतवन्तं सहस्रिणम् । वि स्तोतृभ्यो रुरोजिथ ॥५॥
वयमु त्वा दिवा सुते वयं नक्तं हवामहे । अस्माकं काममा पृण ॥६॥
क स्य वृषभो युवा तुविग्रीवो अनानतः । ब्रह्मा कस्तं सपर्यति ॥७॥

१२ जल-सेचन करनेवाले और भयङ्कर मेघ अथवा मरुत् तथा युद्धके आह्वानपर आनन्दसे युक्त जो वृत्रघ्न इन्द्र स्तोता और शस्त्र-पाठक यजमानके निकट वेगसे आगमन करते हैं, वह भी हमारी रक्षा करें । देवोंमें इन्द्र ही ज्येष्ठ हैं ।

१ इन्द्र, तुम्हें स्तुतियाँ भली भाँति प्रमत्त करें । वज्री इन्द्र, धन प्रदान करो । स्तुति-विद्वेषियोंका विनाश करो ।

२ लोभी और यज्ञ-धन-शून्य लोगोंको पैरसे रगड़ डालो । तुम महान् हो । तुम्हारा कोई प्रतिद्वन्द्वी नहीं है ।

३ तुम अभिषुत सोमके ईश्वर हो— अनभिषुत सोमके भी तुम ईश्वर हो । जनताके तुम राजा हो ।

४ इन्द्र, आओ । मनुष्योंके लिये, यज्ञ-गृहको शब्दसे पूर्ण करते हुए, स्वर्गसे आओ । तुम वृष्टि द्वारा द्यावापृथिवीको परिपूर्ण करते हो ।

५ तुमने स्तोताओंके लिये पर्व (टुकड़े) वाले सौ प्रकारके जलवाले और असीम (सहस्र) जलवाले मेघको, स्तोताओंके लिये, तुमने विदीर्ण किया है ।

६ सोमके अभिषुत होनेपर हम दिन रात तुम्हारा आह्वान करते हैं । हमारी अभिलाषा पूर्ण करो

७ वह वृष्टिदाता, नित्य तरुण, विशाल कंधावाले और किसीसे नीचा न देखनेवाले इन्द्र कहाँ है ? कौन स्तोता उनकी स्तुति करता है ?

कस्य स्वित् सवनं वृषा जुजुष्वाँ अव गच्छति ।
इन्द्रं क उ स्विदा चके ॥८॥
कं ते दाना असक्षत वृत्रहन् कं सुवीर्या । उक्थे क उ स्विदन्तमः ॥९॥
अयं ते मानुषे जने सोमः पूरुषु सूयते । तस्येहि प्र द्रवा पिब ॥१०॥
अयं ते शर्यणावति सुषोमायामधि प्रियः । आर्जीकीये मदिन्तमः ॥११॥
तमद्य राधसे महे चारुं मदाय घृष्वये । एहीमिन्द्र द्रवा पिब ॥१२॥

५४ सूक्त

इन्द्र देवता । प्रगाथ ऋषि । गायत्री छन्द ।

यदिन्द्र प्रागपागुदङ्न्यग्वा हूयसे नृभिः । आयाहि तूयमाशुभिः ॥१॥
यद्वा प्रस्रवणे दिवो मादयासे स्वर्णरे । यद्वा समुद्रे अन्धसः ॥२॥

---

८ वृष्टिदाता इन्द्र, प्रसन्न होकर, आते हैं । कौन यजमान इन्द्रकी स्तुति करना जानता है ?

९ यजमानका दिया हुआ दान तुम्हारी सेवा करता है । वृत्रघ्न इन्द्र, शस्त्र-मन्त्र पढ़नेके समय सुन्दर वीर्यवाले स्तोत्र तुम्हारी सेवा करते हैं । तुम कैसे हो ? युद्धमें तुम्हारा कौन निकट-वर्त्ती होता है ?

१० मनुष्योंके बीच में तुम्हारे लिये सोमाभिषव करता हूँ । उसके पास आओ । शीघ्र-गामी होओ और उसका पान करो ।

११ यह प्रिय सोम तट तृणवाले पुष्कर (कुरुक्षेत्रस्थ), सुषोमा (सोहान नदी) और आर्जीकी या (विपासा=व्यास नदी) के तीरमें तुम्हें अधिक प्रमत्त करता है ।

१२ हमारे धन और शत्रुविनाशिनी मत्तताके लिये आज तुम उसी मनोहर सोमका पान करो । इन्द्र, शीघ्र सोमपात्रकी ओर जाओ ।

१ इन्द्र, तुम्हें लोग पूर्व, पश्चिम, उत्तर और निम्न दिशाओंमें बुलाते हैं; इसलिये अश्वोंकी सहायतासे शीघ्र आओ ।

२ तुम द्युलोकके अमृत चुलानेवाले स्थानपर प्रमत्त होते हो । तुम भूलोकमें प्रमत्त होते हो । तुम अन्नके अपादान अन्तरीक्षमें प्रमत्त होते हो ।

आ त्वा गीर्भिर्महामुरुं हुवे गामिव भोजसे । इन्द्र सोमस्य पीतये ॥३॥
आ त इन्द्र महिमानं हरयो देव ते महः । रथे वहन्तु बिभ्रतः ॥४॥
इन्द्र गृणीष उ स्तुषे महाँ उग्र ईशानकृत् । एहि नः सुतं पिब ॥५॥
सुतावन्तस्त्वा वयं प्रयस्वन्तो हवामहे । इदं नो बर्हिरासदे ॥६॥
यच्चिद्धि शश्वतामसीन्द्र साधारणस्त्वम् । तं त्वा वयं हवामहे ॥७॥
इदं ते सोम्यं मध्वधुक्षन्नद्रिभिर्नरः । जुषाण इन्द्र तत् पिब ॥८॥
विश्वाँ अर्यो विपश्चितोऽति ख्यस्तूयमागहि । अस्मे धेहि श्रवो बृहत् ॥९॥
दाता मे वृषतीनां राजा हिरण्यवीनाम् । मा देवा मघवा रिषत् ॥१०॥
सहस्रे पृषतीनामधिश्चन्द्रं बृहत् पृथु । शुक्रं हिरण्यमा ददे ॥११॥
नपातो दुर्गहस्य मे सहस्रेण सुराधसः । श्रवो देवेष्वक्रत ॥१२॥

३ इन्द्र, तुम्हें मैं स्तुतिके द्वारा बुलाता हूँ । तुम महान् और यथेष्ट हो । सोमपान और भोगके लिये तुम्हें मैं गायकी तरह बुलाता हूँ ।

४ रथमें जोते हुए अश्व तुम्हारी महिमा और तुम्हारे तेजको ले आवें ।

५ इन्द्र, तुम वाक्य और स्तुति द्वारा स्तुत होते हो तुम महान् उग्र और ऐश्वर्यकर्त्ता हो । आकर सोम पियो ।

६ हम अभिषुत सोम और अन्नवाले होकर तुम्हें, अपने कुशपर बैठनेके लिये, बुलाते हैं ।

७ इन्द्र, तुम अनेक यजमानोंके लिये साधारण हो; इसलिये हम तुम्हें बुलाते हैं ।

८ पत्थरसे सोमीय मधुको अध्वर्यु लोग अभिषुत करते हैं । प्रसन्न होकर तुम उसे पियो ।

९ इन्द्र, तुम स्वामी हो । तुम सारे स्तोताओंको, अतिक्रम करके, देखो । शीघ्र आओ । हमें महा अन्न प्रदान करो ।

१० इन्द्र हिरण्यवर्ण गौओंके राजा हैं । वह हमारे राजा हों । देवो, इन्द्र हिंसित न हों ।

११ मैं गौओंके ऊपर धारित, विशाल, विस्तृत, आह्लादकर और निर्मल हिरण्यको स्वीकृत करता हूँ ।

१२ मैं अरक्षित और दुःखी हूँ । मेरे मनुष्य असीम धनसे धनी हों । देवोंके प्रसन्न होनेपर यशकी प्राप्ति होती है ।

५५ सूक्त

इन्द्र देवता प्रगाथके पुत्र कलि ऋषि। बृहती, सतोबृहती और अनुष्टुप् छन्द।

तरोभिर्वो विदद्वसुमिन्द्रं सबाध ऊतये।
बृहद्गायन्तः सुतसोमे अध्वरे हुवे भरं न कारिणम् ॥१॥
न यं दुध्रा वरन्ते न स्थिरा मुरो मदे सुशिप्रमन्धसः।
य आहत्या शशमानाय सुन्वते दाता जरित्र उक्थ्यम् ॥२॥
यः शक्रो मृक्षो अश्व्यो यो वा कीजो हिरण्ययः।
स ऊर्वस्य रेजयत्यपावृतिमिन्द्रो गव्यस्य वृत्रहा ॥३॥
निखातं चिद्यः पुरुसम्भृतं वसूदिद्वपति दाशुषे।
वज्री सुशिप्रो हर्यश्व इत् करदिन्द्रः क्रत्वा यथा वशत् ॥४॥
यद्वावन्थ पुरुष्टुत पुरा चिच्छूर नृणाम्।
वयं तत्त इन्द्र सं भरामसि यज्ञमुक्थं तुरं वचः ॥५॥

---

१ ऋत्विको, वेगशाली अश्वोंको सहायतासे जो धन-दान करते हैं, उन्हीं इन्द्रके लिये साम-गान करके तुम लोग बाधा-युक्त होकर उनकी परिचर्या करो। जैसे लोग हितैषी और कुटुम्ब-पोषक व्यक्तिको बुलाते हैं, मैं भी अभिषुत सोमवाले यज्ञमें उन इन्द्रको बुलाता हूँ।

२ दुर्द्धर्ष शत्रुलोग सुन्दर जबड़ेवाले इन्द्रको बाधा नहीं दे सकते। स्थिर देवगण भी इन्द्रका निवारण नहीं कर सकते। मनुष्यगण भी निवारण नहीं कर सकते। इन्द्र सोमोत्पन्न आनन्दकी प्राप्तिके लिये प्रशंसक और सोमाभिषवकर्त्ताको दान देते हैं।

३ जो इन्द्र (शक्र) परिचर्याके योग्य, अश्वविद्याकुशल, अद्भुत, हिरण्मय, आश्चर्यभूत और वृत्रघ्न हैं, इन्द्र अनेक गोसमूहोंको अपावृत करके कँपाते हैं—

४ जो भूमिपर स्थापित और संगृहीत धनोंको, यजमानके लिये, ऊपर उठाते हैं, वही वज्रधर, उत्तम हनु (जबड़े)वाले और हरित वर्ण अश्ववाले इन्द्र जो इच्छा करते हैं, उसे ही कर्म द्वारा सिद्ध कर डालते हैं।

५ बहुतोंके द्वारा स्तुत और वीर इन्द्र, पहलेके समान स्तोताओंके समीप जो तुमने कामना की थी, उसे हम तुम्हें तुरत प्रदान करते हैं। वह चाहे यज्ञ रहा हो, उक्थ रहा हो अथवा वाक्य रहा हो, तुम्हें हम दे रहे हैं।

सचा सोमेषु पुरुहूत वज्रिवो मदाय द्युक्ष सोमपाः ।
त्वमिद्धि ब्रह्मकृते काम्यं वसु देष्ठः सुन्वते भुवः ॥६॥
वयमेनमिदा ह्योऽपीपेमेह वज्रिणम् ।
तस्मा उ अद्य समना सुतं भरा नूनं भूषत श्रुते ॥७॥
वृकश्चिदस्य वारण उरामथिरा वयुनेषु भूषति ।
सेमं नः स्तोमं जुजुषाण आ गहीन्द्र प्र चित्रया धिया ॥८॥
कदू न्वस्याकृतमिन्द्रस्यास्ति पौंस्यम् ।
केनो नु कं श्रोमतेन न शुश्रुवे जनुषः परि वृत्रहा ॥९॥
कदू महीरधृष्टा अस्य तविषीः कदु वृत्रघ्नो अस्तृतम् ।
इन्द्रो विश्वान्बेकनाटाँ अहर्दृश उत क्रत्वा पणीँरभि ॥१०॥
वयं घा ते अपूर्व्येन्द्र ब्रह्माणि वृत्रहन् ।
पुरूतमासः पुरुहूत वज्रिवो भृतिं प्र भरामसि ॥११॥

६ बहु-स्तुत, वज्रधर, स्वर्ग-सम्पन्न और सोमपाता इन्द्र, सोमाभिषव होनेपर मद-युक्त होओ। तुम्हीं सोमाभिषव-कर्त्ताके लिये सबसे अधिक कमनीय धनके दाता बनो।

७ हम अभी और कल इन्द्रको सोमसे प्रसन्न करेंगे। उन्हींके लिये इस युद्धमें अभिषुत सोमको ले आओ। स्तोत्र सुननेपर वह आवें।

८ यद्यपि चोर सबका निवारक और पथिकोंका विनाशक है, तो भी इन्द्रके कार्यमें व्याघात नहीं कर सकता। इन्द्र, तुम प्रसन्न होकर आओ। इन्द्र विचित्र कर्मके बलसे विशेष रूपसे आओ।

९ कौनसा ऐसा पुरुषत्व है, जिसे इन्द्रने नहीं किया है? ऐसा कौनसा इन्द्रका पौरुष है, जिसे नहीं सुना गया है? इन्द्रका वृत्रवध तो उनके जन्म आदिसे ही सुना जा रहा है।

१० इन्द्रका महाबल कब अधर्षक हुआ था। इन्द्रका बध्य कब अबध्य रहा? इन्द्र सारे सूदखोरों, दिन गिननेवालों (पारलौकिक दिनोंसे शून्यों) और वणिकोंको ताड़न आदिके द्वारा दबाते हैं।

११ वृत्रघ्न, वज्रधर और बहु-स्तुत इन्द्र भृति (वेतन) के समान तुम्हारे ही लिये हमलोग अभिनव स्तोत्र प्रदान करते हैं।

पूर्वीश्चिद्धि त्वे तुविकूर्मिन्नाशसो हवन्त इन्द्रोतयः ।
तिरश्चिदर्यः सवनावसो गहि शविष्ठ श्रुधि मे हवम् ॥१२॥
वयं घा ते त्वे इद्विन्द्र विप्रा अपि ष्मसि ।
नहि त्वदन्यः पुरुहूत कश्चन मघवन्नस्ति मर्डिता ॥१३॥
त्वं नो अस्या अमतेरुत क्षुधो भिशस्तेरव स्पृधि ।
त्वं न ऊती तव चित्रया धिया शिक्षा शचिष्ठ गातुवित् ॥१४॥
सोम इद्वः सुतो अस्तु कलयो मा बिभीतन ।
अपेदेष ध्वस्मायति स्वयं घैषो अपायति ॥१५॥

५६ सूक्त

आदित्यगण देवता। समद नामक महामीनके पुत्र मत्स्य वा मित्र और वरुणके पुत्र मान्य अथवा जाल-बद्ध अनेक मत्स्य ऋषि। गायत्री छन्द।

त्यान्नु क्षत्रियाँ अव आदित्यान्याचिषामहे। सुमृळीकाँ अभिष्टये ॥१॥

---

१२ बहुकर्मा इन्द्र, अनेक आशाएँ तुममें ही निहित हैं, रक्षाएँ भी तुममें ही हैं। स्तोतालोग तुम्हें बुलाते हैं। फलतः इन्द्र, शत्रुके सारे सवनोंको लाँघकर हमारे सवनमें आओ। महाबली इन्द्र, हमारे आह्वानको सुनो।

१३ इन्द्र, हम तुम्हारे ही हैं, हम तुम्हारे स्तोता हुए हैं। बहु-स्तुत इन्द्र, तुम्हारे अतिरिक्त और कोई सुखप्रद नहीं है।

१४ इन्द्र, तुम हमें इस दारिद्र्य इस क्षुधा और इस निन्दाके हाथसे मुक्त करो। हमारे लिये तुम रक्षण और विचित्र कर्मके द्वारा अभिलषित पदार्थ प्रदान करो।

१५ तुम्हारे ही लिये सोम अभिषुत हो। कलि ऋषिके पुत्रो, मत डरो। ये राक्षस आदि दूर जा रहे हैं। ये स्वयं दूर भाग रहे हैं।

१ अभिमत फलकी प्राप्ति अथवा जालसे निकलनेके लिये सुखदाता और जातिके क्षत्रिय आदित्योंसे हम रक्षणकी याचना करते हैं।

मित्रो नो अत्यंहतिं वरुणः पर्षदर्यमा । आदित्यासो यथा विदुः ॥२॥
तेषां हि चित्रमुक्थ्यं वरूथमस्ति दाशुषे । आदित्यानामरंकृते ॥३॥
महि वो महतामवो वरुण मित्रार्यमन् । अवांस्या वृणीमहे ॥४॥
जीवान्नो अभि धेतनादित्यासः पुरा हथात् । कद्ध स्थ हवनश्रुतः ॥५॥
यद्वः श्रान्ताय सुन्वते वरूथमस्ति यच्छर्दिः । तेना नो अधि वोचत ॥६॥
अस्ति देवा अंहोरुर्वस्ति रत्नमनागसः । आदित्या अद्भुतैनसः ॥७॥
मा नः सेतुः सिषेदयं महे वृणक्तु नस्परि । इन्द्र इद्धि श्रुतो वशी ॥८॥
मा नो मृचा रिपूणां वृजिनानामविष्यवः देवा अभि प्र मृक्षत ॥९॥
उत त्वामदिते मह्यहं देव्युप ब्रुवे । सुमृळीकामभिष्टये ॥१०॥
पर्षि दीने गभीर आँ उग्रपुत्रे जिघांसतः । माकिस्तोकस्य नो रिषत्॥११॥

२ मित्र, वरुण, अर्यमा और आदित्यगण दुःसह कार्यको जानते हैं; इसलिये वह हमें पापसे (रोगसे) पार कर दें।

३ आदित्योंके पास विचित्र और स्तुति-योग्य धन है। वह धन हव्यदाता यजमानके लिये है।

४ वरुण आदि देवो, तुम महान् हो। हव्यदाताके प्रति तुम्हारी रक्षा महती है। फलतः हम तुम्हारी रक्षाकी प्रार्थना करते हैं।

५ आदित्यो, हम (मत्स्य) अभी (जाल-बद्ध होनेपर भी) जीवित हैं। इस समय हमारे सामने आओ। आह्वान सुननेवालो, मृत्युके पहले आना।

६ श्रान्त अभिषव-कर्त्ता यजमानके लिये तुम्हारे पास जो वरणीय धन है, जो गृह है, उनसे हमलोगोंको प्रसन्न करके हमसे अच्छी बातें कहो।

७ देवो, पापीके पास महापाप है और पाप-शून्य व्यक्तिके पास रमणीय कल्याण है। पाप-शून्य आदित्यो, हमारा अभिमत सिद्ध करो।

८ यह इन्द्र जालसे हमें न बाँधें। महान् कर्मके लिये हमें जालसे छोड़ दें। इन्द्र विश्रुत और सबके वश-कर्त्ता हैं।

९ देवो, तुम हमें छोड़ो। हमें बचानेकी इच्छा करके हिंसक शत्रुओंके जालसे हमें नहीं बाधा देना।

१० देवी अदिति, तुम महती और सुखदात्री हो। अभिलषित फलकी प्राप्तिके लिये मैं तुम्हारी स्तुति करता हूँ।

अनेहो न उरुव्रज उरूचि वि प्रसर्तवे । कृधि तोकाय जीवसे ॥१२॥

ये मूर्धानः क्षितीनामदब्धासः स्वयशसः । व्रता रक्षन्ते अद्रुहः ॥१३॥

ते न आस्नो वृकाणामादित्यासो मुमोचत । स्तेनं बद्धमिवादिते ॥१४॥

अपो षु ण इयं शरुरादित्या अप दुर्मतिः । अस्मदेत्वजघ्नुषी ॥१५॥

शश्वद्धि वः सुदानव आदित्या ऊतिभिर्वयम् । पुरा नूनं बुभुज्महे ॥१६॥

शश्वन्तं हि प्रचेतसः प्रतियन्तं चिदेनसः । देवाः कृणुथ जीवसे ॥१७॥

तत् सु नो नव्यं सन्यस आदित्या यन्मुमोचति । बन्धाद्बद्धमिवादिते ॥१८॥

नास्माकमस्ति तत्तर आदित्यासो अतिष्कदे । यूयमस्मभ्यं मृलत ॥१९॥

---

११ अदिति, चारो ओरसे हमें बचाओ। क्षीण और उग्र पुत्रवाले जलमें हिंसकका जाल हमारे पुत्रको नहीं मारे।

१२ विस्तृत गमनवाली और गुरुतर अदिति, पुत्रके जीवनके लिये तुम हम पाप-शून्योंको जीवित रखो।

१३ सबके शिरोमणि, मनुष्योंके लिये अहिंसक, सुन्दर कीर्त्तिवाले और द्रोह-शून्य होकर जो हमारे कर्मकी रक्षा करते हैं—

१४ आदित्यो, वही तुम हिंसकोंके पाससे, पकड़े गये चोरके समान, हमारी रक्षा करो।

१५ आदित्यो, यह जाल हमारी हिंसा करनेमें असमर्थ होकर दूर हो। हमारी दुर्बुद्धि भी दूर हो।

१६ सुन्दर दानवाले आदित्यो, तुम्हारे रक्षणोंसे हम पहलेके समान इस समय भी नानाविध भोगोंका उपभोग करेंगे।

१७ प्रकृष्ट ज्ञानवाले देवो, जो पापी शत्रु बार-बार हमारी ओर जाता है, हमारे जीवनके लिये उसे अलग करो।

१८ आदित्यो, बन्धन जैसे बद्ध पुरुषको छोड़ता है, वैसे ही तुम्हारे अनुग्रहसे जो जाल हमें छोड़ता है, वह स्तुत्य और भजनीय है।

१९ आदित्यो, तुम्हारे समान हमारा वेग नहीं है। यह वेग हमें मुक्त करनेमें समर्थ है। तुम हमें सुखी करो।

मा नो हेतिर्विवस्वत आदित्याः कृत्रिमा शरुः ।

पुरा नु जरसो वधीत् ॥२०॥

वि षु द्वेषो व्यंहतिमादित्यासो वि संहितम् । विष्वग्वि वृहता रपः ॥२१॥

२० आदित्यो, विवस्वान्के आयुधके समान यह कृत्रिम जाल पहले और इस समय हम जीर्ण व्यक्तियोंको न मारे ।

२१ आदित्यो, द्वेषियोंका विनाश करो । पापियोंका विनाश करो । जालका विनाश करो। सर्वव्यापक पापका विनाश करो ।

चतुर्थ अध्याय समाप्त

पञ्चम अध्याय

५७ सूक्त

इन्द्र देवता। शेष ६ ऋकोंके ऋक्ष और अश्वमेधकी दानस्तुति देवता। अङ्गिरोगोत्रोत्पन्न प्रियमेध ऋषि। अनुष्टुप् छन्द।

आ त्वा रथं यथोतये सुम्नाय वर्तयामसि।
तुविकूर्मिमृतीषहमिन्द्र शविष्ठ सत्पते ॥१॥
तुविशुष्म तुविक्रतो शचीवो विश्वया मते। आ पप्राथ महित्वना ॥२॥
यस्य ते महिना महः परि ज्यायन्तमीयतुः। हस्ता वज्रं हिरण्ययम् ॥३॥
विश्वानरस्य वस्पतिमनानतस्य शवसः।
एवैश्च चर्षणीनामूती हुवे रथानाम् ॥४॥
अभिष्टये सदावृधं स्वर्मीह्ळेषु यं नरः। नाना हवन्त ऊतये ॥५॥
परोमात्रमृचीषममिन्द्रमुग्रं सुराधसम्। ईशानं चिद्वसूनाम् ॥६॥

---

१ अतीव बली और सत्पति इन्द्र, तुम बहुकर्मा और हिंसकोंके अभिभवकारी हो। रक्षण और सुखके लिये, रथके समान, हम तुम्हें आवर्त्तित करते हैं।

२ प्रचुर बलवाले, अतीव प्राज्ञ, बहुकर्मा और पूजनीय इन्द्र, विश्वव्यापक महत्त्वके द्वारा तुमने जगत्को आपूरित किया है।

३ तुम महान् हो। तुम्हारी महिमाके द्वारा पृथिवीमें व्याप्त हिरण्मय वज्रको तुम्हारे दोनों हाथ ग्रहण करते हैं।

४ मैं समस्त शत्रुओंके प्रति जानेवाले और दुर्दमनीय बलके पति इन्द्रको, तुम लोगों (मरुतोंकी) सेनाओंके साथ और रथके गमनके साथ, बुलाता हूँ।

५ नेतालोग रक्षणके लिये, जिन्हें युद्धमें विविध प्रकारसे बुलाते हैं, उन्हीं सर्वदा वर्द्धमान इन्द्रको सहायताके निमित्त आगमनके लिये बुलाता हूँ।

६ असीम शरीरवाले, स्तुति द्वारा परिमित, सुन्दर, धनसे सम्पन्न, धन-समुदायके स्वामी और उग्र इन्द्रको मैं बुलाता हूँ।

तन्तमिद्राधसे मह इन्द्रं चोदामि पीतये ।
यः पूर्व्यामनुष्टुतिमीशे कृष्टीनां नृतुः ॥७॥
न यस्य ते शवसान सख्यमानंश मर्त्यः । नकिः शवांसि ते नशत् ॥८॥
त्वोतासस्त्वा युजाप्सु सूर्ये महद्धनम् । जयेम पृत्सु वज्रिवः ॥९॥
तं त्वा यज्ञेभिरीमहे तं गीर्भिर्गिर्वणस्तम ।
इन्द्र यथा चिदाविथ वाजेषु पुरुमाय्यम् ॥१०॥
यस्य ते स्वादु सख्यं स्वाद्वीप्रणीतिरद्रिवः । यज्ञो वितन्तसाय्यः ॥११॥
उरु णस्तन्वे तन उरु क्षयाय नस्कृधि । उरु णो यन्धि जीवसे ॥१२॥
उरुं नृभ्य उरुं गव उरुं रथाय पन्थाम् । देववीतिं मनामहे ॥१३॥
उप मा षड्द्वाद्वा नरः सोमस्य हर्ष्या । तिष्ठन्ति स्वादुरातयः ॥१४॥

---

७ जो नेता हैं और जो यज्ञ-मुखस्थित तथा क्रमबद्ध स्तुति सुननेमें समर्थ हैं, उन्हीं इन्द्रको मैं, महान् धनकी प्राप्तिके लिये, सोमपानके निमित्त, बुलाता हूँ ।

८ बली इन्द्र, मनुष्य तुम्हारे सख्यको नहीं व्याप्त कर सकता; वह तुम्हारे बलको भी नहीं व्याप्त कर (घेर) सकता ।

९ वज्रधर, हम तुम्हारे द्वारा रक्षित होकर जलमें स्नान करनेके लिये और सूर्यको देखनेके लिये तुम्हारी सहायतासे संग्राममें महान् धन प्राप्त करेंगे ।

१० स्तुति द्वारा अत्यन्त प्रसिद्ध इन्द्र, मैं बहुत स्तुति करनेवाला हूँ । जिस प्रकार तुम हमें युद्धमें बचाओ, उसी प्रकारके यज्ञके द्वारा हम तुमसे याचना करते हैं—स्तुति द्वारा तुम्हारी याचना करते हैं ।

११ वज्रधर इन्द्र, तुम्हारा सख्य स्वादिष्ट है, तुम्हारा धनादिका सृजन भी स्वादु है और तुम्हारा यज्ञ विस्तारके योग्य है ।

१२ हमारे पुत्रके लिये यथेष्ट धन दो, हमारे पौत्रके लिये यथेष्ट धन दो और हमारे निवासके लिये प्रचुर धन दो तथा हमारे जीवनके लिये अभिलषित पदार्थ प्रदान करो ।

१३ इन्द्र, हम तुमसे मनुष्यकी भलाईके लिये प्रार्थना करते हैं, गायकी भलाईके लिये प्रार्थना करते हैं और रथके लिये सुन्दर मार्गकी प्रार्थना करते हैं । यज्ञकी प्रार्थना करते हैं ।

१४ सोमोत्पन्न हर्षके कारण, सुन्दर उपभोगके योग्य धनसे युक्त होकर, छः नेताओंमेंसे दो-दो हमारे पास आते हैं ।

ऋज्राविन्द्रोत आ ददे हरी ऋक्षस्य सूनवि । आश्वमेधस्य रोहिता ॥१५॥
सुरथाँ आतिथिग्वे स्वभीशूँरार्क्षे । आश्वमेधे सुपेशसः ॥१६॥
षळश्वाँ आतिथिग्व इन्द्रोते वधूमतः । सचा पूतक्रतौ सनम् ॥१७॥
ऐषु चेतद्वृषण्वत्यन्तर्ऋज्रेष्वरुषी । स्वभीशुः कशावती ॥१८॥
न युष्मे वाजबन्धवो निनित्सुश्चन मर्त्यः । अवद्यमधि दीधरत् ॥१९॥

५८ सूक्त

वरुण देवता । ११ वीं ऋचाके आधेके विश्वदेवगण और आधेके वरुण देवता । प्रियमेध ऋषि । उष्णिक्, गायत्री पङ्क्ति और अनुष्टुप् छन्द ।

प्रप्र वस्त्रिष्टुभमिषं मन्दद्वीरायेन्दवे ।
धिया वो मेधसातये पुरन्ध्या विवासति ॥१॥

---

१५ इन्द्रोत नामक राज-पुत्रसे दो सरल-गामी अश्वोंको मैंने पाया है। ऋक्षके पुत्रसे दो हरित-वर्ण अश्वोंको मैंने लिया है। अश्वमेधके पुत्रसे मैंने रोहित-वर्ण दो अश्वोंको पाया है।

१६ मैंने अतिथिग्वके पुत्र (इन्द्रोत) से सुन्दर रथवाले अश्वोंको पाया है। ऋक्षके पुत्रसे मैंने सुन्दर लगामवाले अश्वोंको ग्रहण किया है। अश्वमेधके पुत्रसे मैंने सुन्दर अश्वोंको ग्रहण किया है।

१७ अतिथिग्वके पुत्र और शुद्धकर्मा इन्द्रोतसे घोड़ियोंवाले छ घोड़ोंको, ऋक्षपुत्र और अश्वमेध पुत्रोंके दिये हुए अश्वोंके साथ, मैंने ग्रहण किया है।

१८ दीप्तिवाली, वर्षक अश्वोंसे युक्त और सुन्दर लगामोंवाली घोड़ियाँ भी इन घोड़ोंमें हैं।

१९ हे अन्नदाता छ राजाओं, निन्दक मनुष्य भी तुम्हारे प्रति निन्दाका आरोप नहीं करते।

१ अध्वर्युओ, जो वीरोंके लिये हर्ष उत्पन्न करते हैं, उन्हीं इन्द्रके लिये तुमलोग तीन स्तोभों (स्तम्भनों) से युक्त अन्नका संग्रह करो। यज्ञ-भोगके लिये प्रज्ञासे युक्त कर्मके द्वारा इन्द्र तुम्हारा सत्कार करते हैं।

नदं व ओदतीनां नदं योयुवतीनाम् ।
पतिं वो अघ्न्यानां धेनूनामिषुध्यसि ॥२॥
ता अस्य सूददोहसः सोमं श्रीणन्ति पृश्नयः ।
जन्मन्देवानां विशस्त्रिष्वा रोचने दिवः ॥३॥
अभि प्र गोपतिं गिरेन्द्रमर्च यथा विदे । सूनुं सत्यस्य सत्पतिम् ॥४॥
आ हरयः ससृज्रिरेरुषीरधि बर्हिषि । यत्राभि सन्नवामहे ॥५॥
इन्द्राय गाव आशिरं दुदुह्रे वज्रिणे मधु । यत् सीमुपह्वरे विदत् ॥६॥
उद्यद्ब्रध्नस्य विष्टपं गृहमिन्द्रश्च गन्वहि ।
मध्वः पीत्वा सचेवहि त्रिः सप्त सख्युः पदे ॥७॥
अर्चत प्रार्चत प्रियमेधासो अर्चत ।
अर्चन्तु पुत्रका उत पुरं न धृष्ण्वर्चत ॥८॥

---

२ उषाओंके उत्पादक, नदियोंके शब्द-जनक और अवध्य गौओंके पति इन्द्रको बुलाओ। यजमान दुग्धदात्री गौसे उत्पन्न अन्नकी इच्छा करता है।

३ देवोंके जन्मस्थान और आदित्यके रुचिकर प्रदेश (द्युलोक) में जो जा सकती हैं और जिनके दूधसे कुप पूर्ण होता है, वे गायें तीनों सवनोंमें इन्द्रके सोमको मिश्रित करती हैं।

४ इन्द्र गौओंके स्वामी, यज्ञके पुत्र और साधुओंके पालक हैं। इन्द्र जिस प्रकार यज्ञके गन्तव्य स्थानको जानें, उस प्रकार स्तुति-बन्धनोंसे उनकी पूजा करो।

५ हरि नामके अश्व, दीप्तियुक्त होकर, कुशके ऊपर इन्द्रको छोड़ें। हम कुश-स्थित इन्द्रकी स्तुति करेंगे।

६ इन्द्र जिस समय चारो ओरसे समीपमें वर्त्तमान मधु (सोमरस) को प्राप्त करते हैं, उस समय गायें वज्री इन्द्रके लिये सोममें मिलानेके उपयुक्त मधु (दुग्ध आदि) का वितरण वा दोहन करती हैं।

७ जिस समय इन्द्र और मैं सूर्यके गृहमें जाते हैं, उस समय सखा आदित्यके इक्कीस स्थानों (द्वादश मास, पाँच ऋतुएँ, तीन लोक और एक आदित्य) में मधुर सोमरसका पान करके हम मिलें।

८ अध्वर्युओ, तुमलोग इन्द्रकी पूजा करो। विशेष रूपसे पूजा करो। प्रियमेध-वंशीयो, जैसे पुर-विदारककी पूजा पुत्रलोग करते हैं, वैसे ही इन्द्रकी पूजा करो।

अव स्वराति गर्गरो गोधा परि सनिष्वणत् ।
पिङ्गा परि चनिष्कदिन्द्राय ब्रह्मोद्यतम् ॥९॥
आ यत् पतन्त्येन्यः सुदुघा अनपस्फुरः ।
अपस्फुरं गृभायत सोममिन्द्राय पातवे ॥१०॥
अपादिन्द्रो अपादग्निर्विश्वे देवा अमत्सत ।
वरुण इदिह क्षयत्तमापो अभ्यनूषत वत्सं संशिश्वरीरिव ॥११॥
सुदेवो असि वरुण यस्य ते सप्तसिन्धवः ।
अनुक्षरन्ति काकुदं सूर्म्यं सुषिरामिव ॥१२॥
यो व्यतीँरफाणयत् सुयुक्ताँ उप दाशुषे ।
तक्वो नेता तदिद्वपुरुपमा यो अमुच्यत ॥१३॥
अतीदु शक्र ओहत इन्द्रो विश्वा अति द्विषः ।
भिनत् कनीन ओदनं पच्यमानं परो गिरा ॥१४॥

९ जुभाऊ बाजा भयङ्कर रीतिसे घहरा रहा है। गोधा (हस्तघ्न नामका बाजा) चारों ओर शब्द करता है। पिङ्गल वर्णकी ज्या शब्द कर रही है। इसलिये इन्द्रके उद्देश्यसे स्तुति करो।

१० जिस समय शुभ्रवर्ण और सुन्दर दोहनवाली नदियाँ अतीव प्रवृद्ध होती हैं, उस समय इन्द्रके पानके लिये अतीव प्रवृद्ध सोमको ले आओ।

११ इन्द्रने सोमका पान किया, अग्निने भी पान किया। विश्वदेवगण तृप्त हुए। इस गृहमें वरुण निवास करें। बछड़ेवाली गायें जैसे बछड़ेके लिये शब्द करती हैं, वैसे ही उदक वरुणकी स्तुति करते हैं।

१२ वरुण (जलाभिमानी देव), तुम सुदेव हो। जैसे किरणें सूर्यके अभिमुख धावित होती है, वैसे ही तुम्हारे तालुपर गङ्गा आदि सातो नदियाँ अनुक्षण क्षरित होती हैं।

१३ जो इन्द्र विविधगामी और रथमें सम्बद्ध अश्वोंको हविर्दाता यजमानके पास जानेको छोड़ देते हैं, जो इन्द्र उपमाके स्थल हैं और जिनके लिये सभी मार्ग दे देते हैं, वही इन्द्र यज्ञ-गमनके समयमें सबके नेता होते हैं।

१४ शक्र (इन्द्र) युद्धमें निरोधक शत्रुओंको लाँघकर जाते हैं। सारे द्वेषी शत्रुओंको अतिक्रम करके जाते हैं। कमनीय और उत्कृष्ट इन्द्र वाक्य द्वारा ताड़न करके मेघको फाड़ते हैं।

अर्भको न कुमारकोऽधि तिष्ठन्नवं रथम् ।
स पक्षन्महिषं मृगं पित्रे मात्रे विभुक्रतुम् ॥१५॥
आ तू सुशिप्र दम्पते रथं तिष्ठा हिरण्ययम् ।
अध द्युक्षं सचेवहि सहस्रपादमरुषं स्वस्तिगामनेहसम् ॥१६॥
तं घेमित्था नमस्विन उप स्वराजमासते ।
अर्थं चिदस्य सुधितं यदेतव आवर्तयन्ति दावने ॥१७॥
अनु प्रत्नस्यौकसः प्रियमेधास एषाम् ।
पूर्वामनु प्रयतिं वृक्तबर्हिषो हितप्रयस आशत ॥१८॥

८ अनुवाक । ५६ सूक्त

इन्द्रदेव देवता । पुरुहन्मा ऋषि । उष्णिक्, अनुष्टुप्, बृहती, सतोबृहती और पुर उष्णिक छन्द ।

यो राजा चर्षणीनां याता रथेभिरध्रिगुः ।
विश्वासां तरुता पृतनानां ज्येष्ठो यो वृत्रहा गृणे ॥१॥

१५ अल्प-शरीर कुमारके समान यह इन्द्र नये रथपर अधिष्ठान करते हैं । माता-पिताके सामने इन्द्र महान् मृगके समान हैं । यज्ञकर्मा इन्द्र मेघको वृष्टिकी ओर करते हैं ।

१६ सुन्दर हनुवाले और रथके स्वामी इन्द्र, स्वच्छन्द-गन्ता, दीप्त, बहुपाद, हिरण्मय और निष्पाप रथपर चढ़ो । अनन्तर हम दोनों मिलेंगे ।

१७ इस प्रकार दीप्त और विराजमान इन्द्रकी अन्नवान् लोग सेवा करते हैं । अनन्तर जिस समय गमन और हव्यदानके लिये स्तुतियाँ इन्द्रको आवर्त्तित करती हैं, उस समय सुस्थापित धन प्राप्त होता है ।

१८ प्रियमेध-वंशीयोंने इन्द्र आदिके प्राचीन स्थानोंको प्राप्त किया है । प्रियमेधोंने मुख्य प्रदानके लिये कुशको फैलाया है और हव्य-स्थापन किया है ।
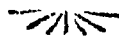
१ जो मनुष्योंके राजा हैं, जो रथपर जाते हैं, जिनके गमनमें कोई बाधक नहीं हो सकता और जो सारी सेनाके उद्धारक हैं, उन्हीं ज्येष्ठ और वृत्रघ्न इन्द्रकी मैं स्तुति करता हूं ।

इन्द्रं तं शुम्भ पुरुहन्मन्नवसे यस्य द्विता विधर्तरि ।
हस्ताय वज्रः प्रति धायि दर्शतो महो दिवे न सूर्यः ॥२॥
नकिष्टं कर्मणा नशद्यश्चकार सदावृधम् ।
इन्द्रं न यज्ञैर्विश्वगूर्तमृभ्वसमधृष्टं धृष्ण्वोजसम् ॥३॥
अषाह्ळमुग्रं पृतनासु सासहिं यस्मिन्महीरुरुज्रयः ।
सं धेनवो जायमाने अनोनवुर्द्यावः क्षामो अनोनवुः ॥४॥
यद्द्याव इन्द्र ते शतं शतं भूमीरुत स्युः ।
न त्वा वज्रिन्त्सहस्रं सूर्या अनु न जातमष्ट रोदसी ॥५॥
आ पप्राथ महिना वृष्ण्या वृषन्विश्वा शविष्ठ शवसा ।
अस्माँ अव मघवन् गोमति व्रजे वज्रिन् चित्राभिरूतिभिः ॥६॥
न सीमदेव आपदिषं दीर्घायो मर्त्यः ।
एतग्वा चिद्य एतशा युयोजते हरी इन्द्रो युयोजते ॥७॥

---

२ पुरुहन्मा, तुम अपने रक्षणके लिये इन्द्रको अलङ्कृत करो। तुम्हारे पालक इन्द्रका स्वभाव दो प्रकारका है—उग्र और अनुग्र इन्द्र हाथमें दर्शनीय वज्रको धारण करते हैं। वह वज्र आकाशमें दिखाई देनेवाले सूर्यके समान है।

३ सर्वदा वृद्धिशील, सबके स्तुत्य, महान् और अन्योंके अभिभविता इन्द्रको जो यज्ञके द्वारा अनुकूल करते हैं, उनके अतिरिक्त अन्य व्यक्ति कर्मके द्वारा नहीं व्याप्त कर सकते।

४ दूसरोंके लिये असहनीय, उग्र और शत्रु-सेनाके विजेता इन्द्रकी मैं स्तुति करता हूँ। इन्द्रके जन्म लेनेपर विशाल और अत्यन्त वेगवाली गायोंने उनकी स्तुति की थी, सारे द्युलोकों और पृथिवियोंने भी स्तुति की थी।

५ इन्द्र, यदि सौ द्युलोक हो जायँ, तो भी तुम्हारा परिमाण नहीं कर सकते; यदि सौ पृथिवियाँ हो जायँ, तो भी तुम्हें नहीं माप सकतीं; यदि सूर्य सौ हो जायँ, तो भी तुम्हें प्रकाशित नहीं कर सकते। इस लोकमें जो कुछ जन्मा है, वह और द्यावापृथिवी तुम्हारी सीमा नहीं कर सकते।

६ अभिलाषदाता, अतीव बली, धनी और वज्री इन्द्र, महान् बलके द्वारा तुमने बलका व्याप्त किया है। हमारी गायोंके निमित्त विविध रक्षणोंके द्वारा हमारी रक्षा करो।

७ दीर्घायु इन्द्र, जो व्यक्ति श्वेतवर्ण अश्व-द्वयको रथमें जोतता है, उसीके लिये इन्द्र हरि-द्वय जोतते हैं। देव-शून्य व्यक्ति सारा अन्न नहीं पाता।

तं वो महो महाय्यमिन्द्रं दानाय सक्षणिम् ।
यो गाधेषु य आरणेषु हव्यो वाजेष्वस्ति हव्यः ॥८॥
उदू षु णो वसो महे मृशस्व शूर राधसे ।
उदू षु मह्यै मघवन्मघत्तय उदिन्द्र श्रवसे महे ॥९॥
त्वं न इन्द्र ऋतयुस्त्वानिदो नि तृम्पसि ।
मध्ये वसिष्व तुविनृम्णोर्वोर्नि दासं शिश्नथो हथैः ॥१०॥
अन्यव्रतममानुषमयज्वानमदेवयुम् ।
अव स्वः सखा दुधुवीत पर्वतः सुघ्नाय दस्युं पर्वतः ॥११॥
त्वं न इन्द्रासां हस्ते शविष्ठ दावने ।
धानानां न सं गृभायास्मयुर्द्विः सं गृभायास्मयुः ॥१२॥
सखायः क्रतुमिच्छत कथा राधाम शरस्य ।
उपस्तुतिं भोजः सूरिर्यो अह्रयः ॥१३॥

---

८ ऋत्विको, महान् तुमलोग उन पूज्य इन्द्रकी, दानके लिये, मिलकर पूजा करो। जल-प्राप्तिके लिये इन्द्रको बुलाना चाहिये। निम्न स्थलकी प्राप्तिके लिये भी इन्द्रको बुलाना चाहिये। संग्राममें भी इन्द्रको बुलाना चाहिये।

९ वास-दाता और शूर इन्द्र तुम हमें महान् धनकी प्राप्तिके लिये उठाओ। शूर और धनी इन्द्र, महान् धन और महती कीर्त्ति देनेके लिये उद्योग करो।

१० इन्द्र, तुम यज्ञाभिलाषी हो। जो तुम्हारी निन्दा करता है, उसका धन अपहृत करके तुम प्रसन्न होते हो। प्रचुर-धन इन्द्र, हमारी रक्षाके लिये तुम हमें दोनों जाँघोंके बीच छिपा लो। शत्रुओंको मारो। अस्त्रके द्वारा दासको मार डालो।

११ इन्द्र, तुम्हारे सखा पर्वत अन्यरूप-धारक, अमानुष, यज्ञ-शून्य और देव-द्वेषी व्यक्तिको स्वर्गसे नीचे फेंकते हैं। वह दस्युको भृत्यके हाथमें भेजते हैं।

१२ बली इन्द्र, हमें देनेके लिये भूने यव वा जौके समान गौओंको हाथसे ग्रहण करो। तुम हमारी अभिलाषा करते हो। और भी अभिलाषा करके और भी ग्रहण करो।

१३ मित्रो, इन्द्र-सम्बन्धी और कर्म करनेकी इच्छा करो। हम हिंसक इन्द्रकी कैसे स्तुति करेंगे? इन्द्र शत्रुओंके भक्षक और प्रेरक हैं। वह कभी भी अवनत नहीं होते।

भूरिभिः समह ऋषिभिर्बर्हिष्मद्भिः स्तविष्यसे ।
यदित्थमेकमेकमिच्छर वत्सान् परादद: ॥१४॥
कर्णगृह्या मघवा शौरदेव्यो वत्सं नस्त्रिभ्य आनयत् ।
अजां सूरिर्न धातवे ॥१५॥

६० सूक्त

अग्नि देवता । सुदिति और पुरुमीढ़ ऋषि । गायत्री, बृहती और सतोबृहती छन्द ।

त्वं नो अग्ने महोभिः पाहि विश्वस्या अरातेः । उत द्विषो मर्त्यस्य ॥१॥
नहि मन्युः पौरुषेय ईशे हि वः प्रियजात । त्वमिदसि क्षपावान् ॥२॥
स नो विश्वेभिर्देवेभिरूर्जो नपाद्भद्रशोचे । रयिं देहि विश्ववारम् ॥३॥
न तमग्ने अरातयो मर्तं युवन्त रायः । यं त्रायसे दाश्वांसम् ॥४॥

१४ सबके पूजनीय इन्द्र, अनेक ऋषि और हव्यदाता तुम्हारी स्तुति करते हैं। हिंसक इन्द्र, तुम एक-एक करके अनेक प्रकारसे, स्तोताओंको अनेक वत्स देते हो।

१५ ये ही धनी इन्द्र तीन हिंसकोंसे युद्धमें जाती हुई गायों और बछड़ोंको कान पकड़कर हमारे पास ले आवें। इसी प्रकार पानेके लिये स्वामी बकरीको कान पकड़कर ले आता है।

---

१ दान-शून्य अनेक व्यक्तियोंसे लब्ध महाधनके द्वारा तुम हमें पालित करो। शत्रुओंके हाथसे भी हमें बचाओ।

२ प्रिय-जन्मा अग्नि, पुरुष-सम्बन्धी क्रोध तुम्हें नहीं बाधा दे सकता। तुम रात्रिवाले हो (रातमें अग्नि विशेष तेजस्वी होते हैं)।

३ बलके पुत्र और प्रशस्य तेजवाले अग्नि, तुम सारे देवोंके साथ सबके लिये वरणीय धन हमें दो।

४ अग्नि, जिस हविर्दाताका तुम पालन करते हो, उस व्यक्तिको अदाता और धनी व्यक्ति नहीं पृथक् करते।

यं त्वं विप्र मेधसातावग्ने हिनोषि धनाय । स तवोती गोषु गन्ता ॥५॥

त्वं रयिं पुरुवीरमग्ने दाशुषे मर्ताय । प्र णो नय वस्यो अच्छ ॥६॥

उरुष्या णो मा परादा अघायते जातवेदः । दुराध्ये मर्ताय ॥७॥

अग्ने माकिष्टे देवस्य रातिमदेवो युयोत । त्वमीशिषे वसूनाम् ॥८॥

स नो वस्व उप मास्यूर्जो नपान्माहिनस्य । सखे वसो जरितृभ्यः ॥९॥

अच्छा नः शीरशोचिषं गिरो यन्तु दर्शतम् ।

अच्छा यज्ञासो नमसा पुरूवसुं पुरुप्रशस्तमूतये ॥१०॥

अग्निं सूनुं सहसो जातवेदसं दानाय वार्याणाम ।

द्विता यो भूदमृतो मर्त्येष्वा होता मन्द्रतमो विशि ॥११॥

अग्निं वो देवयज्ययाग्निं प्रयत्यध्वरे

अग्निं धीषु प्रथममग्निमर्वत्यग्निं क्षैत्राय साधसे ॥१२॥

---

५ मेधावी अग्नि, तुम जिस व्यक्तिको धन-लाभके लिये यज्ञ प्रेरित करते हो, वह तुम्हारी रक्षाके कारण गो-संयुक्त होता है।

६ अग्नि तुम हव्यदाता मनुष्यके लिये बहु-वीरयुक्त धन प्रदान करो। वासयोग्य धनके अभिमुख हमें प्रेरित करो।

७ जात-धन अग्नि, हमारी रक्षा करो। अनिष्ट चाहनेवाले और हिंसा-मूर्त्ति मनुष्यके हाथमें हमें नहीं समर्पित करना।

८ अग्नि, तुम द्योतमान हो। कोई भी देव-शून्य व्यक्ति तुम्हें धन-दानसे अलग नहीं कर सकता।

९ बलके पुत्र, सखा और निवासप्रद अग्नि, हम स्तोता हैं। तुम हमें महाधन प्रदान करो।

१० हमारी स्तुतियाँ भक्षण (दहन) करनेवाली शिखाओंवाले और दर्शनीय अग्निकी ओर जायें। सारे यज्ञ रक्षाके लिये हवियुक्त होकर प्रचुर धनवाले और अनेकोंके द्वारा स्तुत अग्निकी ओर जायँ।

११ सारी स्तुतियाँ बलके पुत्र, जातधन और वरणीय (स्वीकरणीय) अग्निकी ओर जायँ। अग्नि अमर और मनुष्योंमें रहनेवाले हैं। अग्नि दो प्रकारके हैं--मनुष्योंमें होम-सम्पादक और मदकारी हैं।

१२ यजमानो, तुम्हारे देव-यज्ञके लिये अग्निकी मैं स्तुति करता हूं। यज्ञके प्रारम्भ होनेपर मैं अग्निकी स्तुति करता हूं। कर्म-कालमें अग्निकी प्रथम स्तुति करता हूँ। बन्धुत्व आनेपर अग्निकी स्तुति करता हूं। क्षेत्र प्राप्ति होनेपर अग्निकी स्तुति करता हूं।

अग्निरिषां सख्ये ददातु न ईशे यो वार्याणाम् ।
अग्निं तोके तनये शश्वदीमहे वसुं सन्तं तनूपाम् ॥१३॥
अग्निमीळिष्वावसे गाथाभिः शीरशोचिषम् ।
अग्निं राये पुरुमीह्ळ श्रुतं नरोऽग्निं सुदीतये च्छर्दिः ॥१४॥
अग्निं द्वेषो योतवै नो गृणीमस्यग्निं शं योश्च दातवे ।
विश्वासु विक्ष्ववितेव हव्यो भुवद्वस्तुर्ऋषूणाम् ॥१५॥

६१ सूक्त

अग्नि देवता। प्रगाथके पुत्र हर्यत ऋषि। गायत्री छन्द।

हविष्कृणुध्वमा गमदध्वर्युर्वनते पुनः । विद्वाँ अस्य प्रशासनम् ॥१॥
नि तिग्ममभ्यंशुं सीदद्धोता मनावधि । जुषाणो अस्य सख्यम् ॥२॥
अन्तरिच्छन्ति तं जने रुद्रं परो मनीषया । गृभ्णन्ति जिह्वया ससम् ३॥

१३ अग्नि के हम सखा हैं और अग्नि स्वीकरणीय धनके ईश्वर हैं। वह हमें अन्न दें। पुत्र और पौत्रके लिये उन निवास-दाता और अङ्गपालक अग्निसे हम प्रचुर धनकी याचना करते हैं।

१४ पुरुमीढ, रक्षाके लिये तुम मन्त्र द्वारा अग्निकी स्तुति करो। उनकी ज्वाला दाहक है। धनके लिये अग्निकी स्तुति करो। अन्य यजमान भी उनकी स्तुति करते हैं। सुदितिके लिये गृहकी याचना करो।

१५ शत्रुओंको पृथक् होनेके लिये हम अग्निकी स्तुति करते हैं। सुख और अभयके लिये हम अग्निकी स्तुति करते हैं। सारी प्रजामें अग्नि राजाके समान हैं। वह ऋषियोंके लिये वास-दाता और आह्वानके योग्य हैं।

१ अध्वर्युओ, तुम शीघ्र हव्य प्रस्तुत करो। अग्नि आये हैं। अध्वर्यु फिर यज्ञका सेवन करते हैं। अध्वर्यु हव्य देना जानते हैं।

२ अग्निके साथ यजमानकी मैत्री है। वह संस्थापक होता और तीखी ज्वालावाले अग्निके पास बैठते हैं।

३ यजमानकी मनोरथ-सिद्धिके लिये वे अपने प्रज्ञा-बलसे उन रुद्र (दुःख-घातक) अग्निको सम्मुख स्थापित करनेकी इच्छा करते हैं। वह जिह्वा (स्तुति) द्वारा अग्निको ग्रहण करते हैं।

जाम्यतीतपे धनुर्वयोधा अरुहद्वनम् । दृषदं जिह्वया वधीत् ॥४॥
चरन्वत्सो रुशन्निह निदातारं न विन्दते । वेति स्तोतव अम्ब्यम् ॥५॥
उतो न्वस्य यन्महदश्वावद्योजनं बृहत् । दामा रथस्य ददृशे ॥६॥
दुहन्ति सप्तैकामुप द्वा पञ्च सृजतः । तीर्थे सिन्धोरधि स्वरे ॥७॥
आ दशभिर्विवस्वत इन्द्रः कोशमचुच्यवीत् । खेदया त्रिवृता दिवः ॥८॥
परि त्रिधातुरध्वरं जूर्णिरेति नवीयसी । मध्वा होतारो अञ्जते ॥९॥
सिञ्चन्ति नमसावतमुच्चाचक्रं परिज्मानम् । नीचीनबारमक्षितम् ॥१०॥
अभ्यारमिदद्रयो निषिक्तं पुष्करे मधु । अवतस्य विसर्जने ॥११॥
गाव उपावतावतं मही यज्ञस्य रप्सुदा । उभा कर्णा हिरण्यया ॥१२॥
आ सुते सिञ्चत श्रियं रोदस्योरभिश्रियम् । रसा दधीत वृषभम् ॥१३॥

---

४ अन्नदाता अग्नि सबको लाँघकर रहते हैं। वह अन्तरीक्षको लाँघकर रहते हैं। वह अपनी ज्वालाके द्वारा मेघका वध करते हैं। वह जलके ऊपर चढ़े हैं।

५ वत्सके समान चञ्चल और श्वेतवर्ण अग्नि इस संसारमें निरोधकको नहीं प्राप्त करते हैं। वह स्तोताकी कामना करते हैं।

६ इन अग्निका माहात्म्य-युक्त अश्व-सम्पन्न प्रकाण्ड योजन है—रथकी रस्सी है।

७ शब्दशाली सिन्धु नदके घाटपर सात ऋत्विक् जलका दोहन करते हैं। इनमें दो प्रख्याता अध्वर्यु अन्य पाँच (यजमान, ब्रह्मा, होता, अग्निध्र और स्तोता) को प्रयुक्त करते हैं।

८ सेवक यजमानकी दस अङ्गुलियोंके द्वारा याचित होकर इन्द्रने आकाशमें मेघसे तीन प्रकारकी किरणोंके द्वारा जल-वर्षण कराया।

९ तीन वर्ण (लोहित, शुक्र और कृष्ण) वाले तथा वेगवान् अग्नि अपनी शिखाके साथ यज्ञमें आते हैं। होम-सम्पादक अध्वर्यु लोग मधुके द्वारा मधु (आज्य आदि) के द्वारा उनका पूजन करते हैं।

१० महावीर, ऊपर चक्रसे युक्त, दीप्ति-सम्पन्न, निम्नमुख द्वारवाले, अक्षीण और रक्षक अग्निके ऊपर, अवनत होकर, अध्वर्यु उन्हें सिक्त करते हैं।

११ आदरसे युक्त अध्वर्युगण निकटगामी होकर रक्षक अग्निके विसर्जनके समय विशाल पात्र (उपयमनीपात्र) में मधु-सिञ्चन करते हैं।

१२ गौओ, मन्त्रके द्वारा दुहने योग्य बहुत दूधकी आवश्यकता होनेपर तुमलोग रक्षक (महावीर) अग्निके पास जाओ। अग्निके दोनों कर्ण सोने और चाँदीके हैं।

१३ अध्वर्युओ, दूध दुहे जानेपर द्यावापृथिवीपर आश्रित और मिश्रणयोग्य दूधका सिञ्चन करो। अनन्तर बकरीके दूधमें अग्निको स्थापित करो।

ते जानत स्वमोक्यं सं वत्सासो न मातृभिः ।
मिथो नसन्तजामिभिः ॥१४॥
उप स्रक्वेषु बप्सतः कृण्वते धरुणं दिवि । इन्द्रे अग्ना नमः स्वः ॥१५॥
अधुक्षत् पिप्युषीमिषमूर्जं सप्तपदीमरिः । सूर्यस्य सप्तरश्मिभिः ॥१६॥
सोमस्य मित्रावरुणोदिता सूर आ ददे । तदातुरस्य भेषजम् ॥१७॥
उतो न्वस्य यत् पदं हर्यतस्य निधान्यम् । परि द्यां जिह्वयातनत् ॥१८॥

६२ सूक्त

अश्विद्वय देवता । सप्तवध्रि ऋषि । गायत्री छन्द ।

उदीराथामृतायते युञ्जाथामश्विना रथम् । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१॥
निमिषश्चिज्जवीयसा रथेना यातमश्विना । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥२॥
उप स्तृणीतमत्रये हिमेन घर्ममश्विना । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥३॥

१४ उन्होंने (गौओंने) अपने निवासदाता अग्निको जाना है । जैसे वत्स अपनी मातासे मिलते हैं, वैसे ही गायें अपने बन्धुओंके साथ मिलती हैं ।

१५ शिखा (ज्वाला) के द्वारा भक्षक अग्निका अन्न अग्नि और इन्द्रका पोषण करता और अन्तरीक्ष (अन्तरिक्ष) का उपकार करता है । इन्द्र और अग्निको सारा अन्न दो ।

१६ गमनशील वायु और चञ्चल चरणोंसे युक्त माध्यमिकी वाक् (वचन) से सूर्यकी सात किरणोंके द्वारा वर्द्धित अन्न और रसको अध्वर्यु ग्रहण करता है ।

१७ मित्र और वरुण, सूर्योदय होनेपर सूर्य सोमको स्वीकार करते हैं । वह हमारे (आतुरोंके) लिये हितकर भेषज हैं ।

१८ हर्यत ऋषिका जो स्थान हव्य स्थापनके लिये उपयुक्त है, वहींसे अग्नि अपनी शिखाके द्वारा द्युलोकको व्याप्त करते हैं ।

१ अश्विद्वय, मैं यज्ञाभिलाषी हूँ । मेरे लिये उदित होओ । रथको जोतो । तुम्हारी रक्षा हमारी समीपवर्त्तिनी हो ।

२ अश्विद्वय, निमेषसे भी अधिक वेगवान् रथसे आओ । तुम्हारी रक्षा हमारी समीपवर्त्तिनी हो ।

३ अश्विद्वय, (अग्निमें फेंके हुए) अत्रिके लिये हिम (जल) से घर्म (अग्नि-दहन) का निवारण करो । तुम्हारी रक्षा हमारी समीपवर्त्तिनी हो ।

कुह स्थः कुह जग्मथुः कुह श्येनेव पेतथुः । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥४॥
यदद्य कर्हि कर्हि चिच्छुश्रूयातमिमं हवम् । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥५॥
अश्विना यामहूतमा नेदिष्ठं याम्याप्यम् । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥६॥
अवन्तमत्रये गृहं कृणुतं युवमश्विना । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥७॥
वरेथे अग्निमातपो वदते वल्ग्वत्रये । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥८॥
प्र सप्तवध्रिराशसा धारामग्नेरशायत । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥९॥
इहा गतं वृषण्वसू शृणुतं म इमं हवम् । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१०॥
किमिदं वां पुराणवज्जरतोरिव शस्यते । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥११॥
समानं वां सजात्यं समानो बन्धुरश्विना । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१२॥

४ तुमलोग कहाँ हो ? कहाँ जाते हो ? श्येन पक्षीके समान कहाँ गिरते हो ? तुम्हारी रक्षा हमारी समीपवर्त्तिनी हो ।

५ तुम किस समय, किस स्थानपर, आज हमारे इस आह्वानको सुनोगे, यह हम नहीं जानते ? तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे ।

६ यथासमय अत्यन्त आह्वानके योग्य मैं अश्विद्वयके पास जाता हूँ । उनके निकटस्थित बन्धुओंके पास भी मैं जाता हूँ । तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे ।

७ अश्विद्वय. तुम लोगोंने अत्रिके लिये (जलनेसे बचनेके लिये) रक्षक गृहका निर्माण किया था । तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे ।

८ अश्विद्वय, मनोहर स्तोता अत्रिके लिये अग्निको जलानेसे अलग करो । तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे ।

९ महर्षि सप्तवध्रिने तुम्हारी स्तुतिसे अग्निकी धारा (ज्वाला)को, मञ्जूषा (पेटिका = बाक्स) मेंसे स्वयं बाहर निकाल कर, उसीमें, सुला (पैठा) दिया था । तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे ।

१० वृष्टिदाता और धनी अश्विद्वय, यहाँ आओ और हमारा आह्वान सुनो । तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे ।

११ अश्विद्वय, अतीव वृद्धके समान तुम्हें क्यों बार-बार बुलाना पड़ता है ? तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे ।

१२ अश्विद्वय, तुम दोनोंका उत्पत्ति-स्थान एक है; तुम्हारे बन्धु भी एक समान हैं । तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे ।

यो वां रजांस्यश्विना रथो वियाति रोदसी। अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१३॥

आ नो गव्येभिरश्व्यैः सहस्रैरुप गच्छतम्। अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१४

मा नो गव्येभिरश्व्यैः सहस्रेभिरति ख्यतम्। अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१५॥

अरुणप्सुरुषा अभूदकर्ज्योतिर्ऋतावरी। अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१६॥

अश्विना सु विचाकशद्वृक्षं परशुमाँ इव। अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१७॥

पुरं न धृष्णवा रुज कृष्णया बाधितो विशा। अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१८॥

६३ सूक्त

अग्नि देवता। शेषकी तीन ऋचाओंके देवता श्रुतर्वाकी दानस्तुति है। गोपवन ऋषि। अनुष्टुप् और गायत्री छन्द।

विशोविशो वो अतिथिं वाजयन्तः पुरुप्रियम्।

अग्निं वो दुर्यं वचः स्तुषे शूषस्य मन्मभिः ॥१॥

१३ अश्विद्वय, तुम्हारा रथ द्यावापृथिवी और सारे लोकोंमें घूमता है। तुम्हारी रक्षा हमारी समीपवर्त्तिनी हो।

१४ अश्विद्वय, अपरिमित (सहस्र) गौओं और अश्वोंके साथ हमारे पास आओ। तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

१५ अश्विद्वय, सहस्र गौओं और अश्वोंसे हमारा निवारण नहीं करना (अर्थात् हमें ये सब देना)। तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

१६ अश्विद्वय, उषा शुक्लवर्णकी हैं। वह यज्ञवाली और ज्योतिका निर्माण करनेवाली हैं। तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

१७ जैसे फरसावाला व्यक्ति वृक्ष काटता है, वैसे ही अतीव दीप्तिमान् सूर्य अन्धकारका निवारण करते हैं। मैं अश्विद्वयको बुलाता हूँ। तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

१८ धर्षक सप्तबध्रि, तुम काले पेटक (बाकस)में बन्द थे। पीछे उसे तुमने नगरके समान जला दिया था। तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

१ ऋत्विको और यजमानो, तुमलोग अन्नाभिलाषी हो। सारी प्रजाके अतिथि और बहुलोंके प्रिय अग्निकी, स्तुतिके द्वारा, सेवा करो। मैं तुम्हारे सुखके लिये मननीय स्तोत्रके द्वारा गूढ़ वचनका उच्चारण करता हूँ।

यं जनासो हविष्मन्तो मित्रं न सर्पिरासुतिम् ।
प्रशंसन्ति प्रशस्तिभिः ॥२॥

पन्यांसं जातवेदसं यो देवतात्युद्यता । हव्यान्यैरयद्दिवि ॥३॥

आगन्म वृत्रहन्तमं ज्येष्ठमग्निमानवम् ।
यस्य श्रुतर्वा बृहन्नार्क्षो अनीक एधते ॥४॥

अमृतं जातवेदसं तिरस्तमांसि दर्शतम् । घृताहवनमीड्यम् ॥५॥

सबाधो यं जना इमेऽग्निं हव्येभिरीलते । जुह्वानासो यतस्रुचः ॥६॥

इयं ते नव्यसी मतिरग्ने अधाय्यस्मदा ।
मन्द्र सुजात सुक्रतोऽमूर दस्मातिथे ॥७॥

सा ते अग्ने शन्तमा चनिष्ठा भवतु प्रिया । तया वर्धस्व सुष्टुतः ॥८॥

सा द्युम्नैर्द्युम्निनी बृहदुपोप श्रवसि श्रवः । दधीत वृत्रतूर्ये ॥९॥

---

२ जिन अग्निके लिये घीका होम किया जाता है और जिनको द्रव्यका दान करते हुए स्तुति द्वारा प्रशंसा की जाती है--

३ जो स्तोताके प्रशंसक और जात-धन हैं तथा जो यज्ञमें दिये हविको द्युलोकमें प्रेरित करते हैं--

४ जिनकी ज्वालाओंने ऋक्षपुत्र और महान् श्रुतर्वाको वर्द्धित किया है, उन पापियोंके नाशक और मनुष्योंके हितकर अग्निके पास मैं उपस्थित हुआ हूँ ।

५ अग्नि अमर हैं, जात-धन हैं और स्तवनीय हैं । वह अन्धकारको दूर करते हैं । उनका घृतके द्वारा हवन किया जाता है ।

६ बाधावाले लोग यज्ञ करते और स्रुक् संयत करते हुए हव्यके द्वारा उनकी स्तुति करते हैं ।

७ हृष्ट, शोभन-जन्मा बुद्धिमान् और दर्शनीय अग्नि, हम तुम्हारी यह स्तुति करते हैं ।

८ अग्नि, वह स्तुति अतीव सुखावह, अधिक अन्नवाली और तुम्हारे लिये प्रिय हो । उसके द्वारा तुम भली भाँति स्तुत होकर बढ़ो ।

९ वह स्तुति प्रचुर अन्नवाली है । युद्धमें वह अन्नके ऊपर यथेष्ट अन्न धारण करे ।

अश्वमिद्गां रथप्रां त्वेषमिन्द्रं न सत्पतिम् ।
यस्य श्रवांसि तूर्वथ पन्यम्पन्यं च कृष्टयः ॥१०॥
यं त्वा गोपवनो गिरा चनिष्ठदग्ने अङ्गिरः । स पावक श्रुधी हवम् ॥११॥
यं त्वा जनास ईळते सबाधो वाजसातये । स बोधि वृत्रतूर्ये ॥१२॥
अहं हुवान आर्क्षे श्रुतर्वणि मदच्युति ।
शर्धांसीव स्तुकाविनां मृक्षा शीर्षा चतुर्णाम् ॥१३॥
मां चत्वार आशवः शविष्ठस्य द्रवित्नवः ।
सुरथासो अभि प्रयो वक्षन्वयो न तुग्र्यम् ॥१४॥
सत्यमित्त्वा महेनदि परुष्ण्यव देदिशम् ।
नेमापो अश्वदातरः शविष्ठादस्ति मर्त्यः ॥१५॥

१० जो अग्नि बलके द्वारा शत्रुके अन्न और स्तुत्य धनकी हिंसा करते हैं, उन्हीं प्रदीप्त और रथादिके पूरक अग्निकी, गतिपरायण अश्वके समान तथा सत्पति इन्द्रके सदृश, मनुष्यलोग सेवा करते हैं।

११ अग्नि, गोपवन नामक ऋषिकी स्तुतिसे तुम अन्नदाता हुए थे। तुम सर्वत्र जाने वाले और शोधक हो। तुम गोपवनके आह्वानको सुनो।

१२ बाधा-संयुक्त होनेपर भी लोग, अन्न-प्राप्तिके लिये, तुम्हारी स्तुति करते हैं। तुम युद्धमें जागो।

१३ मैं (ऋषि) बुलाये जानेपर, शत्रु-गर्व-ध्वंसक और ऋक्ष-पुत्र श्रुतर्वा राजाके दिये हुए लोमवाले चार अश्वोंके ऊँचे और लोमवाले मस्तकोंको मैं हाथोंसे धो रहा हूँ।

१४ अतीव अन्नवाले श्रुतर्वा राजाके चार अश्व द्रुतगामी और उत्तम रथवाले होकर, उसी प्रकार अन्नको ढोते हैं, जिस प्रकार अश्विद्वयकी भेजी हुई चार नावोंने तुग्र-पुत्र भुज्युका वहन किया था।

१५ हे महानदी परुष्णी (रावी), हे जल, मैं तुमसे सच्चा कहता हूँ कि, सबसे बली इन श्रुतर्वा राजासे अधिक अश्वोंका दान कोई भी मनुष्य नहीं कर सकता।

६४ सूक्त

अग्नि देवता। आङ्गिराके पुत्र विरूप ऋषि। गायत्री छन्द।

युक्ष्वा हि देवहूतमाँ अश्वाँ अग्ने रथीरिव। नि होता पूर्व्यः सदः ॥१॥

उत नो देव देवाँ अच्छा वोचो विदुष्टरः। श्रद्विश्वा वार्या कृधि ॥२॥

त्वं ह यद्यविष्ठ्य सहसः सूनवाहुत। ऋतावा यज्ञियो भुवः ॥३॥

अयमग्निः सहस्रिणो वाजस्य शतिनस्पतिः। मूर्धा कवी रयीणाम् ॥४॥

तं नेमिमृभवो यथा नमस्व सहूतिभिः। नेदीयो यज्ञमङ्गिरः ॥५॥

तस्मै नूनमभिद्यवे वाचा विरूप नित्यया। वृष्णे चोदस्व सुष्टुतिम् ॥६॥

कमु ष्विदस्य सेनयाग्नेरपाकचक्षसः। पणिं गोषु स्तरामहे ॥७॥

मा नो देवानां विशः प्रस्नातीरिवोस्राः। कृशं न हासुरघ्न्याः ॥८॥

मा नः समस्य दूढ्यः परिद्वेषसो अंहतिः। ऊर्मिर्न नावमावधीत् ॥९॥

---

१ अग्नि, सारथिके समान तुम देवोंको बुलानेमें कुशल घोड़ोंका रथमें जोतो। तुम होता हो। प्रधान होकर तुम बैठो।

२ देव, तुम देवताओंके यहाँ हमें "विद्वत्श्रेष्ठ" कहकर हमारे वरणीय धनोंको देवोंके पास भेजो।

३ तरुणतम, बलके पुत्र और आहूत अग्नि, तुम सत्य वाले और यज्ञ-योग्य हो।

४ यह अग्नि सौ और हजार तरहके अन्नोंके स्वामी, शिरः-संयुक्त, कवि (मेधावी) और धनपति हैं।

५ गमनशील अग्नि जैसे ऋभु लोग रथ-नेमको ले आते हैं, वैसे ही तुम भी एकत्र आहूत देवोंके साथ अतीव निकट-वर्ती यज्ञको ले आओ।

६ विशिष्ट रूपवाले ऋषि, तुम नित्य वाक्यके द्वारा तृप्त और अभीष्टवर्षी अग्निकी स्तुति करो।

७ गायोंके लिये हम विशाल चक्षुवाले अग्निकी ज्वालाके द्वारा किस पणिका वध करेंगे ?

८ हम देवोंके परिचारक हैं। जैसे दूध देनेवाली गायोंको नहीं छोड़ा जाता और गायें अपने छोटे बच्चेको नहीं छोड़तीं, वैसे ही अग्नि हमें न छोड़ें।

९ जैसे समुद्रकी तरङ्ग नौकाको बाधा देती है, वैसे ही शत्रुओंकी दुष्ट बुद्धि हमें बाधा न दे।

नमस्ते अग्न ओजसे गृणन्ति देव कृष्टयः । अमैरमित्रमर्दय ॥१०॥
कुवित् सु नो गविष्टयेऽग्ने संवेषिषो रयिम् । उरुकृदुरु णस्कृधि ॥११॥
मा नो अस्मिन्महाधने परा वर्ग्भारभृद्यथा । संवर्गं सं रयिं जय ॥१२॥
अन्यमस्मद्भिया इयमग्ने सिषक्तु दुच्छुना । वर्धा नो अमवच्छवः ॥१३॥
यस्याजुषन्नमस्विनः शमीमदुर्मखस्य वा । तं घेदग्निर्वृधावति ॥१४॥
परस्या अधि संवतोऽवराँ अभ्या तर । यत्राहमस्मि ताँ अव ॥१५॥
विद्मा हि ते पुरा वयमग्ने पितुर्यथावसः । अधा ते सुम्नमीमहे ॥१६॥

६५ सूक्त

इन्द्र देवता । कण्वगोत्रीय कुरुसुति ऋषि । गायत्री छन्द ।

इमं नु मायिनं हुव इन्द्रमीशानमोजसा । मरुत्वन्तं न वृञ्जसे ॥१॥

१० अग्निदेव, मनुष्य बल-प्राप्तिके लिये तुम्हारे निमित्त नमस्कार करते हैं। तुम बलके द्वारा शत्रु-संहार करो।

११ अग्नि, हमें गायें खोजनेके लिये प्रचुर धन दो। तुम समृद्धिकर्त्ता हो। हमें समृद्ध करो।

१२ भारवाहक व्यक्तिके समान तुम हमें इस संग्राममें नहीं छोड़ना। शत्रुओंके द्वारा धन छिन्न हो रहा है। उसे हमारे लिये जीतो।

१३ अग्नि, ये बाधाएँ स्तुति-विहीनके लिये भय उत्पन्न करें। तुम हमारे बलसे युक्त वेगको वर्द्धित करो।

१४ नमस्कारवाले अथवा यज्ञ-युक्त जिस व्यक्तिका कर्म सेवा करता है, उसीके पास विशेषतया अग्नि जाते हैं।

१५ शत्रु-सेनासे अलग हमारी सेनाओंको अभिमुखीन करो। जिनके बीच मैं हूँ, उनकी रक्षा करो।

१६ अग्नि, तुम पालक हो। पहलेके समान इस समय तुम्हारे रक्षणको हम जानते हैं। अब तुम्हारे सुखकी हम याचना करते हैं।

१ मैं शत्रु-छेदनके लिये प्राज्ञ इन्द्रको बुलाता हूँ। वह अपने बलसे सबके स्वामी और मरुतोंवाले हैं।

अयमिन्द्रो मरुत्सखा वि वृत्रस्याभिनच्छिरः । वज्रेण शतपर्वणा ॥२॥
वावृधानो मरुत्सखेन्द्रो वि वृत्रमैरयत् । सृजन्त्समुद्रिया अपः ॥३॥
अयं ह येन वा इदं स्वर्मरुत्वता जितम् । इन्द्रेण सोमपीतये ॥४॥
मरुत्वन्तमृजीषिणमोजस्वन्तं विरप्शिनम् । इन्द्रं गीर्भिर्हवामहे ॥५॥
इन्द्रं प्रत्नेन मन्मना मरुत्वन्तं हवामहे । अस्य सोमस्य पीतये ॥६॥
मरुत्वाँ इन्द्र मीढ्वः पिबा सोमं शतक्रतो । अस्मिन्यज्ञे पुरुष्टुत ॥७॥
तुभ्येदिन्द्र मरुत्वते सुताः सोमासो अद्रिवः । हृदा हूयन्त उक्थिनः ॥८॥
पिबेदिन्द्र मरुत्सखा सुतं सोमं दिविष्टिषु । वज्रं शिशान ओजसा ॥९॥
उत्तिष्ठन्नोजसा सह पीत्वी शिप्रे अवेपयः । सोममिन्द्र चमू सुतम् ॥१०॥
अनु त्वा रोदसी उभे क्रक्षमाणमकृपेताम् । इन्द्र यद्दस्युहाभवः ॥११॥

---

२ इन इन्द्रने, मरुतोंके साथ, सौ पर्वों (जोड़ों) वाले वज्रसे वृत्रका शिर काटा था।

३ इन्द्रने बढ़कर और मरुतोंसे मिलकर वृत्रको विदीर्ण किया था। उन्होंने अन्तरीक्षको जल बनाया था।

४ जिन्होंने मरुतोंसे युक्त होकर, सोमपानके लिये, स्वर्गको जीता था, वे ही ये इन्द्र हैं।

५ इन्द्र मरुतोंसे युक्त, ऋजीष (तृतीय सवनमें पुनः अभिषुत सोमका शेष भाग) वाले, सोम-संयुक्त, ओजस्वी और महान् हैं। हम स्तुति द्वारा उन्हें बुलाते हैं।

६ मरुतोंसे युक्त इन्द्रको हम, सोमपानके लिये, प्राचीन स्तोत्रके द्वारा बुलाते हैं।

७ फल-वर्षक, अनेकों द्वारा आहूत और शतक्रतु इन्द्र, मरुतोंके साथ तुम इस यज्ञमें सोम-पान करो।

८ वज्रधर इन्द्र, तुम्हारे और मरुतोंके लिये सोम अभिषुत हुआ है। उक्थ मन्त्रोंका उच्चारण करनेवाले व्यक्ति भक्तिके साथ तुम्हें बुलाते हैं।

९ इन्द्र, तुम मरुतोंके मित्र हो तुम हमारे स्वर्ग देनेवाले यज्ञमें अभिषुत सोमका पान करो और बलके द्वारा वज्रको तेज करो।

१० अभिषवण-फलकों (चमुओं) पर अभिषुत सोमको पीते हुए बलके साथ खड़े होकर दोनों जबड़ोंको कँपाओ।

११ तुम शत्रुओंका विनाश करनेवाले हो। उसी समय द्यावापृथिवी, दोनों ही तुम्हारी कल्पना करते हैं, जिस समय तुम दस्युओंका विनाश करते हो।

वाचमष्टापदीमहं नवस्रक्तिमृतस्पृशम् । इन्द्रात् परि तन्वं ममे ॥१२॥

६६ सूक्त

इन्द्र देवता । कुरुसुति ऋषि । गायत्री, बृहती और सतोबृहती छन्द ।

जज्ञानो नु शतक्रतुर्वि पृच्छदिति मातरम् । क उग्राः के ह शृण्विरे ॥१॥

आदीं शवस्यब्रवीदौर्णवाभमहीशुवम् । ते पुत्र सन्तु निष्टुरः ॥२॥

समित्तान्वृत्रहाखिदत् खे अराँइव खेदया । प्रवृद्धो दस्युहाभवत् ॥३॥

एकया प्रतिधापिबत् साकं सरांसि त्रिंशतम् । इन्द्रः सोमस्य काणुका ॥४॥

अभि गन्धर्वमतृणदबुध्नेषु रजःस्वा । इन्द्रो ब्रह्मभ्य इद्वृधे ॥५॥

निराविध्यद्गिरिभ्य आ धारयत् पक्वमोदनम् । इन्द्रो बुन्दं स्वाततम् ॥६॥

शतब्रध्न इषुस्तव सहस्रपर्ण एक इत् । यमिन्द्र चकृषे युजम् ॥७॥

तेन स्तोतृभ्य आ भर नृभ्यो नारिभ्यो अत्तवे । सद्यो जात ऋभुष्ठिर ॥८॥

---

१२ आठ और नौ दिशाओं (चार दिशाएँ, चार कोण और आदित्य) में यज्ञ-स्पर्श करनेवाली स्तुति भी इन्द्रसे कम है। मैं उसी स्तुतिको करता हूँ ।

१ जन्म लेते ही बहुकर्म-शाली होकर इन्द्रने अपनी मातासे पूछा, "उग्र कौन है और प्रसिद्ध कौन है ?"

२ शवसी (बलवती माता) ने उसी समय कहा—"पुत्र, ऊर्णनाभ, अहीशुव आदि अनेक हैं। उनका निस्तार करना उपयुक्त है।"

३ वृत्रघ्न इन्द्रने रथचक्रकी लकड़ियों (अरों) के समान एक साथ ही रस्सीसे उन्हें खींचा और दस्युओंका हनन करके प्रवृद्ध हुए।

४ इन्द्रने एक साथ ही सोमसे पूर्ण तीस कमनीय पात्रोंको पी डाला।

५ इन्द्रने मूल-शून्य अन्तरीक्षमें ब्राह्मणोंके बर्द्धनके लिये चारों ओरसे मेघको मारा।

६ मनुष्योंके लिये परिपक्व अन्नका निर्माण करते हुए इन्द्रने विराट् शरको लेकर मेघको छेदा था।

७ इन्द्र, तुम्हारा एक मात्र वाण सौ अग्र भागोंसे युक्त और सहस्र पात्रोंसे संयुक्त है। तुम इसी वाणको सहायक बनाते हो।

८ स्तोताओं, पुत्रों और स्त्रियोंके भक्षणके लिये उसी वाणके द्वारा यथेष्ट धन ले आओ। जन्मके साथ ही तुम प्रभूत और स्थिर हो।

एता च्यौत्नानि ते कृता वर्षिष्ठानि परीणसा । हृदा वीड्वधारयः ॥९॥

विश्वेत्ता विष्णुराभरदुरुक्रमस्त्वेषितः ।

शतं महिषान् क्षीरपाकमोदनं वराहमिन्द्र एमुषम् ॥१०॥

तुविक्षं ते सुकृतं सूमयं धनुः साधुर्बुन्दो हिरण्ययः ।

उभा ते बाहू रण्या सुसंस्कृत ऋदूपे चिदृदूवृधा ॥११॥

६७ सूक्त

इन्द्र देवता । कुरुसुति ऋषि । गायत्री और बृहती छन्द ।

पुरोलाशं नो अन्धस इन्द्र सहस्रामा भर । शता च शूर गोनाम् ॥१॥

आ नो भर व्यञ्जनं गामश्वमभ्यञ्जनम् । सचा मना हिरण्यया ॥२॥

उत नः कर्णशोभना पुरूणि धृष्णवा भर । त्वं हि शृण्विषे वसो ॥३॥

नकीं वृधीक इन्द्र ते न सुषा न सुदा उत । नान्यस्त्वच्छूर वाघतः ॥४॥

---

९ इन्द्र, तुमने ये सब अतीव प्रवृद्ध और चारो ओर फैले हुए पर्वतोंको बनाया है। बुद्धिमें उन्हें स्थिर भावसे धारण करो।

१० इन्द्र, तुम्हारा जो सब जल है, उसे विष्णु (आदित्य) प्रदान करते हैं। विष्णु आकाशमें भ्रमण करनेवाले (बहु-गति) और तुम्हारे द्वारा प्रेरित हैं। इन्द्रने सौ महिषों (पशुओं), क्षीर-पक्व अन्न और जल चुरानेवाले मेघ (वराह) को भी दिया ।

११ तुम्हारा धनुष् बहुत बाण फेंकनेवाला, सुनिर्मित और सुखा ह है । तुम्हारा बाण सोनेका है। तुम्हारी दोनों भुजाएं रमणीय, मर्मभेदक, सुसंस्कृत और यज्ञवर्द्धक हैं।

---

१ शूर इन्द्र, पुरोडाश नामके अन्नको स्वीकार कर सौ और सहस्र गायें हमें दो।

२ इन्द्र, तुम हमें गाय, अश्व और तैल दो । साथ ही मनोहर और हिरण्मय अलङ्कार भी दो।

३ शत्रुओंको रगड़नेवाले और वासदाता इन्द्र, तुम्हीं सुने जाते हो। तुम हमें बहु-सङ्ख्यक कर्णाभरण प्रदान करो।

४ शूर इन्द्र, तुम्हारे सिवा अन्य वर्द्धक नहीं है। तुम्हारी अपेक्षा संग्राममें दूसरा कोई सम्भक्त नहीं है—कोई उत्तम दाता भी नहीं है। तुम्हारे सिवा ऋत्विकोंका कोई नेता भी नहीं है।

नकीमिन्द्रो निकर्तवे न शक्रः परिशक्तवे । विश्वं शृणोति पश्यति ॥५॥

स मन्युं मर्त्यानामदब्धो नि चिकीषते । पुरा निदश्चिकीषते ॥६॥

क्रत्व इत् पूर्णमुदरं तुरस्यास्ति विधतः । वृत्रघ्नः सोमपाव्नः ॥७॥

त्वे वसूनि सङ्गता विश्वा च सोम सौभगा । सुदात्वपरिह्वृता ॥८॥

त्वामिद्यवयुर्मम कामो गव्युर्हिरण्ययुः । त्वामश्वयुरेषते ॥९॥

तवेदिन्द्राहमाशसा हस्ते दात्रं चना ददे ।

दिनस्य वा मघवन्त्सम्भृतस्य वा पूर्धि यवस्य काशिना ॥१०॥

६८ सूक्त

सोम देवता । कृत्नु ऋषि । गायत्री और अनुष्टुप् छन्द ।

अयं कृत्नुरगृभीतो विश्वजिदुद्भिदित् सोमः । ऋषिर्विप्रः काव्येन ॥१॥

५ इन्द्र किसीका तिरस्कार नहीं करते । इन्द्र किसीसे हार नहीं सकते । वह संसारको देखते और सुनते हैं ।

६ इन्द्रका बध मनुष्य नहीं कर सकते । वह क्रोधको मनमें स्थान नहीं देते । निन्दाके पूर्व ही निन्दाको स्थान नहीं देते ।

७ क्षिप्रकारी, वृत्रघ्न और सोमपाता इन्द्रका उदर सेवकके कर्मद्वारा ही पूर्ण है ।

८ इन्द्र, तुममें सारे धन सङ्गत हैं । सोमपाता इन्द्र, तुममें समस्त सौभाग्य सङ्गत हैं । सुन्दर दान सदा कुटिलतासे शून्य हुआ करता है ।

९ मेरा मन यव (जौ), गौ, सुवर्ण और अश्वका अभिलाषी होकर तुम्हारे ही पास जाता है ।

१० इन्द्र, मैं तुम्हारी आशासे ही हाथोंमें दात्र (खेत काटनेका हथियार) धारण करता हू । पहले काटे हुए अथवा पूर्व संगृहीत जौकी मुष्टिसे आशाको पूर्ण करो ।

१ यह सोम कर्ता हैं । कोई इनका ग्रहण नहीं कर सकता । यह विश्वजित् और उद्भिद् नामक सोम-यज्ञोंके निष्पादक हैं । यह ऋषि (ज्ञानी), मेधावी और काव्य (स्तोत्र) के द्वारा स्तुत्य हैं ।

अभ्यूर्णोति यन्नग्नं भिषक्ति विश्वं यत्तुरम् ।
प्रेमन्धः ख्यन्निः श्रोणो भूत् ॥२॥

त्वं सोम तनूकृद्भ्यो द्वेषोभ्योऽन्यकृतेभ्यः । उरु यन्तासि वरूथम् ॥३॥

त्वं चित्ती तव दक्षैर्दिव आपृथिव्या ऋजीषिन् । यावीरघस्य चिद्द्वेषः ॥४॥

अर्थिनो यन्ति चेदर्थं गच्छानिद्ददुषो रातिम् । ववृज्युस्तृष्यतः कामम् ॥५॥

विदद्यत् पूर्व्यं नष्टमुदीमृतायुमीरयत् । प्रेमायुस्तारीदतीर्णम् ॥६॥

सुशेवो नो मृलयाकुरदृप्तक्रतुरवातः । भवा नः सोम शं हृदे ॥७॥

मा नः सोम सं वीविजो मा वि बीभिषथा राजन् ।
मा नो हार्दि त्विषा वधीः ॥८॥

अव यत् स्वे सधस्थे देवानां दुर्मतीरीक्षे ।
राजन्नप द्विषः सेध मीढ्वो अप स्त्रिधः सेध ॥९॥

---

२ जो नग्न है, उसे सोम ढकते हैं। जो रोगी है, उसे नीरोग करते हैं। वह सन्नद्ध रहनेपर भी दर्शन करते हैं, यह पङ्गु होकर भी गमन करते हैं।

३ सोम, तुम शरीरको कृश करनेवाले अन्यकृतों (राक्षसों)के अप्रिय कार्योंसे रक्षा करते हो।

४ हे ऋजीष (तृतीय सवनमें अभिषुत सोमका शेष भाग)वाले सोम, तुम प्रज्ञा और बलके द्वारा द्युलोक और पृथिवीके यहाँसे हमारे शत्रुके कायको पृथक् करो।

५ यदि धनेच्छु लोग धनीके पास जाते हैं, तो दाताका दान मिलता और भिक्षुककी अभिलाषा भली भाँति पूर्ण होती है।

६ जिस समय पुराना धन प्राप्त किया जाता है, उस समय यज्ञाभिलाषीको प्रेरित किया जाता है। तभी दीर्घ जीवन प्राप्त किया जाता है।

७ सोम, तुम हमारे हृदयमें सुन्दर, सुखकर, यज्ञ-सम्पादक, निश्चल और मङ्गलकर हो।

८ सोम, तुम हमें चञ्चलाङ्ग नहीं करना। राजन्, हमें डराना नहीं। हमारे हृदयमें प्रकाशके द्वारा वध नहीं करना।

९ तुम्हारे गृहमें देवोंकी दुर्बुद्धि न प्रवेश करे। राजन्, शत्रुओंको दूर करो। सोमरसका सेचन करनेवाले हिंसकोंको मारो।

६६ सूक्त

इन्द्र देवता। नोधाके पुत्र एकद्यू ऋषि। गायत्री और त्रिष्टुप् छन्द।

नह्य न्यं बलाकरं मर्डितारं शतक्रतो। त्वं न इन्द्र मृलय ॥१॥

यो नः शश्वत् पुराविथामृध्रो वाजसातये। स त्वं न इन्द्र मृलय ॥२॥

किमङ्ग रध्रचोदनः सुन्वानस्यावितेदसि। कुवित् स्विन्द्र णः शकः ॥३॥

इन्द्र प्र णो रथमव पश्चाच्चित् सन्तमद्रिवः। पुरस्तादेनं मे कृधि ॥४॥

हन्तो नु किमाससे प्रथमं नो रथं कृधि। उपमं वाजयु श्रवः ॥५॥

अवा नो वाजयुं रथं सुकरं ते किमित् परि।

अस्मान्त्सु जिग्युषस्कृधि ॥६॥

इन्द्र दृह्यस्व पूरसि भद्रा त एति निष्कृतम्। इयं धीर्ऋत्वियावती ॥७॥

मा सीमवद्य आ भागुर्वी काष्ठा हितं धनम्। अपावृक्ता अरत्नयः ॥८॥

---

१ इन्द्र, तुम्हारे सिवा अन्य सुखदाताको मैं बहुमान नहीं प्रदान करता हूँ; इसलिये हे शतक्रतो, सुख दो।

२ जिन अहिंसक इन्द्रने पहले हमें अन्न-प्राप्तिके लिये बचाया था, वह हमें सदा सुखी करें।

३ इन्द्र, तुम आराधकको प्रवर्त्तित करो। तुम अभिषव-कर्त्ताके रक्षक हो। फलतः हमें बहु-धन दो।

४ इन्द्र, तुम हमारे पीछे खड़े रथकी रक्षा करो। वज्रधर इन्द्र, उसे सामने ले आओ।

५ शत्रु-हन्ता इन्द्र, इस समय तुम क्यों चुप हो? हमारे रथको मुख्य करो। हमारा अन्नाभिलाषी अन्न तुम्हारे पास है।

६ इन्द्र, हमारे अन्नाभिलाषी रथकी रक्षा करो। तुम्हारा क्या कर्त्तव्य है? हमें संग्राममें सब तरहसे विजयी बनाओ।

७ इन्द्र, दृढ़ होओ। तुम नगरके समान हो। मङ्गलमयी स्तुतिक्रिया यथासमय तुम्हारे पास जाती है। तुम यज्ञ-सम्पादक हो।

८ निन्दा-पात्र व्यक्ति हमारे पास उपस्थित न हो। विशाल दिशाओंमें निहित धन हमारा हो। शत्रु विनष्ट हों।

तुरीयं नाम यज्ञियं यदा करस्तदुश्मसि । आदित् पतिर्न ओहसे ॥९॥

अवीवृधद्वो अमृता अमन्दीदेकद्यूर्देवा उत याश्च देवीः ।
तस्मा उ राधः कृणुत प्रशस्तं प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् ॥१०॥

९ अनुवाक । ७० सूक्त

इन्द्र देवता । कण्वगोत्रीय कुसीदी ऋषि । गायत्री छन्द ।

आ तू न इन्द्र क्षुमन्तं चित्रं ग्राभं सङ्गृभाय । महाहस्ती दक्षिणेन ॥१॥
विद्मा हि त्वा तुविकूर्मिं तुविदेष्णं तुवीमघम् । तुविमात्रमवोभिः ॥२॥
नहि त्वा शूर देवा न मर्तासो दित्सन्तम् । भीमं न गां वारयन्ते ॥३॥
एतो न्विन्द्रं स्तवामेशानं वस्वः स्वराजम् । न राधसा मर्धिषन्नः ॥४॥
प्र स्तोषदुप गासिषच्छ्रवत् साम गीयमानम् । अभि राधसा जुगुरत् ॥५॥
आ नो भर दक्षिणेनाभि सव्येन प्र मृश । इन्द्र मा नो वसोर्निर्भाक् ॥६॥

---

९ इन्द्र, तुमने जिस समय यज्ञ-सम्बन्धी चतुर्थ नाम धारण किया, उसी समय हमने उसकी कामना की। तुम हमारे रक्षक हो। तुम्हीं हमारा पालन करते हो।

१० अमर देवो, एकद्यु ऋषि तुम्हें और तुम्हारी पत्नियोंको वर्द्धित और तृप्त करते हैं। हमारे लिये प्रचुर धन दो। कर्म-धन इन्द्र प्रातःकाल ही आगमन करें।

---

१ इन्द्र, तुम महान् हस्त (हाथ) वाले हो। तुम हमें देनेके लिये शब्दवान् (स्तुत्य), विचित्र और ग्रहणके योग्य धन दक्षिण हाथमें धारण करो।

२ इन्द्र, हम तुम्हें जानते हैं। तुम बहुकर्मा, बहुदाता, बहुधनी और बहुरक्षावाले हो।

३ शूर इन्द्र, तुम्हारे दानेच्छु होनेपर देव और मनुष्य, भयङ्कर वृषभके समान, तुम्हें बाधा नहीं पहुँचा सकते।

४ मनुष्यो, आओ और इन्द्रकी स्तुति करो। वह स्वयं दीप्यमान धनके स्वामी हैं। अन्य धनीके समान वह धनके द्वारा बाधा न दें।

५ इन्द्र, तुम्हारी स्तुतिकी प्रशंसा करें और तदनुरूप गान करें। वह सामवेदीय स्तोत्रका श्रवण करें। धन-युक्त होकर हमारे ऊपर अनुग्रह करें।

६ इन्द्र, हमारे लिये आगमन करो। दोनों हाथोंसे दान करो। हमें धनसे अलग नहीं करना।

उपक्रमस्वाभर धृषता धृष्णो जनानाम् । अदाशूष्टरस्य वेदः ॥७॥

इन्द्र य उ नु ते अस्ति वाजो विप्रेभिः सनित्वः ।

अस्माभिः सु तं सनुहि ॥८।

सद्योजुवस्ते वाजा अस्मभ्यं विश्वश्चन्द्राः । वशैश्च मक्षू जरन्ते ॥९॥

---

७ इन्द्र, तुम धनके पास जाओ। शत्रुजेता इन्द्र, जो मनुष्योंमें अदाता (दानशून्य) है, उसका धन ले आओ ।

८ इन्द्र, जो धन ब्राह्मणों (विप्रों)के द्वारा भजनीय (आश्रयणीय) है और जो धन तुम्हारा है, उसे माँगनेपर हमें दो।

९ इन्द्र, तुम्हारा अन्न हमारे पास शीघ्र आवे। वह अन्न सबके लिये प्रसन्नता-दायक है। नाना-विध लालसाओंसे युक्त होकर हमारे स्तोतालोग शीघ्र ही तुम्हारी स्तुति करते हैं।

पञ्चम अध्याय समाप्त

षष्ठ अध्याय

७१ सूक्त

इन्द्र देवता। कण्वपुत्र कुसीदी ऋषि। गायत्री छन्द।

आ प्र द्रव परावतोऽर्वावतश्च वृत्रहन्। मध्वः प्रति प्रभर्मणि ॥१॥
तीव्राः सोमास आ गहि सुतासो मादयिष्णवः। पिबा दधृग्यथोचिषे ॥२॥
इषा मन्दस्वादु तेऽरं वराय मन्यवे। भुवत्त इन्द्र शं हृदे ॥३॥
आ त्वशत्रवा गहि न्युक्थानि च हूयसे। उपमे रोचने दिवः ॥४॥
तुभ्यायमद्रिभिः सुतो गोभिः श्रीतो मदाय कम्। प्र सोम इन्द्र हूयते ॥५॥
इन्द्र श्रुधि सु मे हवमस्मे सुतस्य गोमतः। वि पीतिं तृप्तिमश्नुहि ॥६॥
य इन्द्र चमसेष्वा सोमश्चमूषु ते सुतः। पिबेदस्य त्वमीशिषे ॥७॥

---

१ वृत्रघ्न इन्द्र, यज्ञके मदकर सोमके लिये दूर और समीपके स्थानोंसे आओ।

२ शीघ्र मद (नशा) करनेवाला सोम अभिषुत हुआ है। आओ, पियो और मत्त होकर उसकी सेवा करो।

३ सोम-रूप अन्नके द्वारा मत्त होओ। वह शत्रुको दूर करनेवाले क्रोधके लिये यथेष्ट हो। तुम्हारे हृदयमें सोम सुखकर हो।

४ शत्रु-शून्य इन्द्र, शीघ्र आओ; क्योंकि तुम द्युलोकस्थ देवोंसे प्रकाशमान समीपस्थ यज्ञमें उक्थ मन्त्रोंके द्वारा बुलाये जा रहे हो।

५ इन्द्र, यह सोम पत्थरसे प्रस्तुत किया गया है। यह क्षीरादिके द्वारा मिलाया जाकर तुम्हारे आनन्दके लिये अग्निमें हुत हो रहा है।

६ इन्द्र, मेरा आह्वान सुनो। हमारे द्वारा अभिषुत और गव्य-मिश्रित सोम पियो और विविध प्रकारकी तृप्ति प्राप्त करो।

७ इन्द्र, जो अभिषुत सोम चमस और चमू नामके पात्रोंमें है, उसे पियो। तुम ईश्वर हो, इसलिये पियो।

यो अप्सु चन्द्रमाइव सोमश्चमूषु ददृशे । पिबेदस्य त्वमीशिषे ॥८॥
यं त श्येनः पदाभरत्तिरो रजांस्यस्पृतम् । पिबेदस्य त्वमीशिषे ॥९॥

७२ सूक्त

विश्वदेवगण देवता । कुसीदी ऋषि । गायत्री छन्द ।

देवानामिदवो महत्तदा वृणीमहे वयम् । वृष्णामस्मभ्यमूतये ॥१॥
ते नः सन्तु युजः सदा वरुणो मित्रो अर्यमा । वृधासश्च प्रचेतसः ॥२॥
अति नो विष्पिता पुरु नौभिरपो न पर्षथ । यूयमृतस्य रथ्यः ॥३॥
वामं नो अस्त्वर्यमन् वामं वरुण शंस्यम् । वामं ह्यावृणीमहे ॥४॥
वामस्य हि प्रचेतस ईशानासो रिशादसः । नेमादित्या अघस्य यत् ॥५॥

८ जलमें चन्द्रमाके समान चमूमें जो सोम दिखाई दे रहा है, तुम ईश्वर हो; इसलिये उसे पियो ।

९ श्येन पक्षीका रूप धारण करके गायत्री जो अन्तरिक्षस्थ सोम रक्षक गन्धर्वोंको तिरस्कृत करते हुए दोनों सवनोंमें सोम ले आया थी, इन्द्र, तुम ईश्वर हो, उसे पियो ।

१ देवो, हम अपने पालनके लिये तुम्हारी काम-वर्षिणी महारक्षाकी प्राप्तिके निमित्त प्रार्थना करते हैं ।

२ देवो वरुण, मित्र और अर्यमा सदा हमारे सहायक हों। वे शोभन स्तुतिवाले और हमारे वर्द्धक हों।

३ सत्य-नेता देवो, नौकाके द्वारा जलके समान हमें विशाल और अनन्त शत्रु-सेनाके पार ले जाओ ।

४ अर्यमा हमारे पास भजनीय धन हो । वरुण, प्रशंसनीय धन हमारे यहाँ हो । हम भजनीय (व्यवहारके उपयुक्त) धनके लिये प्रार्थना करते हैं ।

५ प्रकृष्ट ज्ञानवाले और शत्रु-भक्षक देवो, तुम भजनीय धनके स्वामी हो। आदित्यो, पाप-सम्बन्धी जो है, वह हमारे पास आवे ।

वयमिद्धः सुदानवः क्षियन्तो यान्तो अध्वन्ना । देवा वृधाय हूमहे ॥६॥

अधि न इन्द्रैषां विष्णो सजात्यानाम् । इता मरुतो अश्विना ॥७॥

प्र भ्रातृत्वं सुदानवोऽध द्विता समान्या । मातुर्गर्भे भरामहे ॥८॥

यूयं हि ष्ठा सुदानव इन्द्रज्येष्ठा अभिद्यवः । अधा चिद्व उत ब्रुवे ॥९॥

७३ सूक्त

अग्नि देवता । कविके पुत्र उशना ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम् । अग्निं रथं न वेद्यम् ॥१॥

कविमिव प्रचेतसं यं देवासो अध द्विता । नि मर्त्येष्वादधुः ॥२॥

त्वं यविष्ठ दाशुषो नॄँः पाहि शृणुधी गिरः । रक्षा तोकमुत त्मना ॥३॥

कया ते अग्ने अङ्गिर ऊर्जो नपादुपस्तुतिम । वराय देव मन्यवे ॥४॥

---

६ सुन्दर दानवाले देवो, हम चाहे घरमें, चाहे मार्गमें, हव्य-वर्द्धनके लिये तुम्हें ही बुलाते हैं ।

७ इन्द्र, विष्णु, मरुतो और अश्विद्वय, समान जातिवालोंमें हमारे ही पास आओ ।

८ सुन्दर-दान-शील देवो, आनेके पश्चात्, हम पहले तुम सब लोगोंको प्रकट करेंगे और अनन्तर मातृ-गर्भसे तुमलोगोंके दो-दो करके जन्म लेनेके कारण तुममें जो बन्धुत्व है, उसे भी प्रकाशित करेंगे ।

९ तुम दानशील हो । तुममें इन्द्र श्रेष्ठ हैं । तुम दीप्तिसे युक्त हो । तुमलोग यज्ञमें रहो । अनन्तर मैं तुम्हारा स्तव करता हूँ ।

---

१ प्रियतम अतिथि और मित्रके समान प्रिय तथा रथके समान धन-वाहक अग्निकी, तुम्हारे लिये, मैं स्तुति करता हूँ ।

२ देवोंने जिन अग्निको, प्रकृष्ट ज्ञानवाले पुरुषके समान, मनुष्योंमें दो प्रकारसे (द्यावा और पृथिवीमें) स्थापित किया है, उनकी मैं स्तुति करता हूँ ।

३ तरुणतम अग्नि, हविर्दाताके मनुष्योंका पालन करो । स्तुति सुनो और स्वयं ही हमारी सन्तानकी रक्षा करो ।

४ अङ्गिरा (गतिशील) बलके पुत्र और देव अग्नि, तुम सबके वरणीय (स्वीकारके योग्य) और शत्रुओंके सामने जानेवाले हो । कैसे स्तोत्रसे मैं तुम्हारी स्तुति करूँ ?

२२

दाशेम कस्य मनसा यज्ञस्य सहसो यहो । कदु वोच इदं नमः ॥५॥
अधा त्वं हि नस्करो विश्वा अस्मभ्यं सुक्षितीः । वाजद्रविणसो गिरः ॥६॥
कस्य नूनं परीणसो धियो जिन्वसि दम्पते । गोषाता यस्य ते गिरः ॥७॥
तं मर्जयन्त सुक्रतुं पुरोयावानमाजिषु । स्वेषु क्षयेषु वाजिनम् ॥८॥
क्षेति क्षेमेभिः साधुभिर्नकिर्यं घ्नन्ति हन्ति यः । अग्ने सुवीर एधते ॥९॥

७४ सूक्त

अश्विद्वय देवता । आङ्गिरस कृष्ण ऋषि । गायत्री छन्द ।

आ मे हवं नासत्याश्विना गच्छतं युवम् । मध्वः सोमस्य पीतये ॥१॥
इमं मे स्तोतमश्विनेमं मे शृणुतं हवम् । मध्वः सोमस्य पीतये ॥२॥
अयं वां कृष्णो अश्विना हवते वाजिनीवसू । मध्वः सोमस्य पीतये ॥३॥

५ बल-पुत्र अग्नि, कैसे यजमानके मनके अनुकूल हम तुम्हें हव्य देंगे ? कब इस नमस्कारका मैं उच्चारण करूँगा ?

६ तुम्हीं, हमारे लिये, हमारी सारी स्तुतिओंको उत्तम गृह, धन और अन्नवाली करो ।

७ दम्पती-रूप (गार्हपत्य) अग्नि, तुम इस समय किसके कर्मको प्रसन्न (सफल) करते हो ? तुम्हारी स्तुतियाँ धन देनेवाली हैं ।

८ अपने घरमें यजमान लोग सुन्दर बुद्धिवाले, सुकृती युद्धमें अग्रगामी और बली अग्निकी पूजा करते हैं ।

९ अग्नि, जो व्यक्ति साधक रक्षणके साथ अपने गृहमें रहता है, जिसे कोई मार नहीं सकता और जो शत्रुको मारता है, वही सुन्दर पुत्र-पौत्रसे युक्त होकर बढ़ता है ।

१ नासत्य अश्विद्वय, तुम दोनों मेरा आह्वान सुनकर, मदकर सोमपानके लिये, मेरे यज्ञमें आओ ।

२ अश्विद्वय, मदकर सोमके पानके लिये मेरे स्तोत्रको सुनो । मेरा आह्वान सुनो ।

३ । अन्न और धनवाले अश्विद्वय, मदकर सोम-पानके लिये यह कृष्ण ऋषि (मैं) तुम्हें बुलाता है ।

शृणुतं जरितुर्हवं कृष्णस्य स्तुवतो नरा । मध्वः सोमस्य पीतये ॥४॥

छर्दिर्यन्तमदाभ्यं विप्राय स्तुवते नरा । मध्वः सोमस्य पीतये ॥५॥

गच्छतं दाशुषो गृहमित्था स्तुवतो अश्विना । मध्वः सोमस्य पीतये ॥६॥

युञ्जाथां रासभं रथे वीड्वङ्गे वृषण्वसू । मध्वः सोमस्य पीतये ॥७॥

त्रिवन्धुरेण त्रिवृता रथेनायातमश्विना । मध्वः सोमस्य पीतये ॥८॥

नू मे गिरो नासत्याश्विना प्रावतं युवम् । मध्वः सोमस्य पीतये ॥९॥

---

७५ सूक्त

अश्विद्वय देवता । कृष्णके पुत्र विश्वक ऋषि । जगती छन्द ।

उभा हि दस्रा भिषजा मयोभुवोभा दक्षस्य वचसो बभूवथुः ।
ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥१॥

---

४ नेताओ, स्तोत्र-परायण और स्तोता कृष्णका आह्वान, मदकर सोम-पानके लिये, सुनो ।

५ नेताओ, मदकर सोमपानके लिये मेधावी स्तोता कृष्णको अहिंसनीय गृह प्रदान करो ।

६ अश्विद्वय, इसी प्रकार स्तोता और हव्यदाताके गृहमें, मदकर सोम-पानके लिये, आओ ।

७ वर्षक और धनी अश्विद्वय, मदकर सोम-पानके लिये दृढाङ्ग रथमें रासभ (अश्व) को जोतो ।

८ अश्विद्वय, तीन बन्धुरों (फलकों) और तीन कोनोंवाले रथपर, मदकर सोम-पानके लिये, आगमन करो ।

९ नासत्य-द्वय, मदकर सोम-पानके लिये मेरे स्तुति-वचनोंकी ओर तुम शीघ्र आओ ।

---

१ दर्शनीय और वैद्य अश्विद्वय, तुम दोनों सुखकर हो । तुम लोग दक्षके स्तुति-समयमें उपस्थित थे । सन्तानके लिये तुम्हें विश्वक (मैं) बुलाता हूँ । हमारा (ऋषि और स्तोताओंका) बन्धुत्व अलग नहीं करना । लगामसे अश्वोंको छुड़ाओ ।

कथा नूनं वां विमना उप स्तवद्युवं धियं ददथुर्वस्यइष्टये ।
ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥२॥
युवं हि ष्मा पुरुभुजेममेधतुं विष्णाप्वे ददथुर्वस्यइष्टये ।
ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥३॥
उत त्यं वीरं धनसामृजीषिणं दूरे चित् सन्तमवसे हवामहे ।
यस्य स्वादिष्ठा सुमतिः पितुर्यथा मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥४॥
ऋतेन देवः सविता शमायत ऋतस्य शृङ्गमुर्विया वि पप्रथे ।
ऋतं सासाह महि चित् पृतन्यतो मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥५॥

७६ सूक्त

अश्विद्वय देवता । वसिष्ठके पुत्र द्युम्नीक, अङ्गिराके पुत्र प्रियमेध अथवा कृष्ण ऋषि । बृहती और सतोबृहती छन्द ।

द्युम्नी वां स्तोमो अश्विना क्रिविर्न सेक आ गतम् ।
मध्वः सुतस्य स दिवि प्रियो नरा पातं गौराविवेरिणे ॥१॥

---

२ अश्विद्वय, विमना नामके ऋषिने पूर्व कालमें तुम्हारी कैसे स्तुति की थी कि, विमनाको धन-प्राप्तिके लिये तुमने अपने मनको निश्चित किया था ? वैसे तुमको विश्वक बुलाता है । हमारा बन्धुत्व वियुक्त न हो । लगामसे अश्वोंको छुड़ाओ ।

३ अनेकोंके पालक अश्विद्वय, विष्णवापु (मेरे पुत्र)की उत्कृष्ट धनकी अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये तुमने धन-वृद्धि प्रदान की है । वैसे तुम्हें, सन्तानके लिये, विश्वक बुलाता है । हमारा सखित्व अलग नहीं करना । लगामसे अश्वोंको छोड़ो ।

४ अश्विद्वय, वीर, धन-भोक्ता, अभिषुत सोमसे युक्त और दूरस्थ विष्णवापुको हम बुलाते हैं । पिता (मेरे) समान ही विष्णवापुकी स्तुति भी अतीव सुस्वादु है । हमारे सख्यको पृथक् मत करो ।

५ अश्विद्वय, सत्यके द्वारा सूर्य अपनी किरणोंको (सायंकालमें) एकत्र करते हैं । अनन्तर सत्यके शृङ्ग (किरण-समूह) को (प्रातःकाल) विशेष रूपसे विस्तारित करते हैं । सचमुच वह (सूर्य=सविता) सेनावाले शत्रुको परास्त करते हैं । सत्यके द्वारा हमारा बन्धुत्व वियुक्त न हो । लगामसे अश्वोंको छुड़ाओ ।

---

१ अश्विद्वय, द्युम्नीक ऋषि तुम्हारा स्तोता है । वर्षा ऋतुमें कुँओंकी तरह तुम आओ । नेताओ, यह स्तोता द्युतिमान् यज्ञमें अभिषुत और मदकर सोमका प्रेमी है । फलतः जैसे गौर मृग तड़ाग आदिका जल पीते हैं, वैसे ही अभिषुत सोमका पान करो ।

पिबतं घर्मं मधुमन्तमश्विना बर्हिः सीदतं नरा ।
ता मन्दसाना मनुषो दुरोण आ नि पातं वेदसा वयः ॥२॥
आ वां विश्वाभिरूतिभिः प्रियमेधा अहूषत ।
ता वर्तिर्यातमुप वृक्तबर्हिषो जुष्टं यज्ञं दिविष्टिषु ॥३॥
पिबतं सोमं मधुमन्तमश्विना बर्हिः सीदतं सुमत् ।
ता वावृधाना उप सुष्टुतिं दिवो गन्तं गौराविवेरिणम् ॥४॥
आ नूनं यातमश्विनाश्वेभिः प्रुषितप्सुभिः ।
दस्रा हिरण्यवर्तनी शुभस्पती पातं सोममृतावृधा ॥५॥
वयं हि वां हवामहे विपन्यवो विप्रासो वाजसातये ।
ता वल्गू दस्रा पुरुदंससा धियाश्विना श्रुष्ट्यागतम् ॥६॥

२ अश्विद्वय, रसवान् और चूनेवाला सोम पिओ। नेताओ, यज्ञमें बैठो । मनुष्यके गृहमें प्रमत्त होकर तुमलोग, हव्यके साथ, सोमका पान करो ।

३ अश्विद्वय, यजमान तुम्हें सारी रक्षाओंके साथ, बुला रहे हैं। जिस यजमानने कुशोंको बिछाया है, उसीके द्वारा सदासेवित हविके लिये तुमलोग प्रातःकाल ही घरमें आओ।

४ अश्विद्वय, रसवान् सोमका पान करो। अनन्तर सुन्दर कुशोंपर बैठो। तत्पश्चात् प्रवृद्ध होकर उसी प्रकार हमारी स्तुतिकी ओर आओ, जिस प्रकार दो गौर मृग तड़ाग आदिकी ओर जाते हैं।

५ अश्विद्वय, तुम लोग स्निग्ध रूपवाले अश्वोंके साथ इस समय आओ। दर्शनीय और सुवर्णमय रथवाले, जलके पालक और यज्ञके वर्द्धक अश्विद्वय, सोम पान करो ।

६ अश्विद्वय, हम स्तोता और ब्राह्मण हैं। हम अन्न-लाभके लिये तुम्हें बुलाते हैं। तुम सुन्दर गमनवाले और विविध-कर्मा हो। हमारी स्तुतिके द्वारा बुलाये जाकर शीघ्र आओ।

७७ सूक्त

इन्द्र देवता। गौतम नोधा ऋषि। बृहती छन्द।

तं वो दस्ममृतीषहं वसोर्मन्दानमन्धसः ।
अभि वत्सं न स्वसरेषु धेनव इन्द्रं गीर्भिर्नवामहे ॥१॥
द्युक्षं सुदानुं तविषीभिरावृतं गिरिं न पुरुभोजसम् ।
क्षुमन्तं वाजं शतिनं सहस्रिणं मक्षू गोमन्तमीमहे ॥२॥
न त्वा बृहन्तो अद्रयो वरन्त इन्द्र वीलवः ।
यद्दित्ससि स्तुवते मावते वसु नकिष्टदा मिनाति ते ॥३॥
योद्धासि क्रत्वा शवसोत दंसना विश्वा जाताभि मज्मना ।
आ त्वायमर्क ऊतये ववर्तति यं गोतमा अजीजनन् ॥४॥
प्र हि रिरिक्ष ओजसा दिवो अन्तेभ्यस्परि ।
न त्वा विव्याच रज इन्द्र पार्थिवमनु स्वधां ववक्षिथ ॥५॥

---

१ जैसे दिनमें, गोशालामें, गायें अपने बछड़ोंको बुलाती हैं, वैसे ही दर्शनीय, शत्रु-नाशक, दुःख दूर करनेवाले और सोम पानके द्वारा प्रमत्त इन्द्रको, स्तुतिके द्वारा, हम बुलाते हैं।

२ इन्द्र दीप्तिके निवास स्थान, स्वर्ग-वासी, उत्तम दानवाले, पर्वतके समान बलके द्वारा ढके हुए और अनेकोंके पालक इन्द्रसे शब्दकारी पुत्रादि, सौ और सहस्र धन तथा गौसे युक्त अन्नकी हम शीघ्र याचना करते हैं।

३ इन्द्र, विराट् और सुदृढ़ पर्वत भी तुम्हें बाधा नहीं पहुँचा सकते। मेरे जैसे स्तोताको जो धन देनेकी इच्छा करते हो, उसे कोई नहीं विनष्ट कर सकता।

४ इन्द्र, कर्म और बलके द्वारा तुम शत्रुओंके विनाशक हो। तुम अपने कर्म और बलके द्वारा सारी वस्तुओंको जीतते हो। देवोंका पूजक यह स्तोता, अपनी रक्षाके लिये, तुममें अपनेको लगाता है। गौतम लोगोंने तुम्हें आविर्भूत किया है।

५ इन्द्र, द्युलोक पर्यन्त प्रदेशसे भी तुम प्रधान हो। पार्थिव लोक (रजोलोक) तुम्हें नहीं व्याप्त कर सकता। तुम हमारा अन्न ले जानेकी इच्छा करो।

नकिः परिष्टिर्मघवन्मघस्य ते यद्दाशुषे दशस्यसि ।
अस्माकं बोध्युचथस्य चोदिता मंहिष्ठो वाजसातये ॥६॥

७८ सूक्त

इन्द्र देवता। नृमेध और पुरुमेध ऋषि। अनुष्टुप् और बृहती छन्द ।

बृहदिन्द्राय गायत मरुतो वृत्रहन्तमम् ।
येन ज्योतिरजनयन्नृतावृधो देवं देवाय जागृवि ॥१॥
अपाधमदभिशस्तीरशस्तिहाथेन्द्रो द्युम्न्याभवत् ।
देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे बृहद्भानो मरुद्गण ॥२॥
प्र व इन्द्राय बृहते मरुतो ब्रह्मार्चत ।
वृत्रं हनति वृत्रहा शतक्रतुर्वज्रेण शतपर्वणा ॥३॥
अभि प्र भर धृषता धृषन्मनः श्रवश्चित्ते असद्बृहत् ।
अर्षन्त्वापो जवसा वि मातरो हनो वृत्रं जया स्वः ॥४॥

---

६ धनी इन्द्र, हव्य-दाताको जो धन तुम देते हो, उसमें कोई बाधक नहीं है। तुम धन-प्रेरक और अतीव दान-शील होकर धन-प्राप्तिके लिये हमारे उचथ्यके स्तोत्रको जानो ।

१ मरुतो, इन्द्रके लिये पाप-विनाशक और विशाल गान करो। यज्ञवर्द्धक विश्वदेवोंने द्युतिमान इन्द्रके लिये इस गानके द्वारा दीप्त और सदा जागरूक ज्योति (सूर्य) को उत्पन्न किया।

२ स्तोत्र-शून्य लोगोंके विनाशक इन्द्रने शत्रुकी हिंसाको दूर किया था। अनन्तर इन्द्र प्रकाशक और यशस्वी हुए थे। विशाल दीप्ति और मरुतोंसे युक्त इन्द्र, देवोंने तुम्हारी मैत्रीके लिये तुम्हें स्वीकृत किया था।

३ मरुतो, इन्द्र महान् हैं। उनके लिये स्तोत्रका उच्चारण करो। वृत्रघ्न और शतक्रतु इन्द्रने सौ सन्धियोंवाले वज्रसे वृत्रका वध किया था।

४ शत्रु-वधके लिये प्रस्तुत इन्द्र, तुम्हारे पास बहुत अन्न है। तुम दृढ़ चित्तसे हमें वह अन्न दो। इन्द्र, हमारे मातृ-रूप जल वेगसे विविध भूमियोंकी ओर जायँ। जलको रोकनेवाले वृत्रका नाश करो। स्वर्गको (वा प्राणियोंको) जीतो।

यज्जायथा अपूर्व्य मघवन्वृत्रहत्याय ।
तत् पृथिवीमप्रथयस्तदस्तभ्ना उत द्याम् ॥५॥
तत्ते यज्ञा अजायत तदर्क उत हस्कृतिः ।
तद्विश्वमभिभूरसि यज्जातं यच्च जन्त्वम् ॥६॥
आमासु पक्वमैरय आ सूर्यं रोहयो दिवि ।
घर्मं न सामन्तपता सुवृक्तिभिर्जुष्टं गिर्वणसे बृहत् ॥७॥

७९ सूक्त

इन्द्र देवता । नृमेध और पुरुमेध ऋषि । सतोबृहती छन्द ।

आ नो विश्वासु हव्य इन्द्रः समत्सु भूषतु ।
उप ब्रह्माणि सवनानि वृत्रहा परमज्या ऋचीषमः ॥१॥
त्वं दाता प्रथमो राधसामस्यसि सत्य ईशानकृत् ।
तुविद्युम्नस्य युज्या वृणीमहे पुत्रस्य शवसो महः ॥२॥

---

५ अपूर्व धनी इन्द्र, वृत्र-वधके लिये जिस समय तुम प्रकट हुए, उस समय तुमने पृथिवीको दृढ़ किया और द्युलोकको रोका ।

६ उस समय तुम्हारे लिये यज्ञ उत्पन्न हुआ और प्रसन्नता-दायक मन्त्र उत्पन्न हुए । उस समय तुमने समस्त उत्पन्न और उत्पन्न होनेवाले संसारको अभिभूत किया ।

७ इन्द्र, उस समय तुमने अपक्व दूधवाली गायोंमें पक्व दूध उत्पन्न किया और द्युलोकमें सूर्यको चढ़ाया । साम-मन्त्रोंके द्वारा प्रशस्य सामके समान शोभन स्तुतियोंसे इन्द्रको बढ़ाओ । स्तुति-भोगी इन्द्रके लिये हर्षदाता और विशाल सामका गान करो ।

१ सारे युद्धोंमें बुलाने योग्य इन्द्र हमारे स्तोत्रका आश्रय करें । तीनों सवनोंकी सेवा करो । वह वृत्रघ्न हैं । उनकी ज्या (प्रत्यञ्चा) अविनाशी है । वह स्तुतिके द्वारा सामने करने योग्य हैं ।

२ इन्द्र, तुम सबके मुख्य धन-प्रद हो, तुम सत्य हो । तुम स्तोताओंको ऐश्वर्य-शाली करो । तुम बहुत धनवाले और बलके पुत्र हो । तुम महान् हो । तुम्हारे योग्य धनका हम आश्रय करते हैं ।

ब्रह्मा त इन्द्र गिर्वणः क्रियन्ते अनतिद्भुता ।
इमा जुषस्व हर्यश्व योजनेन्द्र या ते अमन्महि ॥३॥
त्वं हि सत्यो मघवन्ननानतो वृत्रा भूरि न्यृञ्जसे ।
स त्वं शविष्ठ वज्रहस्त दाशुषेर्वाञ्चं रयिमा कृधि ॥४॥
त्वमिन्द्र यशा अस्यृजीषी शवसस्पते ।
त्वं वृत्राणि हंस्य प्रतीन्येक इदनुत्ता चर्षणीधृता ॥५॥
तमु त्वा नूनमसुर प्रचेतसं राधो भागमिवेमहे ।
महीव कृत्तिः शरणा त इन्द्र प्र ते सुम्ना नो अश्नवन् ॥६॥

८० सूक्त

इन्द्र देवता। अपाला (अत्रिकी पुत्री) ऋषि। पङ्क्ति और अनुष्टुप् छन्द।

कन्या वारवायती सोममपि स्रुताविदत् ।
अस्तं भरन्त्यब्रवीदिन्द्राय सुनवै त्वा शक्राय सुनवै त्वा ॥१॥

३ स्तुत्य इन्द्र, तुम्हारे लिये हम जो यथार्थ स्तोत्र करते हैं, हर्यश्व, उसमें तुम युक्त होओ और उसकी सेवा करो। तुम्हारे लिये हम जितने स्तोत्रोंका उच्चारण करते हैं, उनकी भी सेवा करो।

४ धनी इन्द्र, तुम सत्य हो। तुमने किसीसे भी न दबकर अनेक राक्षसोंका नाश किया है। इन्द्र, जैसे हव्यदाताके पास धन पहुँचे, वैसा करो।

५ बलाधिपति इन्द्र, तुम अभिषुत सोमवाले होकर यशस्वी बने हो। तुमने अकेले ही किसीके द्वारा न जाने योग्य और न जीतने योग्य राक्षसोंको, मनुष्योंके रक्षक वज्रके द्वारा मारा है।

६ बली (असुर) इन्द्र, तुम उत्तम ज्ञानवाले हो। तुम्हारे ही समीप हम पैतृक धनके भागके समान धनकी याचना करते हैं। इन्द्र, तुम्हारी कीर्त्तिके समान तुम्हारा गृह द्युलोकमें, विशाल रूपसे, अवस्थित है। तुम्हारे सारे सुख हमें व्याप्त करें।

---

१ जलकी ओर स्नानके लिये जाते समय कन्या (अपाला=मैं) ने इन्द्रको प्रसन्न करनेके लिये (अपने चर्म-रोग-विनाशके निमित्त) मार्गमें सोमको प्राप्त किया। मैं उस सोमको घर ले आनेके समय सोमसे कहा—"इन्द्रके लिये तुम्हें मैं अभिषुत करती हूँ—समर्थ इन्द्रके लिये तुम्हें अभिषुत करती हूँ।"

असौ य एषि वीरको गृहंगृहं विचाकशत् ।
इमं जंभसुतं पिब धानावन्तं करम्भिणमपूपवन्तमुक्थिनम् ॥२॥
आ चन त्वा चिकित्सामोऽधि चन त्वा नेमसि ।
शनैरिव शनकैरिवेन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥३॥
कुविच्छकत् कुवित् करत् कुविन्नो वस्यसस्करत् ।
कुवित् पतिद्विषो यतीरिन्द्रेण संगमामहै ॥४॥
इमानि त्रीणि विष्टपा तानीन्द्र वि रोहय ।
शिरस्ततस्योर्वरामादिदं म उपोदरे ॥५॥
असौ च या न उर्वरादिमां तन्वं मम ।
अथो ततस्य यच्छिरः सर्वा ता रोमशा कृधि ॥६॥
खे रथस्य खेनसः खे युगस्य शतक्रतो ।
अपालामिन्द्र त्रिष्पूत्व्यकृणोः सूर्यत्वचम् ॥७॥

---

२ इन्द्र, तुम वीर, अतीव दीप्तिमान् और प्रत्येक गृहमें जानेवाले हो। भूने हुए जौ (यव)के सत्तू, पुरोडाशादि तथा उक्थ स्तुतिसे युक्त एवम् (मेरे) दाँतोंके द्वारा अभिषुत सोमका पान करो।

३ इन्द्र, तुम्हें हम जाननेकी इच्छा करती हैं। इस समय तुम्हें हम नहीं प्राप्त होती हैं। सोम, इन्द्रके लिये पहले धीरे-धीरे, पीछे जोरसे (दाँतोंसे) बहो।

४ वह इन्द्र हमें (अपाला और स्तोता लोगोंको) अथवा पूजार्थ अपालाके लिये बहुवचन समर्थ बनावें। हमें बहुमङ्गलयुक्त करें। वह हमें अनेक बार धनी करें। हम पतिके द्वारा छोड़ी जाकर यहाँ आयी हैं। हम इन्द्रके साथ मिलेंगी।

५ इन्द्र, मेरे पिताका मस्तक (केश-रहित) और खेत तथा मेरे उदरके पासके स्थान (गुह्येन्द्रिय)—इन तीनों स्थानोंको उत्पादक बनाओ।

६ हमारे पिताका जो ऊसर खेत है तथा मेरे शरीर (गोपनीय इन्द्रिय) और पिताका मस्तक (चर्म रोगके कारण लोम-शून्य है)—इन तीनों स्थानोंको उर्वर और रोम-युक्त करो।

७ शतसङ्ख्यक यज्ञवाले इन्द्र, अपने रथके बड़े छिद्र, शकटके (कुछ छोटे छिद्र और युग (जोड़)के छोटे छिद्रको निष्कर्षण (अपनयन)के द्वारा शोधन करके अपालाको सूर्यके समान, चर्म-युक्त किया था।

८१ सूक्त

इन्द्र देवता श्रुतकक्ष वा सुकक्ष ऋषि । अनुष्टुप् और गायत्री छन्द ।

पान्तमा वो अन्धस इन्द्रमभि प्र गायत ।
विश्वासाहं शतक्रतुं मंहिष्ठं चर्षणीनाम् ॥१॥
पुरुहूतं पुरुष्टुतं गाथान्यं सनश्रुतम् । इन्द्र इति ब्रवीतन ॥२॥
इन्द्र इन्नो महानां दाता वाजानां नृतुः । महाँ अभिज्ञ्वा यमत् ॥३॥
अपादु शिप्र्यन्धसः सुदक्षस्य प्रहोषिणः । इन्दोरिन्द्रो यवाशिरः ॥४॥
तम्वभि प्रार्चतेन्द्रं सोमस्य पीतये । तदिद्ध्यस्य वर्धनम् ॥५॥
अस्य पीत्वा मदानां देवो देवस्यौजसा । विश्वाभि भुवना भुवत् ॥६॥
त्यमु वः सत्रासाहं विश्वासु गीर्ष्वायतम् । आ च्यावयस्यूतये ॥७॥
युध्मं सन्तमनर्वाणं सोमपामनपच्युतम् । नरमवार्यक्रतुम् ॥८॥

---

१ ऋत्विको, अपने सोम-पाता इन्द्रकी, विशेष रूपसे, स्तुति करो । वह सबके पराभवकर्त्ता, शत-याज्ञिक और मनुष्योंको सर्वापेक्षा अधिक धन देनेवाले हैं ।

२ तुमलोग बहुतोंके द्वारा आहूत, अनेकोंके द्वारा स्तुत, गानयोग्य और सनातन कहकर प्रसिद्ध देवको इन्द्र कहना ।

३ इन्द्र ही हमारे महान् धनके दाता, महान् अन्नके प्रदाता और सबको नचानेवाले हैं । महान् इन्द्र हमारे सम्मुख आकर हमें धन दें ।

४ सुन्दर शिरस्त्राणवाले इन्द्रने होता और निपुण ऋषिके जौसे मिले और चूनेवाले सोमको, भली भाँति, पिया था ।

५ सोम-पानके लिये तुम लोग इन्द्रकी विशेष रूपसे पूजा करो । सोम ही इन्द्रको वर्द्धित करता है ।

६ प्रकाशमान इन्द्र सोमके मदकर रसको पीकर बलके द्वारा सारे भुवनोंको दबाते हैं ।

७ सबको दबानेवाले और तुम्हारे सारे स्तोत्रोंमें विस्तृत इन्द्रको ही, रक्षणके लिये, सामने बुलाओ ।

८ इन्द्र शत्रुओंको मारनेवाले सत्, राक्षसोंके द्वारा अगम्य, अहिंसित, सोम-पाता और सबके नेता हैं । इनके कर्ममें कोई बाधा नहीं दे सकता ।

शिक्षा ण इन्द्र राय आ पुरु विद्वाँ ऋचीषम । अवा नः पार्ये धने ॥९॥

अतश्चिन्द्र ण उपा याहि शतवाजया । इषा सहस्रवाजया ॥१०॥

अयाम धीवतो धियोऽर्वद्भिः शक्र गोदरे । जयेम पृत्सु वज्रिवः ॥११॥

वयमु त्वा शतक्रतो गावो न यवसेष्वा । उक्थेषु रणयामसि ॥१२॥

विश्वा हि मर्त्यत्वनानुकामा शतक्रतो । अगन्म वज्रिन्नाशसः ॥१३॥

त्वे सु पुत्र शवसोऽवृत्रन् कामकातयः । न त्वामिन्द्राति रिच्यते ॥१४॥

स नो वृषन्त्सनिष्ठया संघोरया द्रवित्न्वा धियाविड्ढि पुरन्ध्या ॥१५॥

यस्ते नूनं शतक्रतविन्द्र द्युम्नितमो मदः । तेन नूनं मदे मदेः ॥१६॥

यस्ते चित्रश्रवस्तमो य इन्द्र वृत्रहन्तमः । य ओजोदातमो मदः ॥१७॥

---

९ स्तुतिके द्वारा सम्बोधनके योग्य इन्द्र, तुम विद्वान् हो । शत्रुओंसे लेकर हमें बहु बार धन दो । शत्रु-धनके द्वारा हमारी रक्षा करो ।

१० इन्द्र, इस द्युलोकसे ही सौ और सहस्र बलों तथा अन्नसे युक्त होकर हमारे समीप आओ ।

११ समर्थ इन्द्र, हम कर्मवाले हैं । युद्ध-विजयके लिये हम कर्म करेंगे । पर्वत-विदारक और वज्रधर इन्द्र, हम युद्धमें अश्वोंके द्वारा जय लाभ करेंगे ।

१२ जैसे गोपाल तृणोंके द्वारा गायोंको सन्तुष्ट करता है, वैसे ही हे बहुकर्मा इन्द्र, तुम्हें चारो ओरसे उक्थ स्तोत्रके द्वारा हम सन्तुष्ट करेंगे ।

१३ शतक्रतु इन्द्र, सारा संसार अभिलाषी है। वज्रधर इन्द्र, हम भी धनादि अभिलाषाओंको प्राप्त करेंगे ।

१४ बलके पुत्र इन्द्र, अभिलाषाके कारण कातर शब्दवाले मनुष्य तुमको ही आश्रित करते हैं; इसलिये, हे इन्द्र, कोई भी देव तुम्हें नहीं लाँघ सकते ।

१५ अभिलाषा-दाता इन्द्र, तुम सबकी अपेक्षा धन-दाता हो । तुम भयंकर शत्रुको दूर करनेवाले और अनेकोंका धारण करनेमें समर्थ हो । तुम कर्मके द्वारा हमें पालन करो ।

१६ बहुविध-कर्मा इन्द्र, जिस सबसे अधिक यशस्वी सोमको, पूर्वकालमें, तुम्हारे लिये, हमने अभिषुत किया था, उसके द्वारा प्रमत्त होकर इस समय हमें प्रमत्त करो ।

१७ इन्द्र, तुम्हारी प्रमत्तता नाना प्रकारकी कीर्त्तियोंसे युक्त है । वह हमारे द्वारा अभिषुत सोम सबसे अधिक पापनाशक और बल-दाता है ।

विद्मा हि यस्ते अद्रिवस्त्वादत्तः सत्य सोमपाः ।
विश्वासु दस्म कृष्टिषु ॥१८॥
इन्द्राय मद्वने सुतं परिष्टोभन्तु नो गिरः । अर्कमर्चं तुकारवः ॥१६॥
यस्मिन्विश्वा अधि श्रियो रणन्ति सप्त संसदः । इन्द्रं सुते हवामहे ॥२०॥
त्रिकद्रुकेषु चेतनं देवासो यज्ञमत्नत । तमिद्वर्धन्तु नो गिरः ॥२१॥
आ त्वा विशन्त्विन्दवः समुद्रमिव सिन्धवः । न त्वामिन्द्रातिरिच्यते ॥२२॥
विव्यक्थ महिना वृषन् भक्षं सोमस्य जागृवे । य इन्द्र जठरेषु ते ॥२३॥
अरं त इन्द्र कुक्षये सोमो भवतु वृत्रहन् । अरं धामभ्य इन्दवः ॥२४॥
अरमश्वाय गायति श्रुतकक्षो अरं गवे । अरमिन्द्रस्य धाम्ने ॥२५॥
अरं हि ष्मा सुतेषु णः सोमेष्विन्द्र भूषसि । अरं त शक्र दावने ॥२६॥

१८ वज्रधर, यथार्थकर्मा, सोमपाता और दर्शनीय इन्द्र, सारे मनुष्योंमें जो तुम्हारा दिया हुआ धन है, उसे ही हम जानते हैं।

१६ मत्त इन्द्रके लिये हमारे स्तुति-वचन अभिषुत सोमकी स्तुति करें। स्तोता लोग पूजनीय सोमकी पूजा करें।

२० जिन इन्द्रमें सारी कान्तियाँ अवस्थित हैं और जिनमें सात होत्रक, सोम-प्रदानके लिये, प्रसन्न होते हैं, उन्हीं इन्द्रको, सोमाभिषव होनेपर, हम बुलाते हैं।

२१ देवो, तुम लोगोंने त्रिकद्रुक (ज्योति, गौ और आयु) के लिये ज्ञान-साधक यज्ञका विस्तार किया था। हमारे स्तुति-वाक्य उसी यज्ञको वर्द्धित करें।

२२ जैसे नदियाँ समुद्रमें जाती हैं, सारे सोम तुममें प्रविष्ट हों। इन्द्र तुम्हें कोई नहीं लाँघ सकता।

२३ मनोरथ-पूरक और जागरणशील इन्द्र, तुम अपनी महिमासे सोम-पानमें व्याप्त हुए हो। वह सोम तुम्हारे उदरमें पैठता है।

२४ वृत्रघ्न इन्द्र, तुम्हारे उदरके लिये सोम पर्याप्त हो। चूनेवाला सोम तुम्हारे शरीरमें यथेष्ट हो।

२५ श्रुतकक्ष (मैं) अश्व-प्राप्तिके लिये, अतीव गान करता है। इन्द्रके गृहके लिये खूब गाता है।

२६ इन्द्र, सोमाभिषव होनेपर, पानके लिये, तुम पर्याप्त हो। समर्थ इन्द्र, तुम्हीं धनद हो। तुम्हारे लिये सोम पर्याप्त हो।

पराकात्ताच्चिदद्रिवस्त्वां नक्षन्त नो गिरः । अरं गमाम ते वयम् ॥२७॥

एवा ह्यसि वीरयुरेवा शूर उत स्थिरः । एवा ते राध्यं मनः ॥२८॥

एवा रातिस्तुवीमघ विश्वेभिर्धायि धातृभिः ।

अधा चिदिन्द्र मे सचा ॥२९॥

मो षु ब्रह्मेव तन्द्रयुर्भुवो वाजानां पते । मत्स्वा सुतस्य गोमतः ॥३०॥

मा न इन्द्राभ्या दिशः सूरो अक्तुष्वा यमन् । त्वा युजा वनेम तत् ॥३१॥

त्वयेदिन्द्र युजा वयं प्रति ब्रुवीमहि स्पृधः । त्वमस्माकं तव स्मसि ॥३२॥

त्वामिद्धि त्वायवोऽनुनोनुवतश्चरान् । सखाय इन्द्र कारवः ॥३३॥

---

२७ वज्रधर इन्द्र, हमारे स्तुति-वाक्य, दूर रहनेपर भी, तुम्हें व्याप्त करें। हम स्तोता हैं। तुम्हारे पाससे हम प्रचुर धन प्राप्त करेंगे।

२८ इन्द्र, तुम वीरोंकी ही इच्छा करते हो। तुम शूर और धैर्यवाले हो। तुम्हारे मनकी आराधना सबको करनी चाहिये।

२९ बहु-धनी इन्द्र, सारे यजमान तुम्हारे दानको धारण करते हैं। इन्द्र, तुम मेरे सहायक बनो।

३० अन्नपति इन्द्र, तुम तन्द्रा-युक्त ब्राह्मण स्तोताके समान नहीं होना। अभिषुत और क्षीरादिसे युक्त सोमके पानसे हृष्ट होना।

३१ इन्द्र, आयुध फेंकनेवाले सूर (राक्षस) रात्रि-कालमें हमें नियन्त्रित न करें। तुम्हारी सहायतासे हम उनका विनाश करेंगे।

३२ इन्द्र, तुम्हारी सहायता प्राप्त करके हम शत्रुओंको दूर करेंगे। तुम हमारे हो और हम तुम्हारे हैं।

३३ इन्द्र, तुम्हारी अभिलाषा करके तथा बार-बार तुम्हारी स्तुति करके तुम्हारे बन्धु-स्वरूप स्तोतालोग तुम्हारी सेवा करते हैं।

८२ सूक्त

इन्द्र देवता। सुकक्ष ऋषि। गायत्री छन्द।

उद्घेदभि श्रुतामघं वृषभं नर्यापसम्। अस्तारमेषि सूर्य ॥१॥
नव यो नवतिं पुरो बिभेद बाह्वोजसा। अहिं च वृत्रहावधीत् ॥२॥
स न इन्द्रः शिवः सखाश्वावद्गोमद्यवमत्। उरुधारेव दोहते ॥३॥
यदद्य कच्च वृत्रहन्नुदगा अभि सूर्य। सर्वं तदिन्द्र ते वशे ॥४॥
यद्वा प्रवृद्ध सत्पते न मरा इति मन्यसे। उतो तत् सत्यमित्तव ॥५॥
ये सोमासः परावति ये अर्वावति सुन्विरे। सर्वांस्ताँ इन्द्र गच्छसि ॥६॥
तमिन्द्रं वाजयामसि महे वृत्राय हन्तवे। स वृषा वृषभो भुवत् ॥७॥
इन्द्रः स दामने कृत ओजिष्ठः स मदे हितः।
द्युम्नी श्लोकी स सोम्यः ॥८॥

१ सुवीर्य (सूर्यात्मक) इन्द्र, प्रसिद्ध धनवाले, मनोरथ-पूरक, मनुष्य-हितैषी कर्मवाले और उदार यजमानकी चारो ओर उदित होते हो।

२ जिन्होंने बाहु-बलसे ६६ पुरियोंको (दिवोदासके लिये) विनष्ट किया और जिन वृत्र-हन्ता इन्द्रने मेघका वध किया था—

३ वे ही कल्याणकारी और बन्धु इन्द्र, हमारे लिये अश्व, गौ और जौसे युक्त धनको, यथेष्ट दूधवाली गायके समान, दूहें।

४ वृत्रघ्न और सूर्य इन्द्र, आज जो पदार्थ हैं, उनके सामने प्रकट हुए हो। इस प्रकार सारा संसार तुम्हारे वशमें हुआ है।

५ प्रवृद्ध और सत्पति इन्द्र, यदि तुम अपनेको अमर मानते हो, तो ठीक ही है।

६ दूर अथवा निकटवर्ती प्रदेशमें जो सब सोम अभिषुत होते हैं, इन्द्र, तुम उनके सामने जाते हो।

७ हम महान् वृत्रके वधके लिये उन इन्द्रको ही बली करेंगे। धन-वर्षक इन्द्र, अभिलाषा-दाता हों।

८ वह इन्द्र धनदानके लिये प्रजापतिके द्वारा सृष्ट हुए हैं। वह सबकी अपेक्षा ओजस्वी, सोम-पानके लिये स्थापित, अतीव कीर्त्तिशाली, स्तुतिवाले और सोम-योग्य हैं।

गिरा वज्रो न सम्भृतः सबलो अनपच्युतः । ववक्ष ऋष्वो अस्तृतः ॥९॥
दुर्गे चिन्नः सुगंकृधि गृणान इन्द्र गिर्वणः । त्वं च मघवन्वशः ॥१०॥
यस्य ते नू चिदादिशं न मिनन्ति स्वराज्यं । न देवो नाध्रिगुर्जनः ॥११॥
अधा ते अप्रतिष्कुतं देवी शुष्मं सपर्यतः । उभे सुशिप्र रोदसी ॥१२॥
त्वमेतदधारयः कृष्णासु रोहिणीषु च । परुष्णीषुरुशत् पयः ॥१३॥
वि यदहेरध त्विषो विश्वे देवासो अक्रमुः । विदन्मृगस्य ताँ अमः ॥१४॥
आदु मे निवरो भुवद्वृत्रहादिष्ट पौंस्यम् । अजातशत्रुरस्तृतः ॥१५॥
श्रुतं वो वृत्रहन्तमं प्र शर्धं चर्षणीनाम् । आ शुषे राधसे महे ॥१६॥
अया धिया च गव्यया पुरुणामन् पुरुष्टुत । यत् सोमेसोम आभवः ॥१७॥
बोधिन्मना इदस्तु नो वृत्रहा भूर्यासुतिः । शृणोतु शक्र आशिषम् ॥१८॥

९ स्तुति-वचनोंके द्वारा वज्रके समान तेज, बली, अपराजित, महान् और अहिंसित इन्द्र धन आदिका वहन करनेकी इच्छा करते हैं।

१० स्तुति-योग्य इन्द्र, धनी इन्द्र, यदि तुम हमारी इच्छा करते हो, तो तुम स्तुत होकर दुर्गम स्थानमें भी हमारे लिये सुगम पथ कर दो।

११ इन्द्र, आज भी तुम्हारे बल और तुम्हारे राज्यकी कोई हिंसा नहीं करता। देवता भी हिंसा नहीं करते और संग्राम क्षिप्रकारी वीर भी तुम्हारी हिंसा नहीं करता।

१२ शोभन जबड़ोंवाले इन्द्र, द्यावापृथिवी—दोनों देवी तुम्हारे न रोकने योग्य बलकी पूजा करती हैं।

१३ तुम काली और लाल गायोंमें प्रकाशमान दूध देते हो।

१४ जिस समय सारे देवता वृत्रासुरके तेजसे भाग गये थे और वे मृग-रूपी वृत्रसे भीत हुए थे—

१५ उस समय मेरे इन्द्रदेव वृत्रके हन्ता हुए थे। आजतशत्रु और वृत्रघ्न इन्द्रने अपने पौरुषका प्रयोग किया था।

१६ ऋत्विको, प्रख्यात, वृत्रघ्न और बली इन्द्रकी स्तुति करके मैं तुम्हारे लिये यथेष्ट दान दूँगा।

१७ अनेक नामोंवाले और बहुतोंके द्वारा स्तुत इन्द्र, जब कि, तुम प्रत्येक सोम पानमें उपस्थित हुए हो। तब हम गौ चाहनेवाली बुद्धिवाले होंगे।

१८ वृत्र-हन्ता और अनेक अभिषवोंसे युक्त इन्द्र, हमारे मनोरथको समझें। शक्र (युद्धमें शत्रु-वध समर्थ इन्द्र) हमारी स्तुतिको सुनें।

कया त्वं न ऊत्याभि प्र मन्दसे वृषन् । कया स्तोतृभ्य आ भर ॥१९॥

कस्य वृषा सुते सचा नियुत्वान्वृषभो रणत् । वृत्रहा सोमपीतये ॥२०॥

अभी षु णस्त्वं रयिं मन्दसानः सहस्रिणम् । प्रयन्ता बोधि दाशुषे ॥२१॥

पत्नीवन्तः सुता इम उशन्तो यन्ति वीतये । अपां जग्मिर्निचुम्पुणः ॥२२॥

इष्टा होत्रा असृक्षतेन्द्रं वृधासो अध्वरे । अच्छावभृथमोजसा ॥२३॥

इह त्या सधमाद्या हरी हिरण्यकेश्या । वोळ्हामभि प्रयो हितम् ॥२४॥

तुभ्यं सोमाः सुता इमे स्तीर्णं बर्हिर्विभावसो । स्तोतृभ्य इन्द्रमावह ॥२५॥

आ ते दक्षं वि रोचना दधद्रत्ना वि दाशुषे । स्तोतृभ्य इन्द्रमर्चत ॥२६॥

आ ते दधामीन्द्रियमुक्था विश्वा शतक्रतो । स्तोतृभ्य इन्द्र मृळय ॥२७॥

१९ अभीष्ट-वर्षक इन्द्र, तुम किस आश्रय अथवा सेवाके द्वारा हमें प्रमत्त करोगे ? किस सेवाके द्वारा स्तोताओंको धन दोगे ?

२० अभीष्टवर्षक, सेवक, वृत्रघ्न और मरुतोंवाले इन्द्र किसके यज्ञमें, सोम-पानके लिये, ऋत्विकोंके साथ, विहार करते हैं ?

२१ तुम मत्त होकर हमें सहस्र-सङ्ख्यक धन दो । तुम अपनेको हव्यदाता नियन्ता समझो।

२२ यह सब जल-युक्त (ऋजीष-रूप) सोम अभिषुत हुआ है । इन्द्र पान करें—इसी इच्छासे सारा सोम इन्द्रके पास जाता है। पीनेपर सोम प्रसन्नता देता है। सोम (ऋजीष-रूप) जलके पास जाता है।

२३ यज्ञमें वर्द्धक और यज्ञ-कर्त्ता सात होता यज्ञ और दिनके अन्तमें तेजस्वी होकर इन्द्रका विसर्जन करते हैं ।

२४ प्रख्यात इन्द्रके साथ प्रमत्त और सुवर्ण-केशवाले हरि नामक अश्व, हितकर अन्नकी ओर, इन्द्रको ले जाय ।

२५ प्रकाशमान धनवाले अग्नि, तुम्हारे लिये यह सोम अभिषुत हुआ है। तुम्हारे लिये यह सोम अभिषुत हुआ है—कुश भी बिछाया हुआ है; इसलिये स्तोताओंके सोम-पानके लिये इन्द्रको बुलाओ।

२६ ऋत्विग्-यजमानो, इन्द्रको हवि देनेवाले तुम्हारे लिये इन्द्र दीप्यमान बल भेजें— रत्न भेजें। स्तोताओंके लिये भी इन्द्र बल-रत्नादि प्रेरित करें। तुम इन्द्रकी पूजा करो।

२७ शतक्रतु (शतप्रज्ञ) इन्द्र, तुम्हारे लिये वीर्यवान् सोम और समस्त स्तोत्रोंका मैं सम्पादन करता हूँ। इन्द्र, स्तोताओंको सुखी करो।

भद्रंभद्रं न आभरेषमूर्जं शतक्रतो । यदिन्द्र मृळयासि नः ॥२८॥

स नो विश्वान्याभर सुवितानि शतक्रतो । यदिन्द्र मृळयासि नः ॥२९॥

त्वामिद्वृत्रहन्तम सुतावन्तो हवामहे । यदिन्द्र मृळयासि नः ॥३०॥

उप नो हरिभिः सुतं याहि मदानां पते । उप नो हरिभिः सुतम् ॥३१॥

द्विता यो वृत्रहन्तमो विद इन्द्रः शतक्रतुः । उप नो हरिभिः सुतम् ॥३२॥

त्वं हि वृत्रहन्नेषां पाता सोमानामसि । उप नो हरिभिः सुतम् ॥३३॥

इन्द्र इषे ददातु न ऋभुक्षणमृभुं रयिम् । वाजी ददातु वाजिनम् ॥३४॥

१० अनुवाक । ८३ सूक्त

मरुद्गण देवता । बिन्दु अथवा पूतदक्ष ऋषि । गायत्री छन्द

गौर्धयति मरुतां श्रवस्युर्माता मघोनाम् । युक्ता वह्नी रथानाम् ॥१॥

२८ इन्द्र, यदि तुम हमें सुखी करना चाहो, तो हे शतक्रतु, तुम हमें कल्याण दो, अन्न दो और बल दो ।

२९ इन्द्र, यदि तुम हमें सुखी करना चाहते हो, तो हे शतक्रतु, हमारे लिये सारे मङ्गल ले आओ।

३० इन्द्र, तुम हमें सुखी करनेकी इच्छा करते हो; इसलिये, हे श्रेष्ठ असुर-घातक, हम अभिषुत-सोम-युक्त होकर तुम्हें बुलाते हैं।

३१ सोमपति इन्द्र, हरि अश्वोंकी सवारीसे हमारे अभिषुत सोमके पास आओ—हमारे अभिषुत सोमके पास आओ।

३२ श्रेष्ठ, वृत्रघ्न और शतक्रतु इन्द्र दो प्रकारसे जाने जाते हैं। इसलिये, वही तुम, हरियोंकी सवारीसे हमारे अभिषुत सोमके पास आओ।

३३ वृत्रघ्न इन्द्र, तुम इस सोमके पान कर्त्ता हो; इसलिये हरियोंके साथ अभिषुत सोमके पास आओ।

३४ इन्द्र अन्नके दाता और अमर ऋभुदेवको (अन्न-प्राप्तिके लिये) हमें दें। बलवान् इन्द्र वाज नामक उनके भ्राताको भी हमें दें।

१ धनी मरुतोंकी माता गौ अपने पुत्र मरुतोंको सोम-पान कराती है। वह गौ अन्नाभिलाषिणी, मरुतोंको रथमें लगानेवाली और पूजनीया है।

यस्या देवा उपस्थे व्रता विश्वे धारयन्ते । सूर्यामासा दृशे कम् ॥२॥
तत् सु नो विश्वे अर्य आ सदा गृणन्ति कारवः । मरुतः सोमपीतये ॥३॥
अस्ति सोमो अयं सुतः पिबन्त्यस्य मरुतः । उत स्वराजो अश्विना ॥४॥
पिबन्ति मित्रो अर्यमा तना पूतस्य वरुणः । त्रिषधस्थस्य जावतः ॥५॥
उतो न्वस्य जोषमाँ इन्द्रः सुतस्य गोमतः । प्रातर्होतेव मत्सति ॥६॥
कदत्विषन्त सूरयस्तिर आपइव स्रिधः । अर्षन्ति पूतदक्षसः ॥७॥
कद्वो अद्य महानां देवानामवो वृणे । त्मना च दस्मवर्चसाम् ॥८॥
आ ये विश्वा पार्थिवानि पप्रथन्रोचना दिवः । मरुतः सोमपीतये ॥९॥
त्यान्नु पूतदक्षसो दिवो वो मरुतो हुवे । अस्य सोमस्य पीतये ॥१०॥

---

२ सारे देवगण गौकी गोदमें वर्त्तमान रहकर अपने-अपने व्रतको धारण करते हैं। सूर्य और चन्द्रमा भी, सारे लोकोंके प्रकाशनके लिये, इसके समीप रहते हैं।

३ हमारे सर्वत्रगामी स्तोता लोग सदा सोम-पानके लिये मरुतोंकी स्तुति करते हैं।

४ यह सोम अभिषुत हुआ है। स्वभावतः प्रदीप्त मरुद्गण और अश्विद्वय इसके अंशका पान करें।

५ मित्र, अर्यमा और वरुण "दशापवित्र"के द्वारा शोधित तीन स्थानों (द्रोण, कलशाधवनीय और पूतभृत्) में स्थापित तथा जनवाले सोमका पान करें।

६ इन्द्र प्रातःकालमें, होताके समान, अभिषुत और गव्य (क्षीरादि) से युक्त सोमकी सेवाकी प्रशंसा करते हैं।

७ प्राज्ञ मरुद्गण, सलिलके सदृश, टेढ़ी गतिवाले होकर, कब प्रदीप्त होंगे? शत्रुहन्ता मरुद्गण, शुद्ध-बल होकर, कब हमारे यज्ञमें आवेंगे?

८ मरुतो, तुमलोग महान् हो और दर्शनीय तेजवाले हो। तुम द्युतिमान् हो। मैं कब तुम्हारा पालन पाऊँगा?

९ जिन मरुतोंने सारी पार्थिव वस्तुओं और द्युलोककी ज्योतियोंको सर्वत्र विस्तारित किया है, सोम-पानके लिये, उन्हींको मैं बुलाता हूं।

१० मरुतो, तुम्हारा बल पवित्र है। तुम अतएव द्युतिमान् हो। इस सोमके पानके लिये तुम्हें शीघ्र बुलाता हूं।

त्यान्नु ये वि रोदसी तस्तभुर्मरुतो हुवे । अस्य सोमस्य पीतये ॥११॥
त्यं नु मारुतं गणं गिरिष्ठां वृषणं हुवे । अस्य सोमस्य पीतये ॥१२॥
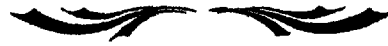
८४ सूक्त

इन्द्र देवता। आङ्गिरस तिरश्ची ऋषि। अनुष्टुप् छन्द ।

आ त्वा गिरो रथीरिवास्थुः सुतेषु गिर्वणः ।
अभि त्वा समनूषतेन्द्र वत्सं न मातरः ॥१॥
आ त्वा शुक्रा अचुच्यवुः सुतास इन्द्र गिर्वणः ।
पिबा त्वस्यान्धस इन्द्र विश्वासु ते हितम् ॥२॥
पिबा सोमं मदाय कमिन्द्र श्येनाभृतं सुतम् ।
त्वं हि शश्वतीनां पती राजा विशामसि ॥३॥
श्रुधी हवं तिरश्च्या इन्द्र यस्त्वा सपर्यति ।
सुवीर्यस्य गोमतो रायस्पूर्धि महाँ असि ॥४॥

---

११ जिन्होंने द्यावापृथिवीको स्तब्ध किया है उन्हींको, इस सोमके पानके लिये, मैं बुलाता हूँ ।

१२ चारो ओर विस्तृत, पर्वतपर स्थित और जल-वर्षक मरुतोंको, इस सोमके पानके लिये, मैं बुलाता हूँ ।

❀❀❀

१ स्तुति-पात्र इन्द्र, सोमाभिषव होनेपर हमारे स्तुति-वचन, रथवाले वीरके समान, तुम्हारी ओर स्थित होते हैं। जैसे गायें बछड़ोंको देखकर शब्द करती हैं, वैसे ही हमारे स्तोत्र तुम्हारी स्तुति करते हैं ।

२ स्तुत्य इन्द्र, पात्रोंमें दिये जाते हुए और अभिषुत सोम तुम्हारे पास आवें । इस सोम-भागको शीघ्र पियो। इन्द्र, चारो दिशाओंमें तुम्हारे लिये चरु-पुरोडाश आदि रखे हुए हैं ।

३ इन्द्र, श्येन-रूपिणी गायत्रीके द्वारा द्युलोकसे लाये गये और अभिषुत सोमका पान, हर्षके लिये, सरलतासे, करो; क्योंकि तुम सब मनुष्यों और देवोंके स्वामी हो ।

४ जो तिरश्ची (मैं) हविके द्वारा तुम्हारी पूजा करता है, उसका आह्वान सुनो। तुम सुपुत्र और गौ आदिवाले धनके प्रदानसे हमें पूर्ण करो। तुम श्रेष्ठ देव हो ।

इन्द्र यस्ते नवीयसीं गिरं मन्द्रामजीजनत् ।
चिकित्विन्मनसं धियं प्रत्नामृतस्य पिप्युषीम् ॥५॥
तमु ष्टवाम यं गिर इन्द्रमुक्थानि वावृधुः ।
पुरूण्यस्य पौंस्या सिषासन्तो वनामहे ॥६॥
एतोन्विन्द्रं स्तवाम शुद्धं शुद्धेन साम्ना ।
शुद्धैरुक्थैर्वावृध्वांसं शुद्ध आशीर्वान्ममत्तु ॥७॥
इन्द्र शुद्धो न आगहि शुद्धः शुद्धाभिरूतिभिः ।
शुद्धो रयिं नि धारय शुद्धो ममद्धि सोम्यः ॥८॥
इन्द्र शुद्धो हि नो रयिं शुद्धो रत्नानि दाशुषे ।
शुद्धो वृत्राणि जिघ्नसे शुद्धो वाजं सिषाससि ॥९॥

८९ सूक्त

इन्द्र देवता । मरुतोंके पुत्र द्युतान अथवा तिरश्ची ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

अस्मा उषास आतिरन्त याममिन्द्राय नक्तमूर्म्याः सुवाचः ।
अस्मा आपो मातरः सप्त तस्थुर्नृभ्यस्तराय सिन्धवः सुपाराः ॥१॥

५ जिस यजमानने नवीन और मदकर वाक्य, तुम्हारे लिये, उत्पन्न किया है, उसके लिये तुम प्राचीन, सत्ययुक्त, प्रवृद्ध और सबके हृदयग्राही रक्षण-कार्यको करो ।

६ जिन इन्द्रने हमारी स्तुति और उक्थ (शस्त्र) को वर्द्धित किया है, उन्हींकी हम स्तुति करते हैं । हम इन इन्द्रके अनेक पौरुषोंका सम्भोग करनेकी इच्छासे उनका भजन करेंगे ।

७ ऋषियो, शीघ्र आओ । हम शुद्ध साम-गान और शुद्ध उक्थ मन्त्रोंके द्वारा (वृत्र-वध-जन्य ब्रह्महत्यासे) विशुद्ध इन्द्रकी स्तुति करेंगे । दशापवित्रके द्वारा शोधित सोम वर्द्धित इन्द्रको हृष्ट करे ।

८ इन्द्र, तुम शुद्ध हो । आओ । परिशुद्ध रक्षणों और मरुतोंके साथ आओ । तुम शुद्ध हो । हममें धन स्थापित करो । तुम शुद्ध हो; सोम-योग्य हो; मत्त होओ ।

९ इन्द्र, तुम शुद्ध हो । हमें धन दो । तुम शुद्ध हो । हव्यदाताको रत्न दो तुम शुद्ध हो । वृत्रादि शत्रुओंका वध करते हो । तुम शुद्ध हो । हमें अन्न देनेकी इच्छा करते हो ।

१ इन्द्रके डरके मारे उषाएँ अपनी गतिको बढ़ाये हुई हैं सारी रात्रियाँ, इन्द्रके लिये, आगामिनी रात्रिमें सुन्दर वाक्यवाली होती हैं । इन्द्रके लिये सर्वत्र व्याप्त और मातृ-रूप गङ्गा आदि सात नदियाँ मनुष्योंके पार जानेके लिये सरलतासे पार-योग्य होती हैं ।

अतिविद्धा विथुरेणा चिदस्त्रा त्रिः सप्त सानु संहिता गिरीणाम् ।
न तद्देवो न मर्त्यस्तुतुर्याद्यानि प्रवृद्धो वृषभश्चकार ॥२॥

इन्द्रस्य वज्र आयसो निमिश्ल इन्द्रस्य बाह्वोर्भूयिष्ठमोजः ।
शीर्षन्निन्द्रस्य क्रतवो निरेक आसन्नेषन्त श्रुत्या उपाके ॥३॥

मन्ये त्वा यज्ञियं यज्ञियानां मन्ये त्वा च्यवनमच्युतानाम् ।
मन्ये त्वा सत्वनामिन्द्र केतुं मन्ये त्वा वृषभं चर्षणीनाम् ॥४॥

आ यद्वज्रं बाह्वोरिन्द्र धत्से मदच्युतमहये हन्तवा उ ।
प्र पर्वता अनवन्त प्र गावः प्र ब्रह्माणो अभिनक्षन्त इन्द्रम् ॥५॥

तमु ष्टवाम य इमा जजान विश्वा जातान्यवराण्यस्मात् ।
इन्द्रेण मित्रं दिधिषेम गीर्भिरुपो नमोभिर्वृषभं विशेम ॥६॥

वृत्रस्य त्वा श्वसथादीषमाणा विश्वे देवा अजहुर्ये सखायः ।
मरुद्भिरिन्द्र सख्यं ते अस्त्वथेमा विश्वाः पृतना जयासि ॥७॥

२ असहाय होकर भी इन्द्रने, अस्त्रोंके द्वारा, एकत्र हुए इक्कीस पर्वत-तटोंको तोड़ा था। अभिलाषा-दाता और प्रवृद्ध इन्द्रने जो कार्य किये, उन्हें मनुष्य अथवा देवता नहीं कर सकते।

३ इन्द्रका वज्र लोहेका बना हुआ है। वह वज्र उनके हाथमें संबद्ध है; इसलिये उनके हाथमें बहुत बल है। युद्ध-गमन-समयमें इन्द्रके मस्तकमें शिरस्त्राण आदि रहते हैं। इन्द्रकी आज्ञा सुननेके लिये सब उनके समीप आते हैं।

४ इन्द्र, मैं तुम्हें यज्ञार्होंमें भी यज्ञ-योग्य समझता हूँ। तुम्हें मैं पर्वतोंका भेदक समझता हूँ। तुम्हें मैं सैन्योंका पताका समझता हूँ। तुम्हें मैं मनुष्योंका अभिमत-फल-दाता समझता हूँ।

५ इन्द्र, तुम जिस समय दोनों बाहुओंसे शत्रुओंका गर्व चूर्ण करते हो, जिस समय वृत्र-बधके लिये वज्र धारण करते हो, जिस समय मेघ और जल शब्द करते हैं, उस समय चारों ओरसे इन्द्रके पास जाते हुए स्तोतालोग इन्द्रकी सेवा करते हैं।

६ जिन इन्द्रने इन प्राणियोंको उत्पन्न किया और जिनके पीछे सारी वस्तुएँ उत्पन्न हुई, स्तुति द्वारा उन्हीं इन्द्रको हम मित्र बनावेंगे और नमस्कारके द्वारा काम-दाता इन्द्रको अपने सामने करेंगे।

७ इन्द्र, जो विश्वदेव तुम्हारे सखा हुए थे, उन्होंने वृत्रासुरके श्वाससे डरकर भागते हुए तुम्हें छोड़ दिया था। मरुतोंके साथ तुम्हारी मैत्री हुई। अनन्तर तुमने सारी शत्रु-सेनाको जीता।

त्रिः षष्टिस्त्वा मरुतो वावृधाना उस्रा इव राशयो यज्ञियासः ।
उप त्वेमः कृधि नो भागधेयं शुष्मन्त एना हविषा विधेम ॥८॥
तिग्ममायुधं मरुतामनीकं कस्त इन्द्र प्रति वज्रं दधर्ष ।
अनायुधासो असुरा अदेवाश्चक्रेण ताँ अप वप ऋजीषिन् ॥९॥
मह उग्राय तवसे सुवृक्तिं प्रेरय शिवतमाय पश्वः ।
गिर्वाहसे गिर इन्द्राय पूर्वीर्धेहि तन्वे कुविदङ्ग वेदत् ॥१०॥
उक्थवाहसे विभ्वे मनीषां द्रुणा न पारमीरया नदीनाम् ।
नि स्पृशा धिया तन्वि श्रुतस्य जुष्टतरस्य कुविदङ्ग वेदत् ॥११॥
तद्विविड्ढि यत्त इन्द्रो जुजोषत् स्तुहि सुष्टुतिं नमसा विवास ।
उप भूष जरितर्मा रुवण्यः श्रावया वाचं कुविदङ्ग वेदत् ॥१२॥
अव द्रप्सो अंशुमतीमतिष्ठदियानः कृष्णो दशभिः सहस्रैः ।
आवत्तमिन्द्रः शच्या धमन्तमप स्नेहितीर्नृमणा अधत्त ॥१३॥

---

८ इन्द्र, ६३ मरुतोंने, एकत्र गो-यूथके समान, तुम्हें वर्द्धित किया था। इसीलिये वे यजनीय हुए थे। हम उन्हीं इन्द्रके पास जायँगे। इन्द्र, हमें भजनीय अन्न दो। हम भी तुम्हें शत्रु-घातक बल देंगे।

९ इन्द्र, तुम्हारे हथियार तेज हैं; तुम्हारी सेना मरुत् है। तुम्हारे वज्रका विरुद्धाचरण कौन कर सकता है? हे सोमवाले इन्द्र, चक्रके द्वारा आयुध-शून्य और देव-द्रोही असुरोंको दूर कर दो।

१० स्तोता, पशु-प्राप्तिके लिये महान्, उग्र, प्रवृद्ध और कल्याणमय इन्द्रकी सुन्दर स्तुति करो। स्तुतिपात्र इन्द्रके लिये अनेक स्तुतियाँ करो। पुत्रके लिये इन्द्र प्रचुर धन भेजें।

११ मन्त्रोंके द्वारा प्राप्य और महान् इन्द्रके लिये, नदीको पार करनेवाली नौकाके समान, स्तुति करो। बहु-प्रसिद्ध और प्रसन्नता-दायक इन्द्र धन दें। पुत्रके लिये इन्द्र बहुत धन दें।

१२ इन्द्र जो चाहते हैं, वह करो। सुन्दर स्तुतिका वाचन करो। स्तोत्रके द्वारा इन्द्रकी सेवा करो। स्तोता, अलङ्कृत होओ। दरिद्रताके कारण मत रोओ। इन्द्रको अपनी स्तुति सुनाओ। इन्द्र तुम्हें बहुत धन देंगे।

१३ दस सहस्र सेनाओंके साथ शीघ्र जानेवाला कृष्ण नामका असुर अंशुमती नदीके किनारे रहता था। बुद्धिके द्वारा इन्द्रने उस शब्द करनेवाले असुरको प्राप्त किया। पीछे इन्द्रने, मनुष्योंके हितके लिये, कृष्णासुरकी हिंसक सेनाका वध कर डाला।

द्रप्समपश्यं विषुणे चरन्तमुपह्वरे नद्यो अंशुमत्याः ।
नभो न कृष्णमवतस्थिवांसमिष्यामि वो वृषणो युध्यताजौ ॥१४॥
अध द्रप्सो अंशुमत्या उपस्थेऽधारयत्तन्वं तित्विषाणः ।
विशो अदेवीरभ्या चरन्तीर्बृहस्पतिना युजेन्द्रः ससाहे ॥१५॥
त्वं ह त्यत् सप्तभ्यो जायमानोऽशत्रुभ्यो अभवः शत्रुरिन्द्र ।
गूळ्हे द्यावापृथिवी अन्वविन्दो विभुमद्भ्यो भुवनेभ्यो रणन्धाः ॥१६॥
त्वं ह त्यदप्रतिमानमोजो वज्रेणवज्रिन्धृषितो जघन्थ ।
त्वं शुष्णस्यावातिरो वधत्रैस्त्वं गा इन्द्र शच्येदविन्दः ॥१७॥
त्वं ह त्यद्वृषभ चर्षणीनां घनो वृत्राणां तविषो बभूथ ।
त्वं सिन्धूँरसृजस्तस्तभानान्त्वमपो अजयो दासपत्नीः ॥१८॥
स सुक्रतू रणिता यः सुतेष्वनुत्तमन्युर्यो अहेव रेवान् ।
य एक इन्नर्यपांसि कर्ता स वृत्रहा प्रतीदन्यमाहुः ॥१९॥

---

१४ इन्द्रने कहा—"द्रुतगामी कृष्णको मैंने देखा है। वह अंशुमती नदीके तटपर, गूढ़ स्थानमें, विस्तृत प्रदेशमें, विचरण करता और सूर्यके समान अवस्थान करता है। अभिलाषा-दाता मरुतो, मैं चाहता हूं कि तुमलोग युद्ध करो और युद्धमें उसका संहार करो।

१५ द्रुतगामी कृष्ण अंशुमती नदीके पास दीप्तिमान् होकर, शरीर धारण करता है। इन्द्रने बृहस्पतिकी सहायतासे, देव-शून्य और आनेवाली सेनाका बध, कृष्णके साथ, कर डाला।

१६ इन्द्र, तुमने ही वह कार्य किया है। जन्मके साथ ही तुम ही शत्रु-शून्य कृष्ण, वृत्र, नमुचि, शम्बर, शुष्ण, पणि आदि सात शत्रुओंके शत्रु हुए थे। तुम अन्धकारमयी द्यावापृथिवीको प्राप्त हुए हो। तुमने मरुतोंके साथ, भुवनोंके लिये, आनन्दका धारण किया है।

१७ इन्द्र, तुमने वह कार्य किया है। वज्रधर इन्द्र, संग्राममें कुशल होकर तुमने वज्रके द्वारा शुष्णके अनुपम बलको नष्ट किया है। तुमने ही आयुधोंके द्वारा शुष्णको, कुत्स राजर्षिके लिये, निम्नमुख करके मार डाला है। अपने कर्मके द्वारा तुमने गो-प्राप्ति की है।

१८ इन्द्र तुमने ही वह कार्य किया है। मनोरथ-प्रद इन्द्र, तुम मनुष्योंको उपद्रवके विनाशक हो; इसलिये तुम प्रवृद्ध हुए थे। तुमने रोकी गयी सिन्धु आदि नदियोंको बहनेके लिये जाने दिया था। अनन्तर दासोंके अधिकृत जलको तुमने जीत लिया था।

१९ वही इन्द्र शोभन प्रज्ञावाले हैं वह अभिषुत सोमके पानके लिये आनन्दित हैं। इन्द्रके क्रोधको कोई नहीं सह सकता। दिनके समान इन्द्र धनी हैं। वह असहाय होकर भी मनुष्योंके कार्य-कर्त्ता हैं। वह वृत्रघ्न हैं। वह सारे शत्रु-सैन्योंके विनाशक हैं।

स वृत्रहेन्द्रश्चर्षणीधृतं सुष्टुत्या हव्यं हुवेम ।
स प्राविता मघवा नोऽधिवक्ता स वाजस्य श्रवस्यस्य दाता ॥२०॥
स वृत्रहेन्द्र ऋभुक्षाः सद्यो जज्ञानो हव्यो बभूव
कृण्वन्नपांसि नर्या पुरूणि सोमो न पीतो हव्यः सखिभ्यः ॥२१॥

८६ सूक्त

इन्द्र देवता । रेभ ऋषि । अतिजगती, बृहती, त्रिष्टुप् छन्द ।

या इन्द्र भुज आभरः स्वर्वाँ असुरेभ्यः ।
स्तोतारमिन्मघवन्नस्य वर्धय ये च त्वे वृक्तबर्हिषः ॥१॥
यमिन्द्र दधिषे त्वमश्वं गां भागमव्ययम् ।
यजमाने सुन्वति दक्षिणावति तस्मिन्तं धेहि मा पणौ ॥२॥
य इन्द्र सस्त्यव्रतोऽनुष्वापमदेवयुः ।
स्वैः ष एवैर्मुमुरत् पोष्यं रयिं सनुतर्धेहि तं ततः ॥३॥

---

२० इन्द्र वृत्रघ्न हैं । वह मनुष्योंके पोषक हैं । वह आह्वानके योग्य हैं । हम शोभन स्तुतिसे उन्हें अपने यज्ञमें बुलाते हैं । वह हमारे विशेष रक्षक, धनवान्, आदरके साथ बोलनेवाले तथा अन्न और कीर्तिके दाता हैं ।

२१ वृत्रघ्न इन्द्र महान् हैं । जन्मके साथ इन्द्र सबके लिये बुलाने योग्य हो गये । वह मनुष्योंके लिये अनेक हितकर कार्य करते हुए, पिये गये सोमके समान, सखाओंके आह्वानके योग्य हुए थे ।

---

१ इन्द्र, तुम सुखवाले हो । तुम जो असुरोंके पाससे भोगके योग्य धन ले आये हो, धनी इन्द्र, उससे स्तोताको वर्द्धित करो । स्तोता कुश बिछाये हुए हैं ।

२ इन्द्र, तुम जो गौ, अश्व और अविनाशी धनको धारण किये हुए हो, सो सब सोमाभिषव और दक्षिणावाले यजमानको दो । यज्ञ-विहीन पणिको नहीं देना ।

३ देवाभिलाष-शून्य तथा व्रत-रहित जो व्यक्ति स्वप्नके वश होकर निद्रित होता है, वह अपनी गति (कर्म) के द्वारा ही अपने पोष्य धनका विनाश करे, उसे कर्म-शून्य स्थानमें रखो ।

यच्छक्रासि परावति यदर्वावति वृत्रहन् ।
अतस्त्वा गीर्भिर्द्युगदिन्द्र केशिभिः सुतावाँ आविवासति ॥४॥
यद्वासि रोचने दिवः समुद्रस्याधि विष्टपि ।
यत् पार्थिवे सदने वृत्रहन्तम यदन्तरिक्ष आगहि ॥५॥
स नः सोमेषु सोमपाः सुतेषु शवसस्पते ।
मादयस्व राधसा सूनृतावतेन्द्र राया परीणसा ॥६॥
मा न इन्द्र परा वृणग्भवा नः सधमाद्यः ।
त्वं न ऊती त्वमिन्न आप्यं मान इन्द्र परा वृणक् ॥७॥
अस्मे इन्द्र सचा सुते निषदा पीतये मधु ।
कृधी जरित्रे मघवन्नवो महदस्मे इन्द्र सचा सुते ॥८॥
न त्वा देवास आशत न मर्त्यासो अद्रिवः ।
विश्वा जातानि शवसाभिभूरसि न त्वा देवास आशत ॥९॥

---

४ शत्रु-हन्ता और वृत्रघ्न इन्द्र, तुम दूर देशमें रहो अथवा समीपके देशमें, इस भूलोकमें द्युलोकको जाते हुए केशवाले हरि अश्वोंके समान तुम्हें, इस स्तोत्रके द्वारा, अभिषुत सोमवाला यजमान यज्ञमें ले आता है ।

५ इन्द्र, यदि तुम स्वर्गके दीप्त स्थानमें हो, यदि समुद्रके बीचमें किसी स्थानपर हो, यदि पृथिवीके किसी स्थानमें हो अथवा अन्तरीक्षमें हो, (जहाँ कहीं भी हो, हमारे यज्ञमें) हे वृत्रघ्न, आओ ।

६ सोमपा और बलपति इन्द्र, सोमाभिषव होनेपर बहुत धन और सुन्दर वाक्यसे युक्त तथा बल-साधक अन्नके द्वारा हमें आनन्दित करो ।

७ इन्द्र, हमें नहीं छोड़ना । तुम हमारे साथ एकत्र सोमपानसे प्रमत्त होओ । तुम हमें अपने रक्षणमें रखो । तुम्हीं हमारे बन्धु हो । तुम हमें नहीं छोड़ना ।

८ इन्द्र, हमारे साथ, मदकर सोमके पानके लिये, सोमाभिषव होनेपर बैठो । धनी इन्द्र, स्तोताको महती रक्षा प्रदान करो । सोमाभिषव होनेपर हमारे साथ बैठो ।

९ वज्रधर इन्द्र, देवता लोग तुम्हें नहीं व्याप्त कर सकते—मनुष्य भी नहीं व्याप्त कर सकते । अपने बलके द्वारा समस्त भूतोंको तुम अभिभूत किये हुए हो । देवता तुम्हें नहीं व्याप्त कर सकते ।

विश्वाः पृतना अभिभूतरं नरं सजूस्ततक्षुरिन्द्रं जजनुश्च राजसे ।
क्रत्वा वरिष्ठं वर आमुरिमुतोग्रमोजिष्ठं तवसं तरस्विनम् ॥१०॥
समीं रेभासो अस्वरन्निन्द्रं सोमस्य पीतये ।
स्वर्पतिं यदीं वृधे धृतव्रतो ह्योजसा समूतिभिः ॥११॥
नेमिं नमन्ति चक्षसा मेषं विप्रा अभिस्वरा ।
सुदीतयो वो अद्रुहोऽपि कर्णे तरस्विनः समृक्वभिः ॥१२॥
तमिन्द्रं जोहवीमि मघवानमुग्रं सत्रा दधानमप्रतिष्कुतं शवांसि ।
मंहिष्ठो गीर्भिरा च यज्ञियो
ववर्तद्राये नो विश्वा सुपथा कृणोतु वज्री ॥१३॥
त्वं पुर इन्द्र चिकिदेना व्योजसा शविष्ठ शक्र नाशयध्यै ।
त्वद्विश्वानि भुवनानि वज्रिन्द्यावा रेजेते पृथिवी च भीषा ॥१४॥

---

१० सारी सेना, परस्पर मिलकर, शत्रुओंके विजेता और नेता इन्द्रको आयुध आदिके द्वारा तेज करती हैं। स्तोता लोग अपने प्रकाशनके लिये यज्ञमें सूर्यरूप इन्द्रकी सृष्टि करते हैं। कर्मके द्वारा बलिष्ठ और शत्रुओंके सामने विनाशक, उग्र, ओजस्वी, प्रवृद्ध और वेगवान् इन्द्रकी, धनके लिये, स्तोता लोग स्तुति करते हैं।

११ सोम-पानके लिये रेभ नामक ऋषियोंने इन्द्रकी भली भाँति स्तुति की थी। जब लोग स्वर्गके पालक इन्द्रकी, वर्द्धनके लिये, स्तुति करते हैं, तब व्रतधारी इन्द्र बल और पालनके द्वारा मिलित होते हैं।

१२ कश्यपगोत्रीय रेभ लोग, नेमिके समान, देखनेके साथ ही इन्द्रको नमस्कार करते हैं। मेधावी (विप्र) लोग मेष (भेड़के समान उपकारी) इन्द्रका, स्तोत्रके द्वारा, नमस्कार करते हैं। स्तोताओ, तुमलोग शोभन दीप्तिवाले और द्रोह-शून्य हो। क्षिप्रकारी तुमलोग इन्द्रके कानोंके पास पूजा-युक्त मन्त्रोंसे इन्द्रकी स्तुति करो।

१३ उस उग्र, धनी, यथार्थतः बल धारण करनेवाले और शत्रुओंके द्वारा न रोके जाने योग्य इन्द्रको मैं बुलाता हूँ। पूज्यतम और यज्ञ-योग्य इन्द्र हमारी स्तुतियोंके द्वारा यज्ञाभिमुख हों। वज्रधर इन्द्र हमारे धनके लिये सारे मार्गोंको सुपथ बनावें।

१४ बलिष्ठ और शत्रुहनन-समर्थ (शक्र) इन्द्र, शम्बरकी इन सब पुरियोंको, बलके द्वारा, विनष्ट करनेके लिये, ज्ञाता होते हो। वज्रधर इन्द्र, तुम्हारे डरसे सारे भूत और द्यावापृथिवी काँपती हैं।

तन्न ऋतमिन्द्र शूर चित्र पात्वपो न वज्रिन्दुरिताति पर्षि भूरि ।
कदा न इन्द्र राय आ दशस्येर्विश्वप्स्न्यस्य स्पृहयाय्यस्य राजन् ॥ १५॥

१५ बली और विविध-रूप इन्द्र, तुम्हारा प्रशंसनीय सत्य मेरी रक्षा करे। वज्री इन्द्र, नाविकके द्वारा जलके समान अनेक पापोंसे हमें पार करो। राजा इन्द्र, विविध-रूप और अभिलषणीय धन, हमारे सामने, कब प्रदान करोगे?

षष्ठ अध्याय समाप्त

सप्तम अध्याय

८७ सूक्त

इन्द्र देवता। अङ्गिरोगोत्रीय नृमेध ऋषि। ककुप्, पुरउष्णिक् और उष्णिक् छन्द।

इन्द्राय साम गायत विप्राय बृहते बृहत्। धर्मकृते विपश्चिते पनस्यवे ॥१॥

त्वमिन्द्राभिभूरसि त्वं सूर्यमरोचयः।

विश्वकर्मा विश्वदेवो महाँ असि ॥२॥

विभ्राजञ्ज्योतिषा स्वरगच्छो रोचनं दिवः।

देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे ॥३॥

एन्द्र नो गधि प्रियः सत्राजिदगोह्यः। गिरिर्न विश्वतस्पृथुः पतिर्दिवः ॥४॥

अभि हि सत्य सोमपा उभे बभूथ रोदसी।

इन्द्रासि सुन्वतो वृधः पतिर्दिवः ॥५॥

---

१ उद्गाताओ, मेधावी, विशाल, कर्म-कर्त्ता, विद्वान् और स्तोत्राभिलाषी इन्द्रके लिये बृहत् स्तोत्रका गान करो।

२ इन्द्र, तुम शत्रुओंको दबानेवाले हो। तुमने आदित्यको तेजके द्वारा प्रदीप्त किया है। तुम विश्वकर्त्ता, सर्वदेव और सर्वाधिक हो।

३ इन्द्र, ज्योतिके द्वारा तुम आदित्यके प्रकाशक हो। तुम स्वर्गको प्रकाशित करते हुए गये थे। देवोंने तुम्हारी मैत्रीके लिये प्रयत्न किया था।

४ इन्द्र, तुम प्रियतम और महान् व्यक्तियोंके विजेता हो। तुम्हारा कोई गोपन नहीं कर सकता। तुम पर्वतके समान चारो ओर व्यापक और स्वर्गके स्वामी हो। हमारे पास आओ।

५ सत्य-स्वरूप और सोमपाता इन्द्र, तुमने द्यावापृथिवीको अभिभूत किया है, इसलिये तुम अभिषव करनेवालेके वर्द्धक और स्वर्गाधिपति हो।

त्वं हि शश्वतीनामिन्द्र दर्ता पुरामसि ।
हन्ता दस्योर्मनोर्वृधः पतिर्दिवः ॥६॥
अधाहीन्द्र गिर्वण उप त्वा कामान्महः ससृज्महे ।
उदेव यन्त उदभिः ॥७॥
वार्ण त्वा यव्याभिर्वर्धन्ति शूर ब्रह्माणि । वावृध्वांसं चिदद्रिवो दिवेदिवे ॥८॥
युञ्जन्ति हरी इषिरस्य गाथयोरौ रथ उरुयुगे । इन्द्रवाहा वचोयुजा ॥९॥
त्वं न इन्द्राभरँ ओजो नृम्णं शतक्रतो विचर्षणे ।
आ वीरं पृतनाषहम् ॥१०॥
त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ ।
अधा ते सुम्नमीमहे ॥११॥
त्वां शुष्मिन् पुरुहूत वाजयन्तमुप ब्रुवे शतक्रतो ।
स नो रास्व सुवीर्यम् ॥१२॥

---

६ इन्द्र, तुम अनेक शत्रु-पुरियोंके भेदक हो । तुम दस्यु-घातक, मनुष्यके वर्द्धक और स्वर्गके पति हो ।

७ स्तुत्य इन्द्र, जैसे क्रीड़ाके लिये लोग जलमें अपने पासके व्यक्तियोंपर जल फेंका करते हैं, वैसे ही हम आज तुम्हारे लिये महान् और कमनीय स्तोम (मन्त्र) प्राप्त करते हैं ।

८ वज्रधर और शूर इन्द्र, जैसे नदियाँ जल-स्थानको बढ़ाती हैं, वैसे ही स्तोत्रोंके द्वारा प्रवृद्ध तुम्हें स्तोता लोग प्रतिदिन वर्द्धित करते हैं ।

९ गतिपरायण इन्द्रके महान् युगों (जोड़ों)से युक्त विशाल रथमें इन्द्रके वाहक और कहनेके साथ ही जुट जानेवाले हरि नामक दोनों अश्वोंको, स्तवके द्वारा स्तोता लोग जोतते हैं ।

१० बहुकर्मा, प्रवीण, वीर्यशाली और सेनाको जीतनेवाले इन्द्र, तुम हमें बल और धन दो ।

११ निवास-दाता और बहुकर्मा इन्द्र, तुम हमारे पिताके सदृश पालक और माताके समान धारक बनो । अनन्तर हम तुम्हारे सुखकी याचना करेंगे ।

१२ बली, अनेकोंके द्वारा आहूत और बहुकर्मा इन्द्र, बलकी अभिलाषा करनेवाले तुम्हारी मैं स्तुति करता हूं । तुम हमें सुन्दर वीर्यसंयुक्त धन दो ।

८८ सूक्त

इन्द्र देवता। नृमेध ऋषि। अयुक् बृहती और युक् सतोबृहती छन्द।

त्वामिदा ह्यो नरोऽपीप्यन् वज्रिन् भूर्णयः ।
स इन्द्र स्तोमवाहसामिह श्रुध्युप स्वसरमागहि ॥१॥
मत्स्वा सुशिप्र हरिवस्तदीमहे त्वे आ भूषन्ति वेधसः ।
तव श्रवांस्युपमान्युक्थ्या सुतेष्विन्द्र गिर्वणः ॥२॥
श्रायन्तइव सूर्यं विश्वेदिन्द्रस्य भक्षत ।
वसूनि जाते जनमान ओजसा प्रति भागं न दीधिम ॥३॥
अनर्शरातिं वसुदामुपस्तुहि भद्रा इन्द्रस्य रातयः ।
सो अस्य कामं विधतो न रोषति मनो दानाय चोदयन् ॥४॥
त्व मिन्द्र प्रतूर्तिष्वभि विश्वा असि स्पृधः ।
अशस्तिहा जनिता विश्वतूरसि त्वं तूर्य तरुष्यतः ॥५॥

---

१ वज्रधर इन्द्र, हविसे भरण करनेवाले नेताओंने तुम्हें आज और कल सोम पान कराया है। तुम इस यज्ञमें हम स्तोत्र-वाहकोंका स्तोत्र सुनो और हमारे गृहमें पधारो।

२ सुन्दर चादरवाले, अश्ववाले और स्तुतिवाले इन्द्र, परिचारक लोग तुम्हारे लिये सोमाभिषव करते हैं। तुम पीकर मत्त होओ। हम तुम्हारे पास प्रार्थना करते हैं। सोमाभिषव होनेपर तुम्हारे अन्न उपमेय और प्रशस्य हों।

३ जैसे आश्रित किरणें सूर्यका भजन करती हैं, वैसे ही तुम इन्द्रके सारे धनोंका भजन करो। इन्द्र बलके द्वारा उत्पन्न और उत्पन्न होनेवाले धनोंके जनक हैं। हम उन धनोंको पैतृक भागके समान धारण करेंगे।

४ पाप-रहित व्यक्तिके लिये जो दान-शील और धनद हैं, उन्हीं इन्द्रकी स्तुति करो, क्योंकि इन्द्रका दान कल्याणवाहक है। इन्द्र अपने मनको अभीष्ट प्रदानके लिये प्रेरित करके परिचारककी इच्छाको बाधा नहीं देते।

५ इन्द्र, तुम युद्धमें सारी सेनाओंको दबाते हो। शत्रु-बाधक इन्द्र तुम दैत्योंके नाशक, उनके जनक शत्रुओंके हिंसक और बाधकोंके बाधक हो।

अनु ते शुष्मं तुरयन्तमीयतुः क्षोणी शिशुं न मातरा ।
विश्वास्ते स्पृधः श्नथयन्त मन्यवे वृत्रं यदिन्द्र तूर्वसि ॥६॥
इत ऊती वो अजरं प्रहेतारमप्रहितम् ।
आशुं जेतारं हेतारं रथीतममतूर्तं तुग्र्यावृधम् ॥७॥
इष्कर्तारमनिष्कृतं सहस्कृतं शतमूतिं शतक्रतुम् ।
समानमिन्द्रमवसे हवामहे वसवानं वसुजुवम् ॥८॥

८९ सूक्त

इन्द्र देवता । १०-११ के वाक् देवता । भृगुगोत्रीय नेम ऋषि । जगती, अनुष्टुप् और त्रिष्टुप् छन्द ।

अयं त एमि तन्वा पुरस्ताद्विश्वे देवा अभि मा यन्ति पश्चात् ।
यदा मह्यं दीधरो भागमिन्द्रादिन्मया कृणवो वीर्याणि ॥१॥
दधामि ते मधुनो भक्षमग्रे हितस्ते भागः सुतो अस्तु सोमः ।
असश्च त्वं दक्षिणतः सखा मेऽधा वृत्राणि जङ्घनाव भूरि ॥२॥

---

६ इन्द्र, जैसे माता शिशुका अनुगमन करती है, वैसे ही तुम्हारे बलकी हिंसा करनेवाले शत्रुका अनुगमन द्यावापृथिवी करती हैं। तुम वृत्रका वध करते हो; इसलिये सारी युद्धकारिणी सेना तुम्हारे क्रोधके लिये खिन्न होती है।

७ अजर, शत्रु-प्रेरक, किसीसे न भेजे गये, वेगवान्, जेता, गन्ता, रथिश्रेष्ठ, अहिंसक और जल-वर्द्धक इन्द्रको, रक्षणके लिये, आगे करो।

८ शत्रुओंके संस्कर्त्ता, दूसरोंके द्वारा असंस्कृत, बलकृत, बहुरक्षणवाले, शत-यज्ञवाले, साधारण-धनाच्छादक और धन-प्रेरक इन्द्रको, रक्षणके लिये, हम बुलाते हैं।

---

१ इन्द्र, पुत्रके साथ मैं शत्रुको जीतनेके लिये, तुम्हारे आगे-आगे जाता हूं। सारे देवता मेरे पीछे-पीछे जाते हैं। तुम शत्रु-धनका अङ्ग मुझे देते हो; इसलिये मेरे साथ पुरुषार्थ करो।

२ तुम्हारे लिये पहले मैं मधुकर सोम-रूप अन्न (भक्षण) देता हूं। तुम्हारे हृदयमें अभिषुत सोम निहित हो। तुम मेरे दक्षिण भागमें मित्ररूप होकर अवस्थित होओ। पश्चात् हम दोनों अनेक असुरोंका वध करेंगे।

प्र सु स्तोमं भरत वाजयन्त इन्द्राय सत्यं यदि सत्यमस्ति ।
नेन्द्रो अस्तीति नेम उ त्व आह क ईं ददर्श कमभिष्टवाम ॥३॥
अयमस्मि जरितः पश्य मेह विश्वा जातान्यभ्यस्मि मह्ना ।
ऋतस्य मा प्रदिशो वर्धयन्त्यादर्दिरो भुवना दर्दरीमि ॥४॥
आ यन्मा वेना अरुहन्नृतस्यँ एकमासीनं हर्यतस्य पृष्ठे ।
मनश्चिन्मे हृद आ प्रत्यवोचदचिक्रदञ्छिशुमन्तः सखायः ॥५॥
विश्वेत्ता ते सवनेषु प्रवाच्या या चकर्थ मघवन्निन्द्र सुन्वते ।
पारावतं यत् पुरुसम्भृतं वस्वपावृणोः शरभाय ऋषिबन्धवे ॥६॥
प्र नूनं धावता पृथङ्नेह यो वो अवावरीत् ।
नि षीं वृत्रस्य मर्मणि वज्रमिन्द्रो अपीपतत् ॥७॥
मनोजवा अयमान आयसीमतरत् पुरम् ।
दिवं सुपर्णो गत्वाय सोमं वज्रिण आभरत् ॥८॥

---

३ युद्धेच्छुको, यदि इन्द्रकी सत्ता सच्ची हो, तो इन्द्रके लिये सत्य-रूप सोमका उच्चारण करो। भार्गव नेम ऋषिका मत है कि, इन्द्र नामका कोई नहीं है। इन्द्रको किसीने देखा है? फलतः हम किसकी स्तुति करें?

४ स्तोता नेम, यह मैं तुम्हारे पास आ गया हूँ। मुझे देखो मैं सारे संसारको, महिमाके द्वारा, दबाता हूँ। सत्य यज्ञके द्रष्टा मुझे वर्द्धित करते हैं। मैं विदारण-परायण हूँ। मैं सारे भुवनोंको विदीर्ण करता हूँ।

५ जिस समय यज्ञाभिलाषियोंने कमनीय अन्तरीक्षकी पीठपर अकेले बैठे हुए मुझे चढ़ाया था, उस समय उन लोगोंके मनने ही मेरे हृदयमें उत्तर दिया था कि, पुत्र-युक्त प्रिय मेरे लिये रो रहे हैं।

६ धनी इन्द्र, यज्ञमें सोमाभिषव करनेवालोंके लिये तुमने जो कुछ किया है, वह सब कहने योग्य है। परावत् नामके शत्रुका जो धन है, उसे तुमने ऋषि-मित्र शरभके लिये, यथेष्ट रूपमें, प्रकट किया था।

७ जो शत्रु इस समय दौड़ रहा है—पृथक् नहीं ठहरता और जो तुम्हें नहीं रुकता, उसके मर्म-स्थानमें इन्द्रने वज्रपात किया है।

८ मनके समान वेगवान् और गमनशील सुपर्ण (गरुड़) लौहमय नगरके पार गये। अनन्तर स्वर्गमें जाकर इन्द्रके लिये सोम ले आये।

समुद्रे अन्तः शयत उन्दा वज्रो अभीवृतः ।
भरन्त्यस्मै संयतः पुरःप्रस्रवणा बलिम् ॥९॥
यद्वाग्वदन्त्यविचेतनानि राष्ट्री देवानां निषसाद मन्द्रा ।
चतस्र ऊर्जं दुदुहे पयांसि क्व स्विदस्याः परमं जगाम ॥१०॥
देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति ।
सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु ॥११॥
सखे विष्णो वितरं विक्रमस्व द्यौर्देहि लोकं वज्राय विष्कभे ।
हनाव वृत्रं रिणचाव सिन्धूनिन्द्रस्य यन्तु प्रसवे विसृष्टाः ॥१२॥

९० सूक्त

मित्र और वरुण देवता । ५ के शेषांशके और ६ के आदित्य, ७-८ के अश्विद्वय, ९-१० के वायु, ११-१२ के सूर्य, १३ के उषा, १४ के पवमान और १५ १६ के गो देवता । भृगुगोत्रीय जमदग्नि ऋषि । त्रिष्टुप्, गायत्री और परासतोबृहती छन्द ।

ऋधगित्था स मर्त्यः शशमे देवतातये ।
यो नूनं मित्रावरुणावभिष्टय आचक्रे हव्यदातये ॥१॥

---

९ जो वज्र समुद्रके बीच सोता है और जो जलमें ढका हुआ है, उसी वज्रके लिये संग्राममें आगे जानेवाले शत्रु (आत्म-बलि-रूप) उपहार धारण करते हैं ।

१० राष्ट्री (प्रदीपक) और देवोंको आनन्द-मग्न करनेवाला वाक्य जिस समय अज्ञानियोंको ज्ञान देते हुए यज्ञमें बैठता है, उस समय चारो ओरके लिये अन्न और जलका दोहन करता है । उस (माध्यमिकी वाक्) में जो श्रेष्ठ है, वह कहाँ जाता है ?

११ देवता लोग जिस दीप्तिमान् वाग्देवीको उत्पन्न करते हैं, उसे ही सभी प्रकारके पशु भी बोलते हैं । वह हर्ष देनेवाली वाक्, अन्न और रस देनेवाली धेनुके समान हमसे स्तुत होकर, हमारे पास आवे ।

१२ मित्र विष्णु, तुम अत्यन्त पाद-विक्षेप करो । द्युलोक, तुम वज्रके गमनके लिये अवकाश प्रदान करो । तुम और मैं वृत्रका बध करूँगा और नदियोंको (समुद्रकी ओर) ले जाऊँगा । नदियाँ इन्द्रकी आज्ञाके अनुसार गमन करें ।

---

१ जो मनुष्य हविः-प्रदाता यजमानके लिये, अभिमतकी सिद्धिके लिये, मित्र और वरुणका सम्बोधन करता है, वह सचमुच इस प्रकार यज्ञके लिये हविका संस्कार करता है ।

वर्षिष्ठक्षत्रा उरुचक्षसा नरा राजना दीर्घश्रुत्तमा ।
ता बाहुता न दंसना रथर्यतः साकं सूर्यस्य रश्मिभिः ॥२॥
प्र यो वां मित्रावरुणाजिरो दूतो अद्रवत् । अयःशीर्षा मदेरघुः ॥३॥
न यः संपृच्छे न पुनर्हवीतवे न संवादाय रमते ।
तस्मान्नो अद्य समृतेरुरुष्यतं बाहुभ्यां न उरुष्यतम् ॥४॥
प्र मित्राय प्रार्यम्णे सचथ्यमृतावसो ।
वरूथ्यं वरुणे छन्द्यं वचः स्तोत्रं राजसु गायत ॥५॥
ते हिन्विरे अरुणं जेन्यं वस्वेकं पुत्रं तिसृणाम् ।
ते धामान्यमृता मर्त्यानामदब्धा अभिचक्षते ॥६॥
आ मे वचांस्युद्यता द्युमत्तमानि कर्त्वा ।
उभा यातं नासत्या सजोषसा प्रति हव्यानि वीतये ॥७॥

२ अतीव वर्द्धित-बल, महादर्शन, नेता, दीप्तिमान् तथा अतीव विद्वान् वे मित्र और वरुण दोनों बाहुओंके समान, सूर्य-किरणोंके साथ, कर्म प्राप्त करते हैं।

३ मित्र और वरुण, जो गमन-शील यजमान तुम्हारे सामने जाता है, वह देवोंका दूत होता है। उसका मस्तक सुवर्ण-मण्डित होता है और वह मदकर सोम प्राप्त करता है ।

४ जो शत्रु बार-बार पूछनेपर भी आनन्दित नहीं होता, जो बार-बार बुलानेपर भी आनन्दित नहीं होता और जो कथोपकथनपर भी आनन्दित नहीं होता, उसके युद्धसे हमें आज बचाओ, उसके बाहुओंसे हमें बचाओ ।

५ यज्ञ-धन, मित्रके लिये सेवनीय और यज्ञगृहोत्पन्न स्तोत्रका गान करो। अर्यमाके लिये गाओ। वरुणके लिये प्रसन्नता-दायक गान करो। मित्र आदि तीन राजाओंके लिये गाओ।

६ अरुणवर्ण, जयसाधन और वासप्रद पृथिवी, अन्तरीक्ष तथा आकाश (द्युलोक) आदि तीनों-के लिये देवता लोग एक पुत्र (सूर्य) को प्रेरित करते हैं। अहिंसित और अमर देवगण मनुष्योंके स्थान देखते हैं।

७ सत्य-प्रणेता अश्विद्वय, मेरे उच्चारित और दीप्त वाक्यों और कर्मोंके लिये आओ। हव्य-भक्षणके लिये जाओ।

रातिं यद्वामरक्षसं हवामहे युवाभ्यां वाजिनीवसू ।
प्राचीं होत्रां प्रतिरन्ताचितं नरा गृणाना जमदग्निना ॥८॥
आ नो यज्ञं दिविस्पृशं वायो याहि सुमन्मभिः ।
अन्तः पवित्र उपरि श्रीणानोऽयं शुक्रो अयामि ते ॥९॥
वेत्यध्वर्युः पथिभी रजिष्ठैः प्रति हव्यानि वीतये ।
अधा नियुत्व उभयस्य नः पिब शुचिं सोमं गवाशिरम् ॥१०॥
बण्महाँ असि सूर्य बलादित्य महाँ असि ।
महस्ते सतो महिमा पनस्यतेऽद्धा देव महाँ असि ॥११॥
बट् सूर्य श्रवसा महाँ असि सत्रा देव महाँ असि ।
मह्ना देवानामसूर्यः पुरोहितो विभु ज्योतिरदाभ्यम् ॥१२॥
इयं या नीच्यर्किणी रूपा रोहिण्या कृता ।
चित्रेव प्रत्यदर्श्यायत्यन्तर्दशसु बाहुषु ॥१३॥

---

८ अन्न और धनवाले अश्विद्वय, तुम लोगोंका राक्षस-शून्य जो दान है, उसको जिस समय हम माँगेंगे, उस समय तुम लोग जमदग्निके द्वारा स्तुत होकर तथा पूर्वमुख और स्तुति-वर्द्धक नेता होकर आना।

९ वायु, तुम हमारी सुन्दर स्तुतिसे स्वर्ग-स्पर्शी यज्ञमें आना। पवित्र (घृत, वेद मन्त्र, कुश आदि)के बीच आश्रित यह शुभ्र सोम तुम्हारे लिये नियत हुआ था।

१० नियुत् अश्वोंवाले वायु, अध्वर्यु सरलतम मार्गसे जाता है। वह तुम्हारे भक्षणके लिये हवि ले जाता है। हमारे लिये दोनों प्रकारके (शुद्ध और दुग्ध-मिश्रित) सोमका पान करो।

११ सूर्य, सचमुच तुम महान् हो। आदित्य, तुम महान् हो, यह बात सच्ची है। तुम महान् हो, तुम्हारी महिमा स्तुत होती है। देव, तुम महान् हो, यह बात सच्ची है।

१२ तुम सुननेमें महान् हो, यह बात सच्ची है। देवोंमें, तुम महिमाके द्वारा महान् हो, यह बात सत्य है। तुम शत्रु-विनाशक हो और तुम देवोंके हितोपदेशक हो। तुम्हारा तेज महान् और अहिंसनीय है।

१३ यह जो निम्नमुखी, स्तुतिमती, रूपवती और प्रकाशवती उषा, सूर्य-प्रभावके द्वारा, उत्पादित हुई हैं, वह ब्रह्माण्डकी बहु-स्थानीय दसों दिशाओंमें आती हुई, चित्रा गायके समान, देखी जाती हैं।

प्रजा ह तिस्रो अत्यायमीयुर्न्यन्या अर्कमभितो विविश्रे ।
बृहद्ध तस्थौ भुवनेष्वन्तः पवमानो हरित आ विवेश ॥१४॥
माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः ।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट ॥१५॥
वचोविदं वाचमुदीरयन्तीं विश्वाभिर्धीभिरुपतिष्ठमानाम् ।
देवीं देवेभ्यः पर्येयुषीं गामा मावृक्त मर्त्यो दभ्रचेताः ॥१६॥

६१ सूक्त

अग्नि देवता। भागव प्रयोग, बृहस्पति पुत्र अग्नि वा सहके पुत्र गृहपति यविष्ठ ऋषि। गायत्री छन्द।

त्वमग्ने बृहद्वयो दधासि देव दाशुषे । कविर्गृहपतिर्युवा ॥१॥
स न ईळानया सह देवाँ अग्ने दुवस्युवा । चिकिद्विभानवावह ॥२॥

---

१४ तीन प्रजाएँ अतिक्रमण करके चली गयी थीं। अन्य प्रजाएँ पूजनीय अग्निकी चारो ओर आश्रित हुई थीं। भुवनोंमें आदित्य महान् होकर अवस्थित हुए थे। पवमान (वायु) दिशाओंमें घुस गये।

१५ जो गौ रुद्रोंकी माता, वसुओंकी पुत्री, आदित्योंकी भगिनी और दुग्धका निवास-स्थान है, मनुष्यो, उस निरपराध और अदीन (अदिति) गो-देवीका वध नहीं करना। मैंने इस बातको बुद्धिमान् मनुष्यसे कहा था।

१६ वाक्य-दात्री, वचन उच्चारण करनेवाली, सारे वाक्योंके साथ उपस्थित, प्रकाशमाना और देवताके लिये मुझे जाननेवाली गोदेवीको छोटी बुद्धिका मनुष्य ही परिवर्जित करता है।

---

१ प्रकाशमान अग्नि, तुम कवि (क्रान्तकर्मा), गृहपालक और नित्य तरुण हो। तुम हव्य-दाता यजमानको महान् अन्न देते हो।

२ विशिष्ट दीप्तिवाले अग्नि, तुम ज्ञाता होकर हमारे वाक्यसे देवोंको ले आओ। हम स्तुति और परिचर्या करते हैं।

त्वया ह स्विद्युजा वयं चोदिष्ठेन यविष्ठ्य । अभि ष्मो वाजसातये ॥३॥

और्वभृगुवच्छुचिमप्नवानवदा हुवे । अग्निं समुद्रवाससम् ॥४॥

हुवे वातस्वनं कविं पर्जन्यक्रन्द्यं सहः । अग्निं समुद्रवाससम् ॥५॥

आ सवं सवितुर्यथा भगस्येव भुजिं हुवे । अग्निं समुद्रवाससम् ॥६॥

अग्निं वो वृधन्तमध्वराणां पुरूतमम् । अच्छा नप्त्रे सहस्वते ॥७॥

अयं यथा न आभुवत्त्वष्टा रूपेव तक्ष्या । अस्य क्रत्वा यशस्वतः ॥८॥

अयं विश्वा अभि श्रियोऽग्निर्देवेषु पत्यते । आ वाजैरुप नो गमत् ॥९॥

विश्वेषामिह स्तुहि होतॄणां यशस्तमम् । अग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम् ॥१०॥

शीरं पावकशोचिषं ज्येष्ठो यो दमेष्वा । दीदाय दीर्घश्रुत्तमः ॥११॥

---

३ युवतम अग्नि, तुम अतीव धन-प्रेरक हो, तुम्हें सहायक पाकर हम, अन्न-लाभके लिये, शत्रुओंको दबावेंगे ।

४ मैं समुद्र-मध्यस्थित और शुद्ध अग्निको, और्व भृगु और अप्नवानके समान, बुलाता हूँ ।

५ वायुके समान ध्वनिवाले, मेघके समान क्रन्दन करनेवाले, कवि, बली और समुद्र-शायी अग्निको मैं बुलाता हूँ ।

६ सूर्यके प्रसवके समान और भग देवताके भोगके समान समुद्रशायी अग्निको मैं बुलाता हूँ ।

७ अहिंसनीय (अध्वर) लोगोंके बन्धु, बली, वर्द्धमान और बहुतम अग्निकी ओर, ऋत्विको, तुम जाओ ।

८ यही अग्नि हमारे कर्त्तव्यको बनाते हैं । हम अग्निके प्रज्ञानसे यशस्वी होंगे ।

९ देवोंके बीच अग्नि ही मनुष्योंकी सारी सम्पदाएँ प्राप्त करते हैं । अग्नि, अन्नके साथ, हमारे पास आवें ।

१० स्तोता, सारे होताओंमें अधिक यशस्वी और यज्ञमें प्रधान अग्निकी, इस यज्ञमें, स्तुति करो ।

११ देवोंके बीच प्रधान और अतिशय विद्वान् अग्नि याज्ञिकोंके गृहमें प्रदीप्त होते हैं । पवित्र दीप्तिवाले और शयन करनेवाले अग्निकी स्तुति करो ।

तमर्वन्तं न सानसिं गृणीहि विप्र शुष्मिणम्। मित्रं न यातयज्जनम् ॥१२॥
उप त्वा जामयो गिरो देदिशतीर्हविष्कृतः। वायोरनीके अस्थिरन् ॥१३॥
यस्य त्रिधात्ववृतं बर्हिस्तस्थावसन्दिनम्। आपश्चिन्नि दधा पदम् ॥१४॥
पदं देवस्य मीळ्हुषोऽनाधृष्टाभिरूतिभिः। भद्रा सूर्यइवोपदृक् ॥१५॥
अग्ने घृतस्य धीतिभिस्तेपानो देव शोचिषा। आ देवान्वक्षि यक्षि च ॥१६॥
तं त्वाजनन्त मातरः कविं देवासो अङ्गिरः। हव्यवाहममर्त्यम् ॥१७॥
प्रचेतसं त्वा कवेऽग्ने दूतं वरेण्यम्। हव्यवाहं नि षेदिरे ॥१८॥
नहि मे अस्त्यघ्न्या न स्वधितिर्वनन्वति। अथैतादृग्भरामि ते ॥१९॥
यदग्ने कानि कानि चिदा ते दारूणि दध्मसि। ता जुषस्व यविष्ठ्य ॥२०॥

---

१२ मेधावी स्तोता, अश्वके समान भोग-योग्य, बली और मित्रके समान शत्रु-निधन-कारी अग्निकी स्तुति करो।

१३ अग्नि, यजमानके लिये स्तुतियाँ, भगनियोंके समान, तुम्हारे गुण गाते हुए तुम्हारी सेवा करती हैं। तुम्हें वायुके समीप स्थापित भी करती हैं।

१४ जिन अग्निके तीन छिपे और न बँधे हुए कुश हैं, उन अग्निमें जल भी स्थान पाता है।

१५ अभीष्ट-वर्षक और प्रकाशमान अग्निका स्थान सुरक्षित और भोग्य है। उनकी दृष्टि भी, सूर्यके समान, मङ्गलमयी है।

१६ अग्निदेव, दीप्ति-साधक घीके निधान (आगार) के द्वारा तृप्त होकर ज्वालाके द्वारा देवोंको बुलाओ और यज्ञ करो।

१७ अङ्गिरा अग्नि, कवि, अमर, हव्यदाता और प्रसिद्ध अग्निको, (तुमको) देवोंने, माताओंके समान, उत्पन्न किया है।

१८ कवि अग्नि, तुम प्रकृष्ट बुद्धि, वरणीय दूत और देवोंके हव्यवाहक हो। तुम्हारी चारो ओर देवता लोग बैठते हैं।

१९ अग्नि, मेरे (ऋषिके) पास गाय नहीं है, काठको काटनेवाला फरसा भी नहीं है। यह सब मैं तुमको दे चुका।

२० युवकतम अग्नि, तुम्हारे लिये जब मैं कोई काई काम करता हूँ, तब तुम अपरशु-छिन्न काष्ठोंकी ही सेवा करते हो।

यदत्त्युपजिह्विका यद्वम्रो अतिसर्पति । सर्वं तदस्तु ते घृतम् ॥२१॥

अग्निमिन्धानो मनसा धियं सचेत मर्त्यः । अग्निमीधे विवस्वभिः ॥२२॥

९२ सूक्त

अग्नि और मरुद्गण देवता । सोभरि ऋषि । सतोबृहती, ककुप्, गायत्री, अनुष्टुप् और बृहती छन्द ।

अदर्शि गातुवित्तमो यस्मिन्व्रतान्यादधुः ।
उपो षु जातमार्यस्य वर्धनमग्निं नक्षन्त नो गिरः ॥१॥

प्र दैवोदासो अग्निर्देवाँ अच्छा न मज्मना ।
अनु मातरं पृथिवीं वि वावृते तस्थौ नाकस्य सानवि ॥२॥

यस्माद्रेजन्त कृष्टयश्चर्कृत्यानि कृण्वतः ।
सहस्रसां मेधसाताविव त्मनाग्निं धीभिः सपर्यत ॥३॥

२१ जिन काठोंको तुम्हारी ज्वाला जलाती है और जिनको तुम्हारी जीभ (ज्वाला) लाँघ कर जाती है, वह सब काठ घीके समान हों ।

२२ मनुष्य काठके द्वारा अग्निको जलाते हुए मनके द्वारा कर्मका आचरण करता है और ऋत्विकोंके द्वारा अग्निको समिद्ध करता है ।
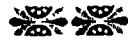
१ जिस अग्निमें सारे कर्मोंका, यजमानोंके द्वारा, आधान होता है, अतिशय मार्गज्ञाता वही अग्नि प्रकट हुए । आर्योंके वर्द्धक अग्निके सम्यक् प्रादुर्भूत होनेपर हमारी स्तुतियाँ अग्निके पास जाती हैं ।

२ दिवोदासके द्वारा आहूत अग्नि माता पृथिवीके सामने देवोंके लिये हव्य वहन करनेमें प्रवृत्त नहीं हुए; क्योंकि दिवोदासने बल-पूर्वक अग्निका आह्वान किया था; इसलिये अग्नि स्वर्गके पास ही रहे ।

३ कर्त्तव्य-परायण मनुष्योंके यहाँ अन्य मनुष्य काँपते हैं । फलतः हे मनुष्यो, तुम इस समय सहस्र धनोंके दाता अग्निकी, यज्ञमें कर्त्तव्य कर्मके द्वारा, स्वयम् सेवा करो ।

प्र यं राये निनीषसि मर्तो यस्ते वसो दाशत् ।
स वीरं धत्ते अग्न उक्थशंसिनं त्मना सहस्रपोषिणम् ॥४॥
स दृह्ले चिदभि तृणत्ति वाजमर्वता स धत्ते अक्षिति श्रवः ।
त्वे देवत्रा सदा पुरूवसो विश्वा वामानि धीमहि ॥५॥
यो विश्वा दयते वसु होता मन्द्रो जनानाम् ।
मधोर्न पात्रा प्रथमान्यस्मै प्र स्तोमा यन्त्यग्नये ॥६॥
अश्वं न गीर्भी रथ्यं सुदानवो मर्मृज्यन्ते देवयवः ।
उभे तोके तनये दस्म विश्पते पर्षि राधो मघोनाम् ॥७॥
प्र मंहिष्ठाय गायत ऋताव्ने बृहते शुक्रशोचिषे । उपस्तुतासो अग्नये ॥८॥
आ वंसते मघवा वीरवद्यशः समिद्धो द्युम्न्याहुतः ।
कुविन्नो अस्य सुमतिर्नवीयस्यच्छा वाजेभिरागमत् ॥९॥
प्रेष्ठमु प्रियाणां स्तुह्यासावातिथिम् । अग्निं रथानां यमम् ॥१०॥

---

४ निवास दाता अग्नि, धन-दानके लिये तुम जिसे शिक्षित करते हो और जो मनुष्य तुम्हें हव्य देता है, वह मनुष्य मन्त्र-प्रशंसक और स्वयं सहस्र-पोषक पुत्रको प्राप्त करता है।

५ बहुत धनवाले अग्नि, जो तुम्हारे लिये हव्य देता है, वह दृढ़ शत्रु-नगरमें स्थित अन्नको, अश्वकी सहायतासे, नष्ट करता है—वह वाक्षत अन्नको धारण करता है । हम भी देव-स्वरूप तुम्हारे लिये हव्य देते हुए तुममें स्थित सब प्रकारके धनका धारण करेंगे।

६ जो अग्निदेवोंको बुलानेवाले और आनन्दमय हैं और जो मनुष्योंको अन्न देते हैं, उन्हीं अग्निके लिये मदकर सोमके प्रथम पात्र जाते हैं ।

७ दर्शनीय और लोक-पालक अग्नि, सुन्दर दानवाले और देवाभिलाषी यजमान, रथ-वाहक अश्वके समान, स्तुतिके द्वारा तुम्हारी परिचर्या करते हैं, वही तुम हमारे पुत्रों और पौत्रोंके लिये धनियोंका दान दो।

८ स्तोताओ, तुम सर्व-श्रेष्ठदाता, यज्ञवाले, सत्यवाले, विशाल और प्रदीप्त तेजवाले अग्निके लिये स्तोत्र पढ़ो ।

९ धनी और अन्नवाले अग्नि सन्दीप्त, वीरके समान प्रतापसे युक्त और बुलाये जानेपर यशस्कर अन्न प्रदान करते हैं। उनकी अभिनव अनुग्रह-बुद्धि, अन्नके साथ, अनेक बार हमारे पास आवे ।

१० स्तोता, प्रियोंमें प्रियतम, अतिथि और रथोंके नियामक अग्निकी स्तुति करो।

उदि्ता यो निदिता वेदि्ता वस्वा यज्ञियो ववर्तति ।
दुष्टरा यस्य प्रवणे नोर्मयो धिया वाजं सिषासतः ॥११॥
मा नो हृणीतामतिथिर्वसुरग्निः पुरुप्रशस्त एषः । यः सुहोता स्वध्वरः ॥१२॥
मो ते रिषन्ये अच्छोक्तिभिर्वसोऽग्ने केभिश्चिदेवैः ।
कीरिश्चिद्धि त्वामीट्टे दूत्याय रातहव्यः स्वध्वरः ॥१३॥
आग्ने याहि मरुत्सखा रुद्रेभिः सोमपीतये ।
सोभर्या उपसुष्टुतिं मादयस्व स्वर्णरे ॥१४॥

---

११ ज्ञानी और यज्ञ-योग्य जो अग्नि उदित और श्रुत जिस धनको आवर्तित करते हैं और कर्म द्वारा युद्धेच्छुक जिन अग्निकी ज्वाला निम्नमुखगामी समुद्र-तरङ्गके समान दुस्तर है, उन्हीं अग्निकी स्तुति करो।

१२ वासप्रद, अतिथि, बहु-स्तुत, देवोंके उत्तम आह्वानकर्ता और सुन्दर यज्ञवाले अग्नि हमारे लिये किसीके द्वारा रोके न जायँ।

१३ वासप्रद अग्नि, जो मनुष्य स्तुतिके द्वारा और सुखावह अनुगामितासे तुम्हारी सेवा करते हैं, वे मारे न जायँ। सुन्दर यज्ञवाले और हव्यदाता स्तोता भी, दूत-कर्मके लिये, तुम्हारी स्तुति करता है।

१४ अग्नि, तुम मरुतोंके प्रिय हो। हमारे यज्ञ-कर्ममें, सोम-पानके लिये, मरुतोंके साथ आओ। सोभरिकी (मेरी) शोभन स्तुतिके पास आओ। सोम पीकर मत्त होओ।

अष्टम मण्डल समाप्त

बालखिल्यसूक्त*

१ सूक्त

इन्द्र देवता। कण्वके पुत्र प्रस्कण्व ऋषि। अयुक् और युक् बृहती छन्द।

अभि प्र वः सुराधसमिन्द्रमर्च यथा विदे।
यो जरितृभ्यो मघवा पुरूवसुः सहस्रेणेव शिक्षति ॥१॥

शतानीकेव प्र जिगाति धृष्णुया हन्ति वृत्राणि दाशुषे।
गिरेरिव प्र रसा अस्य पिन्विरे दत्राणि पुरुभोजसः ॥२॥

आ त्वा सुतास इन्दवो मदाय इन्द्र गिर्वणः।
आपो न वज्रिन्नन्वोक्यं सरः पृणन्ति शूर राधसे ॥३॥

---

१ इस प्रकार सुन्दर धनवाले इन्द्रको सामने करके पूजो, जिससे मैं धन प्राप्त कर सकूं। इन्द्र धनी—बहुत धनवाले हैं। वह स्तोताओंको हजार-हजार धन देते हैं।

२ इन्द्र गर्वके साथ जाते हैं—मानों वह सौ सेनाओंके स्वामी हैं। वह हव्यदाताके लिये वृत्र-वध करते हैं। इन्द्र अनेकोंके पालक हैं। उनके लिये दिया गया सोम-रस पर्वतके सोमरसके समान प्रसन्न करता है।

३ स्तुत्य इन्द्र, जो सब सोम मदकारी है, वह सब तुम्हारे लिये अभिषुत हुआ है। वज्रधर शूर, इस समय धनके लिये जल आने वाले स्थान सरोवरको भरता है।

---

* पुराणोंके अनुसार ब्रह्माके शरीरके लोमोंसे उत्पन्न उनके मानस पुत्रोंका नाम बालखिल्य है। ये अँगूठेके जोड़के परिमाणके हैं और इनकी संख्या साठ हजार है। कहा जाता है कि, अष्टम मण्डलके ४८वें सूक्तके बादके ११ सूक्तोंके प्रथम कर्ता या स्मर्ता ये ही हैं। परन्तु सायणाचार्यने ऋग्वेद-भाष्यमें न तो इन सूक्तोंपर भाष्य किया है, न इनका उल्लेख ही। ऐतरेय ब्राह्मणकी टीकामें सायणने इनकी संख्या भी कम अर्थात् आठ ही मानी है। ऋग्वेदके सब सूक्त १०१७ हैं; किन्तु इन ११ सूक्तोंको मिलानेसे सूक्त-संख्या १०२८ हो जाती है। जो हो; परन्तु इन सूक्तोंका उल्लेख पृथक् होते हुए भी इनकी प्रसिद्धि अत्यधिक है; इसलिये इनका हिन्दी-अनुवाद कर देना आवश्यक समझा गया। ये सूक्त अनेक विद्वानोंको कण्ठस्थ हैं—इनकी प्रतिष्ठा भी यथेष्ट है।

अनेहसं प्रतरणं विवक्षणं मध्वः स्वादिष्ठमीं पिब ।
आ यथा मन्दसानः किरासि नः प्र क्षुद्रेव त्मना धृषत् ॥४॥
आ नः स्तोममुप द्रवद्धियानो अश्वो न सोतृभिः ।
यं ते स्वधावन्त्स्वदयन्ति धेनव इन्द्र कण्वेषु रातयः ॥५॥
उग्रं न वीरं नमसोप सेदिम विभूतिमक्षितावसुम् ।
उद्रीव वज्रिन्नवतो न सिञ्चते क्षरन्तीन्द्र धीतयः ॥६॥
यद्ध नूनं यद्वा यज्ञे यद्वा पृथिव्यामधि ।
अतो नो यज्ञमाशुभिर्महेमत उग्र उग्रेभिरा गहि ॥७॥
अजिरासो हरयो ये त आशवो वाता इव प्रसक्षिणः ।
येभिरपत्यं मनुषः परीयसे येभिर्विश्वं स्वर्दृशे ॥८॥
एतावतस्त ईमह इन्द्र सुम्नस्य गोमतः ।
यथा प्रावो मघवन्मेध्यातिथिं यथा नीपातिथिं धने ॥९॥

---

४ तुम सोमके निष्पाप, रक्षक, स्वर्गदाता और मधुरतम रसका पान करो; क्योंकि प्रमत्त होनेपर तुम स्वयं सगर्व होते और "क्षुद्रा" नामकी दात्रीके समान हमें अभिलषित दान करते हो।

५ अन्नवाले इन्द्र, कण्वोंके लिये तुमने जो प्रसन्नता-दायक दान दिया है, वही दान स्तोम (स्तोत्र) को मोटा करता है। अभिषव करनेवालोंके बुलानेपर अश्वके समान तुम उसी स्तोमकी ओर शीघ्र आओ।

६ इस समय हम विभूति और अक्षय्य धनसे युक्त तथा उग्र और वीर इन्द्रके पास, नमस्कारके साथ, जायँगे वज्री इन्द्र जैसे जलवाला कुँआ जल-सिञ्चन करता है, वैसे ही सारे स्तोत्र तुम्हें सिक्त करते हैं।

७ इस समय जहाँ भी हो, यज्ञमें अथवा पृथिवीमें हो, वहींसे, हे उग्र और महामति इन्द्र, तुम उग्र और शीघ्रगामी अश्वके साथ, हमारे यज्ञमें आओ।

८ तुम्हारे हरि अश्व वायुके समान शीघ्रगामी और शत्रु-जेता हैं। उनकी सहायतासे तुम मनुष्योंके पास जाते हो और सारे पदार्थोंको देखनेके लिये संसारमें आया करते हो।

९ इन्द्र, तुम्हारा गौसे संयुक्त इतना धन माँगता हूँ। धनी इन्द्र, तुमने मेध्यातिथि और नीपातिथिकी, धनके सम्बन्धमें, रक्षा की थी।

यथा कण्वे मघवन्त्रसदस्यवि यथा पक्थे दशव्रजे ।
यथा गोशर्ये असनोॠजिश्वनीन्द्र गोमद्धिरण्यवत् ॥१०॥

२ सूक्त

इन्द्र देवता। पुष्टिगु ऋषि। अयुक् बृहती और युक् सतोबृहती छन्द।

प्रसुश्रुतं सुराधसमर्चा शक्रमभिष्टये ।
यः सुन्वते स्तुवते काम्यं वसु सहस्रेणेव मंहते ॥१॥
शतानीका हेतयो अस्य दुष्टरा इन्द्रस्य समिषो महीः ।
गिरिर्न भुज्मा मघवत्सु पिन्वते यदीं सुता अमन्दिषुः ॥२॥
यदीसुतास इन्दवो भि प्रियममन्दिषुः ।
आपो न धायि सवनं म आवसो दुघा इवोप दाशुषे ॥३॥
अनेहसं वाहवमान मूतये मध्वः क्षरन्ति धीतयः ।
आ त्वा वसो हवमानास इन्दव उप स्तोत्रेषु दधिरे ॥४॥

---

१० धनी इन्द्र, तुमने कण्व, त्रसदस्यु, पक्थ, दशव्रज, गोशर्य और ऋजिश्वाको गौ और हिरण्यवाला धन दिया था ।

---

१ धन-प्राप्तिके लिये विख्यात और सुन्दर धनवाले शक्र (इन्द्र) की पूजा करो। वह अभिषवकर्ता और स्तोताको हजार-हजार कमनीय धन देते हैं ।

२ इनके अस्त्र सौ हैं। ये इन्द्रके अन्नसे उत्पन्न हैं। जिस समय अभिषुत सोम इनको प्रमत्त करता है, उस समय ये पर्वतके समान खाद्य देनेवाले होकर धनियोंको प्रसन्न करते हैं।

३ जिस समय अभिषुत सोमने प्रिय इन्द्रको प्रमत्त किया, उस समय, हे इन्द्र, हव्यदाताके लिये, गायोंकी तरह, यज्ञमें जल रखा गया ।

४ ऋत्विको, तुम्हारे रक्षणके लिये सारे कर्म निष्पाप और बुलाये जानेवाले इन्द्रके लिये मधु गिराते हैं। वासदाता इन्द्र, सोम लाया जाकर, स्तोत्र-समयमें, तुम्हारे सामने रखा जाता है।

आ नः सोमे स्वध्वर इयानो अत्योनतो शते ।
यं ते स्वदावन्त्स्वदन्ति गूर्तयः पौरे छन्दयसे हवम् ॥५॥
प्रवीरमुग्रं विविचिं धनस्पृतं विभूतिं राधसो महः ।
उद्रीवबज्रिन्नवतो वसुत्वना सदा पीपेथ दाशुषे ॥६॥
यद्ध नूनं परावति यद्वा पृथिव्यां दिवि ।
युजान इन्द्र हरिभिर्महे मत ऋष्व ऋष्वेभिरागहि ॥७॥
रथिरासो हरयो ये ते अस्त्रिध ओजो वातस्य पिप्रति ।
येभिर्निदस्युं मनुषो निघोष यो येभिः स्वः परीयसे ॥८॥
एतावतस्ते वसो विद्यामशूर नव्यसः ।
यथा प्राव एतशं कृत्व्ये धने यथा वशं दशव्रजे ॥९॥
यथा कण्वे मघवन्मेधे अध्वरे दीर्घनीथेदमूनसि ।
यथा गोशर्ये असिषासो अद्रिवो मयि गोत्रं हरिश्रियम् ॥१०॥

---

५ हमारे सुन्दर यज्ञवाले सोमसे प्रेरित होकर इन्द्र अश्वके समान जा रहे हैं। स्वाद-वाले इन्द्र, तुम्हारे स्तोता इस सोमको सुस्वादु बना रहे हैं। तुम पुरु-पुत्रके बुलावेको प्रसन्न करो।

६ वीर, उग्र, व्याप्त, धनके द्वारा प्रसन्नता-दायक और महाधनके विभूति-रूप इन्द्रकी हम स्तुति करते हैं। वज्रधर इन्द्र, जलवाले कुएँके समान, सदा व्यापक धनके साथ, हव्यदाताके मङ्गलके लिये सोम पान करो।

७ दर्शनीय और महामति इन्द्र, तुम दूर देशमें हो, पृथ्वीपर रहो अथवा स्वर्गमें, दर्श-नीय हरियोंको रथमें जोतकर आओ।

८ तुम्हारे जो रथ-वाहक अश्व हैं, वे अहिंसित और वायुवेगको पूरा करनेवाले हैं। इन्हींकी सहायतासे तुमने दस्युओंको मारा है। तुमने मनुको (मानव आर्योंको) विख्यात किया है और सारे पदार्थोंको व्याप्त किया है।

९ शूर और निवासदाता इन्द्र, तुम्हारे "इतने" और नये धनकी बात विदित है। तुमने इसी प्रकार धनके लिये एतश और दशव्रजसे युक्त वशको बचाया है।

१० धनी और वज्री इन्द्र, तुमने पवित्र यज्ञमें कवि, शत्रुनाशके अभिलाषी दीर्घनीथ और गोशर्यको जिस प्रकार बचाया था, उसी प्रकार अश्वोंकी सहायतासे हमारी भी रक्षा करो।

३ सूक्त

इन्द्र देवता। श्रुष्टिगु ऋषि। अयुक् बृहती और युक् सतोबृहती छन्द।

यथा मनौ सांवरणौ सोममिन्द्रापिबः सुतम्।
नीपातिथौ मघवन्मेध्यातिथौ श्रुष्टिगौ सचा ॥१॥
पार्षद्वाणः प्रस्कण्वं समसादयच्छयानं जिव्रिमुद्धितम्।
सहस्राण्यशिषासद्गवामृषिस्त्वोतो दस्यवे वृक ॥२॥
य उक्थेभिर्न विन्धते चिकिद्य ऋषिचोदनः।
इन्द्रं तमच्छा वद नव्यस्या मत्यरिष्यन्तं न भोजसे ॥३॥
यस्मा अर्कं सप्तशीर्षाणमानृचुस्त्रिधातुमुत्तमे पदे।
स त्विमा विश्वा भुवनानि चिक्रददादिज्जनिष्ट पौंस्यम् ॥४॥
यो नो दाता वसूनामिन्द्रं तं हूमहे वयम्।
विद्मा ह्यस्य सुमतिं नवीयसीं गमेम गोमति व्रजे ॥५॥

---

१ इन्द्र, तुम जैसे सांवरणि (सावर्णि) मनुके लिये अभिषुत सोमका पान किया था, धनी इन्द्र, पुष्ट और शीघ्रगामी गौसे युक्त मेध्यातिथि और नीपातिथिके लिये जैसे सोमपान किया था वैसे ही आज भी करो।

२ पार्षद्वाण ऋषिने वृद्ध और सोये हुए प्रस्कण्वको ऊपर बैठाया था। दस्युओंके लिये वृकस्वरूप ऋषिको अपने द्वारा रक्षित करके तुमने हजार गौओंकी रक्षा की थी।

३ जिनसे उक्थोंके द्वारा प्राप्त किया जाता है, जो ऋषि द्वारा प्रेरित होकर सबके ज्ञाता हैं और जो रक्षाभिलाषी हैं, उन्हीं इन्द्रके सामने, सेवाके लिये, नयी स्तुतिका उच्चारण करो।

४ जिनके लिये उत्तम स्थानमें सात शीर्षों (सात भुवनों वा व्याहृतियों) और तीन स्थानों (लोकों) से युक्त पूजा-मन्त्र पढ़ा जाता है, उन्होंने इस व्यापक भुवनको शब्दयुक्त किया और बल उत्पन्न किया।

५ जो इन्द्र हमारे धनदाता हैं, उन्हींको हम बुलाते हैं। हम उनकी अभिनव अनुग्रह-बुद्धिको जानते हैं। हम गोयुक्त गोशालामें जा सकें।

यस्मै त्वं वसो दानाय शिक्षसि स रायस्पोषमश्नुते ।
तं त्वा वयं मघवन्निन्द्र गिर्वणः सुतावन्तो हवामहे ॥६॥
उपोपेन्नु मघवन्भूय इन्नु ते दानं देवस्य पृच्यते ॥७॥
प्र यो ननक्षे अभ्योजसा क्रिविं वधैः शुष्णं निघोषयन् ।
यदेदस्तंभीत्प्रथयन्नमूं दिवमादिज्जनिष्ट पार्थिवः ॥८॥
यस्यायं विश्व आर्यो दासः शेवधिपा अरिः ।
तिरश्चिदर्ये रुशमे पवीरवि तुभ्येत्सो अज्यते रयिः ॥९॥
तुरण्यवो मधुमन्तं घृतश्चुतं विप्रासो अर्कमानृचुः ।
अस्मे रयिः प प्रथे वृष्ण्यं शवोऽस्मे सुवानास इन्दवः ॥१०॥

४ सूक्त

इन्द्र देवता। आयु ऋषि। अयुक् बृहती और युक् बृहती छन्द।

यथा मनौ विवस्वति सोमं शक्रा पिबः सुतम् ।
यथा त्रिते छन्द इन्द्र जुजोषस्यायौ मादयसे सचा ॥१॥

---

६ धनदाता, स्तुत्य और धनी इन्द्र, तुम जिसे, प्रतिज्ञा करके, दान देते हो, वह धनकी पुष्टिको प्राप्त करता है। तुम ऐसे हो; इसलिये हम अभिषुत सोमवाले होकर तुम्हें बुलाते हैं।

७ इन्द्र, तुम कभी सृष्टि-विहीन नहीं होते। हव्यदाताके साथ मिलो। तुम देवता हो। तुम्हारा दान बार-बार समीप आकर मिलित होता है।

८ जिन्होंने बलात् अस्त्र-प्रयोग करके शुष्णका विनाश करते हुए कुएँको पूर्ण किया था, जिन्होंने द्युलोकको प्रसिद्ध करते हुए रोका था, जिन्होंने पार्थिव रूपमें होकर सारे पदार्थोंका उत्पन्न किया था—

९ जिनके धन-रक्षक और स्तोता सारे आर्य और दास (आर्यीकृत अनार्य?) हैं और जो आर्य तथा श्वेतवर्ण पवीरुके सम्मुख आते हैं, वे ही धनद इन्द्र तुम्हारे साथ मिलते हैं।

१० क्षिप्रकारी विप्र लोग मधु-युक्त और घृतस्रावी पूजा-मन्त्रका उच्चारण करते हैं। इनके लिये धन प्रसिद्ध होता है, पुरुषोचित बल प्रसिद्ध हुआ है और अभिषुत सोम प्रसिद्ध हो रहा है।

---

१ इन्द्र, तुमने जैसे पहले विवस्वान् मनुके सोमका पान किया था, जैसे त्रितके मनको रक्षा की थी, आयुके (मेरे) साथ जैसे प्रमत्त हुए थे—

पृषध्रे मेध्ये मातरिश्वनीन्द्र सुवाने अमन्दथाः ।
यथा सोमं दशशिप्रे दशोण्ये स्यूमरश्मा वृजूनसि ॥२॥
य उक्था केवला दधे यः सोमं धृषिता पिबत् ।
यस्मै विष्णुः त्रीणि पदा विचक्रम उप मित्रस्य धर्मभिः ॥३॥
यस्य त्वमिन्द्र स्तोमेषु चाकनो वाजे वाजिञ्छतक्रतो ।
तं त्वा वयं सुदुघामिव गोदुहो जुहूमसि श्रवस्यवः ॥४॥
यो नो दाता स नः पिता महाँ उग्र ईशानकृत् ।
अयामन्नुग्रो मघवा पुरूवसुर्गोरश्वस्य प्रदातु नः ॥५॥
यस्मै त्वं वसो दानाय मंहसे स रायस्पोषमिन्वति ।
वसूयवो वसुपतिं शतक्रतुं स्तोमैरिन्द्रं हवामहे ॥६॥
कदाचन प्रयुच्छस्युभे निपासि जन्मनी ।
तुरीयादित्य हवनं त इन्द्रियमातस्थावमृतं दिवि ॥७॥

---

२ मातरिश्वा (वायु) देवताके पृषध्र (दधि-मिश्रित घृत)के अभिषवका आरम्भ करनेपर तुम जैसे प्रमत्त होते हो और स्यूमरश्मि तथा दीप्तिवाले दशशिप्र एवम् दशोण्यके सोमका पान किया करते हो—

३ जो केवल उक्थका धारण करते हैं, जो ढीठ होकर सोमपान करते हैं, जिनके लिये, बन्धुत्वके कर्तव्यके निमित्त विष्णुने तीन बार पद-निक्षेप किया था।

४ वेग और सौ यज्ञोंवाले इन्द्र, तुम जिसके यज्ञमें स्तुतिकी इच्छा करते हो—इन सब कर्मों और गुणोंवाले तुम इन्द्रको हम अन्नाभिलाषी होकर उसी प्रकार बुलाते हैं, जिस प्रकार गायें दूहनेवाला गौओंको बुलाता है।

५ वह हमारे पिता हैं और दाता हैं। वह महान्, उग्र और ऐश्वर्यकर्त्ता हैं। उग्र, धनी और अत्यन्त धनी इन्द्र हमें गौ और अश्व प्रदान करें।

६ इन्द्र, तुम जिसे दान देनेकी इच्छा करते हो, वह धन पुष्टि प्राप्त करता है। धनाभिलाषी होकर धनके पति और बहु यज्ञोंके कर्त्ता इन्द्रको, स्तोत्रके द्वारा, बुलाते हैं।

७ तुम कभी-कभी भ्रममें पड़ जाते हो। तुम दोनों प्रकारके प्राणियोंकी रक्षा करते हो। विघ्न-कर्त्ता आदित्य, तुम्हारा सुखकर आह्वान अमर द्युलोकमें अवस्थान करता है।

यस्मै त्वं मघवन्निन्द्र गिर्वणः शिक्षो शिक्षसि दाशुषे ।
अस्माकं गिर उत सुष्टुतिं वसो कण्ववच्छृणुधी हवम् ॥८॥
अस्तावि मन्म पूर्व्यं ब्रह्मेन्द्राय वोचत ।
पूर्वीर्ऋतस्य बृहतीरनूषतस्तोतुर्मेधा असृक्षत ॥९॥
समिन्द्रो रायो बृहतीरधूनुत सं क्षोणी समु सूर्यम् ।
सं शुक्रासः शुचयः सं गवाशिरः सोमा इन्द्रममन्दिषुः ॥१०॥

५ सूक्त

इन्द्र देवता। मेध्य ऋषि । अयुक् बृहती और युक् सतोबृहती छन्द ।

उपमं त्वा मघोनां ज्येष्ठं च वृषभाणाम् ।
पूर्भित्तमं मघवन्निन्द्र गोविदमीशानं राय ईमहे ॥१॥
य आयुं कुत्समतिथिग्वमर्दयो वावृधानो दिवेदिवे ।
तं त्वा वयं हर्यश्वं शतक्रतुं वाजयन्तो हवामहे ॥२॥

---

८ स्तुत्य, दाता और धनी इन्द्र, तुम हम दाताको दान करो । वासदाता इन्द्र, तुमने जैसे कण्व ऋषिका आह्वान सुना था, वैसे हमारे वाक्य, स्तुति और आह्वान सुनो ।

९ इन्द्रके लिये प्राचीन स्तोत्रका पाठ करो और स्तोत्रका उच्चारण करो । यज्ञकी पूर्वकालीन और विशाल स्तुतिका उच्चारण करो और स्तोताकी मेधाको बढ़ाओ ।

१० इन्द्र प्रभूत धनका प्रेरण करते हैं । उन्होंने द्यावापृथिवीको प्रेरित किया है, सूर्यको प्रेरित किया है और श्वेतवर्ण तथा शुद्ध पदार्थोंको प्रेरित किया है । गव्य (दुग्ध आदि) से मिले सोमने इन्द्रको भली भाँति प्रमत्त किया था ।

---

१ तुम धनियोंके लिये उपमेय, अभीष्ट-वर्षकोंमें श्रेष्ठ, सबके चाहने योग्य, शत्रुपुरविदारी, धनद और स्वामी हो । धनी इन्द्र, धनके लिये मैं तुम्हारी याचना करता हूँ ।

२ जिन्होंने प्रतिदिन वर्द्धमान होकर आयु, कुत्स और अतिथिकी रक्षा की थी, उन्हीं हरि नामक अश्वोंवाले और बहुकर्मा इन्द्रको अन्नाभिलाषी होकर हम बुलाते हैं ।

आ नो विश्वेषां रसं मध्वः सिञ्चन्त्वद्रयः ।
ये परावति सुन्विरे जनेष्वा ये अर्वावतीन्दवः ॥३॥
विश्वा द्वेषांसि जहि चाव चा कृधि विश्वे सन्वन्त्वा वसु ।
शीष्टेषु चित्ते मदिरासो अंशवो यत्रा सोममस्य तृम्पसि ॥४॥
इन्द्र नेदीय एदिहि मितमेधाभिरूतिभिः ।
आ शन्तम शन्तमाभिरभिष्टिभिरा स्वापे स्वापिभिः ॥५॥
आजितुरं सत्पतिं विश्वचर्षणिं कृधि प्रजास्वा भगम् ।
प्रसूतिरा शचीभिर्ये त उक्थिनः क्रतुं पुनत आनुषक् ॥६॥
यस्ते साधिष्ठोऽवसे ते स्याम भरेषु ते ।
वयं होत्राभिरुत देवहूतिभिः ससवांसो मनामहे ॥७॥
अहं हि ते हरिवो ब्रह्म वाजयुराजिं यामि सदोतिभिः ।
त्वामिदेव तममे समश्वयुर्गव्युरग्रे मथीनाम् ॥८॥

---

३ दूरस्थ देशमें जो सोम लोगोंमें अभिषुत होता है और जो समीपमें अभिषुत होता है, उन सब सोमोंका रस हमारा अभिषव-प्रस्तर पिसकर बाहर करे।

४ तुम जहाँ सोमपान करके तृप्त होते हो, वहाँ सारे शत्रुओंका विनाश और पराजय करते हो। सारा धन उपभोग्य हो। शिष्टोंमें सोम तुम्हारे लिये मदकर है।

५ इन्द्र, तुम अतीव कल्याणकर और अतीव बन्धु हो। तुम परिमित मेधा और कल्याणकर, अभीष्टप्रद तथा बन्धु-स्वरूप रक्षण-कार्यके साथ समीपके स्थानमें आओ।

६ युद्धमें क्षिप्रकारी, साधुओंके पालक और सारे लोकोंके अधीश्वर इन्द्रको प्रजागणमें पूजनीय करो। जो कर्मोंके द्वारा सुफल देते हैं, वे ही उक्थोंका उच्चारण करनेवाले सतत यज्ञ-सम्पादन करें।

७ तुम्हारे पास जो सर्वश्रेष्ठ है, उसे हमें दो। रक्षणके लिये हम तुम्हारे ही होंवे। युद्ध-समयमें भी तुम्हारे ही होंगे। हम स्तुति और आह्वानके द्वारा तुम्हारा भजन करते हुए स्तुति-पाठ करेंगे।

८ हरि अश्वोंवाले इन्द्र, अन्न, अश्व और गौका इच्छुक होकर मैं तुम्हारा स्तोत्र करता और तुम्हारी रक्षा प्राप्त कर युद्धमें जाता हूँ। मथनके समय तुम्हें ही शत्रुओंके बीच स्थापित करता हूँ।

६ सूक्त

इन्द्र देवता। ३—४ मन्त्रोंमें अन्य देवोंकी भी स्तुति है । मातरिश्वा ऋषि । अयुक् बृहती और युक् सतोबृहती छन्द ।

एतत्त इन्द्र वीर्यं गीर्भिर्गृणन्ति कारवः ।
तेस्तोभं त ऊर्जमावन्धृतश्चुतं पौरासो नक्षन्धीतिभिः ॥१॥
नक्षन्त इन्द्रमवसे सुकृत्यया येषां सुतेषु मन्दसे ।
यथा संवर्ते अमदो यथा कृश एवास्मे इन्द्र मत्स्व ॥२॥
आ नो विश्वे सजोषसो देवासो गन्तनोपनः ।
वसवो रुद्रा अवसे न आगमञ्छृण्वन्तु मरुतो हवम् ॥३॥
पूषा विष्णुर्हवनं मे सरस्वत्यवन्तु सप्तसिन्धवः ।
आपो वातः पर्वतासो वनस्पतिः शृणोतु पृथिवी हवम् ॥४॥
यदिन्द्र राधो अस्ति ते माघोनं मघवत्तम ।
तेन नो बोधि सधमाद्यो वृधे भगो दानाय वृत्रहन् ॥५॥

---

१ इन्द्र, स्तोता लोग स्तोत्र द्वारा तुम्हारे इस पराक्रमकी प्रशंसा करते हैं। उन्होंने स्तुति करके बल प्राप्त किया था नागरिकोंने कम द्वारा घी चुआनेवाले इन्द्रको व्याप्त किया था।

२ इन्द्र, जिनके सोमाभिषवमें तुम प्रमत्त होते हो, वे उत्तम कर्मके द्वारा तुम्हें व्याप्त करते हैं जैसे तुम संवर्त और कृशके ऊपर प्रसन्न हुए थे, वैसे ही हमारे ऊपर प्रसन्न होओ ।

३ सारे देव, समान रूपसे प्रसन्न होकर, हमारे सामने और समीप पधारें। रक्षाके लिये वसु और रुद्र लोग आवें। मरुत् लोग आह्वान सुनें।

४ पूषा, विष्णु, सरस्वती, गङ्गा आदि सात नदियाँ, जल, वायु, पर्वत और वनस्पति मेरे यज्ञकी रक्षा करें । पृथिवी आह्वान सुनें।

५ श्रेष्ठ धनी, वृत्रघ्न और भजनीय इन्द्र, तुम्हारा जो धन है, उस धनके साथ, प्रमत्त होकर समृद्धि और दानके लिये बढ़ो ।

आ जिपते नृपते त्वमिद्धि नो वाज आवक्षि सुक्रतो ।
वीती होत्राभिरुत देववीतिभिः ससवांसो विशृण्विरे ॥६॥
सन्ति ह्यर्य आशिष इन्द्र आयुर्जनानाम् ।
अस्मान्नक्षस्व मघवन्नुपावसे धुक्षस्व पिप्युषीमिषम् ॥७॥
वयं त इन्द्र स्तोमेभिर्विधेम त्वमस्माकं शतक्रतो ।
महि स्थूरं शशयं राधो अह्रयं प्रस्कण्वाय नितोशय ॥८॥

७ सूक्त

इन्द्र देवता । कृश ऋषि । गायत्री और अनुष्टुप् छन्द ।

भूरीदिन्द्रस्य वीर्यं व्यख्यमभ्यायति । राधस्ते दस्यवे वृक ॥१॥
शतं श्वेतास उक्षणो दिवितारो न रोचन्ते । मह्ना दिवं न तस्तभुः ॥२॥
शतं वेणूञ्छतं शुनः शतं चर्माणि म्लातानि ।
शतं मे बल्बजस्तुका अरुषीणां चतुःशतम् ॥३॥

६ युद्धपति, सुकर्ता और नरेश, तुम हमें युद्धमें ले जाओ । सुना जाता है कि, देवता लोग स्तोत्र और यज्ञके समय, भक्षणके लिये, मिलते हैं ।

७ आर्य इन्द्रके पास अनेक आशीर्वाद और मनुष्योंकी आयु है । धर्मा इन्द्र, हमें व्याप्त करो और वृद्धिकर अन्नका दान करो ।

८ इन्द्र, स्तुति द्वारा हम तुम्हारी सेवा करेंगे । बहुकर्मा इन्द्र, तुम हमारे हो । इन्द्र, प्रस्कण्वके लिये तुम प्रचुर, स्थूल और प्रवृद्ध धन देते हो ।

१ हमने इन्द्रके अनन्त कार्य जाने हैं । दस्युओंके लिये व्याघ्र-रूप इन्द्र, तुम्हारा धन हमारे सामने आ रहा है ।

२ जैसे आकाशमें तारागण शोभित हो रहे हैं, वैसे ही सौ-सौ वृष शोभित होते हैं । वे अपनी महिमासे द्युलोकको स्तब्ध करते हैं ।

३ शतवेणु, शतश्वा, शतम्लात चर्म, शतबल्बजस्तुक और चार सौ अरुषी हैं ।*

* इन शब्दोंका ठीक-ठीक अर्थ क्या है, पता नहीं !

सुदेवाः स्थ काण्वायना वयो वयो विचरन्तः । अश्वासो न चङ्क्रमत ॥४॥

आदित्साप्तस्य चर्किरन्नानूनस्य महिश्रवः ।

श्यावीरति ध्वसन्पथश्चक्षुषा च न संनशे ॥५॥

८ सूक्त

इन्द्र देवता; अन्तके अग्नि और सूर्य देवता। पृषध्र ऋषि। गायत्री और पङ्क्ति छन्द।

प्रति ते दस्यवे वृक राधो अदर्श्यह्रयम्। द्यौर्न प्रथिना शवः ॥१॥

दशमह्यं पौतक्रतः सहस्रा दस्यवे वृकः। नित्याद्रायो अमंहत ॥२॥

शतं मे गर्दभानां शतमूर्णावतीनाम्। शतं दासाँ अतिस्रजः ॥३॥

तत्रो अपि प्राणीयत पूतक्रतायै व्यक्ता। अश्वानामिन्न यूथ्याम् ॥४॥

अचेत्यग्निश्चिकितुर्हव्यवाट् स सुमद्रथः।

अग्निः शुक्रेण शोचिषा बृहत्सूरो अरोचत दिवि सूर्यो अरोचत ॥५॥

---

४ कण्वगोत्रीयो, तुम लोग सारे अन्नोंमें विचरण करते हुए और अश्वोंके समान बार-बार जाते हुए सुन्दर देववाले हुए हो।

५ सप्तस्थामें सात (सप्त व्याहृतियों) वाले और दूसरेके लिये अधिक इन्द्रके लिये महान् अन्न प्रक्षिप्त होता है। श्यामवर्ण मार्गको लाँघनेपर वह नेत्रोंके द्वारा देखा जाता है।

---

१ दस्युओंके लिये व्याघ्र इन्द्र, तुम्हारा प्रवृद्ध धन देखा गया है। तुम्हारा सेना द्युलोकके समान विस्तृत है।

२ दस्युओंके लिये तुम व्याघ्र हो। अपने नित्य धनसे मुझे दस हजार दो।

३ मुझे एक सौ गर्दभ, एक सौ भेड़ें और एक सौ दास दो।[1]

४ अश्वदलके समान वह प्रकट धन, शुद्ध-बुद्धि व्यक्तियोंके लिये, उनके पास जाता है।

५ अग्नि विदित हुए हैं। वह ज्ञानी, सुन्दर रथवाले और हव्यवाहक हैं, वह शुद्ध किरणके द्वारा अतिप्रकाशमय और विराट् होकर शोभा पाते हैं। स्वर्गमें सूर्य भी शोभा पाते हैं।

[1] क्या उस समय दास-प्रथा थी?

९ सूक्त

अश्विद्वय देवता। मेध्य ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

युवं देवा क्रतुना पूर्व्येण युक्ता रथेन तविषं यजत्रा ।
आगच्छतं नासत्या शचीभिरिदं तृतीयं सवनं पिबाथः ॥१॥
युवां देवास्त्रय एकादशासः सत्यास्य ददृशे पुरस्तात् ।
अस्माकं यज्ञं सवनं जुषाणा पातं सोममश्विना दीद्यग्नी ॥२॥
पनाय्यं तदश्विनाकृतं वां वृषभो दिवो रजसः पृथिव्याः ।
सहस्रं शंसा उत ये गविष्टौ सर्वां इत्तां उपयाता पिबध्यै ॥३॥
अयं वां भागो निहितो यजत्रा मागिरो नासत्योप यानम् ।
पिबतं सोमं मधुमन्तमस्मे प्रदाश्वांसमवतं शचीभिः ॥४॥

---

१० सूक्त

प्रथमके अश्विद्वय देवता; शेषके अग्नि। त्रिष्टुप् छन्द।

यमृत्विजो बहुधा कल्पयन्तः सचेतसो यज्ञमिमं वहन्ति ।
यो आनूचानो ब्राह्मणो युक्त आसीत्का स्वित्तत्र यजमानस्य संवित् ॥१॥

---

१ सत्यरूप अश्विद्वय, प्राचीन कालमें बनाये हुए रथपर चढ़कर यज्ञमें पधारो। तुमलोग यजनीय और दिव्य हो। अपने कर्म-बलसे तुमलोग तृतीय सवनका पान करते हो।

२ देवोंकी संख्या तेंतीस है। वे सत्यस्वरूप हैं। वे यज्ञके सम्मुख दिखाई देते हैं। दीप्तिमान् अग्निवाले अश्विद्वय, तुम मेरे हो। इस यज्ञमें आकर सोम पान करो।

३ अश्विद्वय, तुमलोग द्युलोक, भूलोक और अन्तरीक्ष लोकके लिये अभीष्ट-वर्षक हो। तुम्हारे लिये मैंने स्तुति की है। जो लोग हजारों स्तुतियाँ करते हैं और जो लोग गौ-यज्ञमें प्रवृत्त होते हैं, सोम-पानके लिये उन सबके पास उपस्थित होओ।

४ अश्विद्वय, तुम्हारा यह भाग रखा हुआ है। तुम्हारी यही स्तुति है। तुम लोग आओ। हमारे लिये मधुर सोमका पान करो। हव्यदाताको कर्म द्वारा बचाओ।

१ सहृदय ऋत्विकोंने जिसकी तरह-तरहकी कल्पना करके इस यज्ञका सम्पादन किया है और जो स्तोत्रका उच्चारण न करनेपर भी स्तोता माना जाता है, उसके सम्बन्धमें यजमानकी क्या अभिज्ञता है?

एक एवाग्निर्बहुधा समिद्ध एकः सूर्यो विश्वमनु प्रभूतः ।
एकैवोषाः सर्वमिदं विभात्येकं वा इदं वि बभूव सर्वम् ॥२॥
ज्योतिष्मन्तं केतुमन्तं त्रिचक्रं सुखं रथं सुषदं भूरि वारम् ।
चित्रा मघायस्य योगे धिजज्ञे तं वां हुवे अतिरिक्तं पिबध्यै ॥३॥

११ सूक्त

इन्द्र और वरुण देवता। सुपर्ण ऋषि। जगती छन्द।

इमानि वां भागधेयानि सिस्रत इन्द्रा वरुणा प्रमहे सुतेषु वाम् ।
यज्ञे यज्ञे ह सवना भुरण्यथो यत्सुन्वते यजमानाय शिक्षथः ॥१॥
निः षिध्वरीरोषधीराप आस्तामिन्द्रा वरुणा महिमानमाशत ।
या सिस्रतूरजसः पारे अध्वनो ययोः शत्रुर्नकिरादेव ओहते ॥२॥
सत्यं तदिन्द्रा वरुणा कृशस्य वां मध्व ऊर्मिं दुहते सप्तवाणीः ।
ताभिर्दाश्वांसमवतं शुभस्पती यो वामदब्धो अभिपाति चित्तिभिः ॥३॥

२ एक अग्नि अनेक प्रकारसे समिद्ध हुए हैं, एक सूर्य सारे विश्वमें अनेक हुए हैं और एक उषा उन सबको प्रकाशित करती है। यह एक ही सब हुए हैं।

३ ज्योति, केतु (धूम-पताका) और चक्र-त्रयवाले तथा सुखकर, रथस्वरूप और बैठने योग्य अग्निको, अत्यधिक सोम पीनेके लिये, इस यज्ञमें बुलाता हूं। उनके साथ मिलन होनेपर विचित्र धनकी प्राप्ति होती है।

---

१ इन्द्र और वरुण, मैं महायज्ञके सोमाभिषवमें तुम्हें बुलाता हूँ। यही तुम्हारा भाग है। इसका ग्रहण करो। प्रत्येक यज्ञमें सारे सोमोंका पोषण करो। सोमाभिषव-कर्त्ता यजमानको दान दो।

२ इन्द्र और वरुण ठहरे हुए हैं। वह अन्तरीक्षके उस पारके मार्गपर जाते हैं। कोई भी देव-शून्य व्यक्ति उनका शत्रु नहीं हो सकता। उनकी कृपासे सुसम्पन्न ओषधि और जल महत्त्व प्राप्त करते हैं।

३ इन्द्र और वरुण, यह बात सच्ची है कि, सात वाणियाँ तुम्हारे लिये कृश ऋषिके सोम-प्रवाहको दूहती हैं। तुम लोग शुभ-कर्मोंके पालक हो। जो अहिंसित व्यक्ति तुम्हारे कर्म द्वारा पालन करता है, उसी हव्यदाताका हव्य द्वारा पालन करो।

घृतप्रुषः सौम्याजीरदानवः सप्त स्वसारः सदन ऋतस्य ।
या ह वामिन्द्रा वरुणा घृतश्चुतस्ताभिर्धत्तं यजमानाय शिक्षतम् ॥४॥
अवोचाम महते सौभगाय सत्यं त्वेषाभ्यां महिमानमिन्द्रियम् ।
अस्मान्स्विन्द्रा वरुणा घृतश्चुतस्त्रिभिः साप्तेभिरवतं शुभस्पती ॥५॥
इन्द्रा वरुणा यदृषिभ्यो मनीषां वाचो मतिं श्रुतमदत्तमग्रे ।
यानि स्थानान्यसृजन्त धीरा यज्ञं तन्वानास्तपसाभ्यपश्यम् ॥६॥
इन्द्रावरुणा सौमनसमदृप्तं रायस्पोषं यजमानेषु धत्तम् ।
प्रजां पुष्टिं भूतिमस्मासु धत्तं दीर्घायुत्वाय प्रतिरतं न आयुः ॥७॥

---

४ घी चुलानेवाली, यथेष्ट दान देनेवाली और कमनीय सात भगिनियाँ यज्ञ-गृहमें बहुत दानवाली हुई हैं। इन्द्र और वरुण जो तुम्हारे लिये घी चुलाती हैं, उनके लिये यज्ञ धारण करो और यजमानको दान करो।

५ दीप्तिशील इन्द्र और वरुणके पास महासौभाग्यकी प्राप्तिके लिये सच्ची महिमाका हम कीर्तन करेंगे। हम घीको चुलाते हैं। इन्द्र और वरुण शुभ कार्योंके पति है। वह २१ कार्योंके द्वारा हमारी रक्षा करें।

६ इन्द्र और वरुण, तुम लोगोंने पहले ऋषियोंको जो बुद्धि, वाक्य, स्तुति और श्रुतको प्रदान किया है, सो सब हम, धीर और यज्ञमें लगे रहकर, तपके द्वारा देखेंगे।

७ इन्द्र और वरुण, जिस धनकी वृद्धिसे मनकी तृप्ति होती है, गर्व नहीं होता, उसे ही यजमानको प्रदान करो। हमें प्रजा, पुष्टि और भूति दो। हम दीर्घायु हो सकें, इसके लिये हमारी आयुको बढ़ाओ।

बालखिल्य-सूक्त समाप्त

नवम मण्डल*

१ अनुवाक । १ सूक्त

पवमान सोम देवता । विश्वमित्रगोत्रोत्पन्न मधुच्छन्दा ऋषि । गायत्री छन्द ।

स्वादिष्ठया मदिष्ठया पवस्व सोम धारया । इन्द्राय पातवे सुतः ॥१॥
रक्षोहा विश्वचर्षणिरभि योनिमयोहतम् । द्रुणा सधस्थमासदत् ॥२॥
वरिवोधातमो भव मंहिष्ठो वृत्रहन्तमः । पर्षि राधो मघोनाम् ॥३॥
अभ्यर्ष महानां देवानां वीतिमन्धसा । अभि वाजमुत श्रवः ॥४॥
त्वामच्छा चरामसि तदिदर्थं दिवेदिवे । इन्द्रो त्वे न आशसः ॥५॥
पुनाति ते परिस्रुतं सोमं सूर्यस्य दुहिता । वारेण शश्वता तना ॥६॥
तमीमण्वीः समर्य आगृभ्णन्ति योषणो दश । स्वसारः पार्ये दिवि ॥७॥

---

१ सोम, इन्द्रके पानके लिये तुम अभिषुत होकर स्वादुतम और अतीव मदकर धारामें क्षरित होओ।

२ राक्षसोंके विनाशक और सबके दर्शक सोम लोहेसे पिसे जाकर और १२ सेरवाले कलससे युक्त होकर अभिषवण-स्थानमें बैठते हैं।

३ सोम तुम प्रचुर दान करो, सारे पदार्थोंको दान करो और विशेष रूपसे वृत्रका वध करो। धनी शत्रुओंका धन हमें दो।

४ तुम महान् हो। देवोंके यज्ञकी ओर, अन्नके साथ, जाओ। बल और अन्न दो।

५ इन्दु, हम तुम्हारी सेवा करते हैं; प्रतिदिन यह हमारा काम है।

६ सूर्यकी पुत्री श्रद्धा तुम्हारे क्षरणशील रसको विस्तृत और नित्य दशापवित्रके द्वारा पवित्र करती हैं।

७ अभिषव (सोम चुलाने)के समय यज्ञमें भगिनियोंके समान दश-अङ्गुलि-रूपिणी स्त्रियाँ उस सोमको सबसे पहले ग्रहण करती हैं।

---

* नवम मण्डलमें केवल सोमदेवकी अर्चना है। सामवेदका तृतीयांश इस नवम मण्डलका ही है। पत्थरोंसे कूटकर और दसो अगुलियोंसे मलकर सोमरस निकाला जाता था। अनन्तर भेड़ोंके बालोंके छन्नेसे छानकर बर्तनमें उसे रखा जाता और भंगके समान, दूध आदिमें मिलाकर, पिया जाता था।

तमीं हिन्वन्त्यग्रुवो धमन्ति बाकुरं दृतिम् । त्रिधातु वारणं मधु ॥८॥
अभीममघ्न्या उत श्रीणान्ति धेनवः शिशुम् । सोममिन्द्राय पातवे ॥९॥
अस्येदिन्द्रो मदेष्वा विश्वा वृत्राणि जिघ्नते । शूरो मघा च मंहते ॥१०॥

२ सूक्त

पवमान सोम देवता । मेधातिथि ऋषि । गायत्री छन्द ।

पवस्व देववीरति पवित्रं सोम रंह्या । इन्द्रमिन्द्रो वृषा विश ॥१॥
आवच्यस्व महि प्सरो वृषेन्दो द्युम्नवत्तमः । आ योनिं धर्णसिः सदः ॥२॥
अधुक्षत प्रियं मधु धारा सुतस्य वेधसः । अपो वसिष्ट सुक्रतुः ॥३॥
महान्तं त्वा महीरन्वापो अर्षन्ति सिन्धवः । यद्गोभिर्वासयिष्यसे ॥४॥
समुद्रो अप्सु मामृजे विष्टम्भो धरुणो दिवः । सोमः पवित्रे अस्मयुः ॥५॥

८ अँगुलियाँ उसी सोमको प्रेरित करती हैं । यह सोमात्मक मधु तीन स्थानोंमें (द्रोण-कलस, आधवनीय और पूतभृत्में) रहता है और शत्रुओंकी प्रतिबन्धकता करता है ।

९ न मारने योग्य गायें इस बालक सोमको, इन्द्रके पानके लिये, दूधके द्वारा संस्कृत करती हैं ।

१० शूर इन्द्र, इस सोमपानसे मत्त होकर सारे शत्रुओंका विनाश करते और यजमानोंको धन देते हैं ।

---

१ सोम, तुम देवकामी होकर वेग और पवित्र भावके साथ, गिरो । अभीष्ट-वर्षक इन्द्र, तुम सोमके बाच पैठ जाओ ।

२ सोम, तुम महान्, अभीष्टवर्षक, अतीव यशस्वी और धारक हो । तुम जलको प्रेरित करो । अपने स्थानपर बैठो ।

३ अभिषुत और अभिलाषा-दाता सोमकी धारा प्रिय मधुको दूहती है । शोभनकर्मा सोम जलका आच्छादन करते हैं ।

४ जिस समय तुम गव्यके द्वारा आच्छादित होते हो, उस समय हे महान् सोम, तुम्हारे सामने क्षरणशील महान् जल आता है ।

५ सोमसे रस उत्पन्न होता है । सोम स्वर्गका धारण करते, संसारको रोके रहते, हमारी अभिलाषा करते और जलके बीच संस्कृत होते हैं ।

अभिक्रन्दन्वृषा हरिर्महान्मित्रो न दर्शतः । सं सूर्येण रोचते ६
गिरस्त इन्द ओजसा मर्मृज्यन्ते अपस्युवः । याभिर्मदाय शुम्भसे ॥७॥
तं त्वा मदाय घृष्वय उ लोककृत्नुमीमहे । तव प्रशस्तयो महीः ॥८॥
अस्मभ्यमिन्दविन्द्रयुर्मध्वः पवस्व धारया । पर्जन्यो वृष्टिमाँ इव ॥९॥
गोषा इन्दो नृषा अस्यश्वसा वाजसा उत । आत्मा यज्ञस्य पूर्व्यः ॥१०॥

३ सूक्त

पवमान सोम देवता । शुनःशेफ ऋषि । गायत्री छन्द ।

एष देवो अमर्त्यः पर्णवीरिव दीयति । अभि द्रोणान्यासदम् ॥१॥
एष देवो विपा कृतोऽति ह्वरांसि धावति । पवमानो अदाभ्यः ॥२॥
एष देवो विपन्युभिः पवमान ऋतायुभिः । हरिर्वाजाय मृज्यते ॥३॥

६ अभीष्टवर्षक, हरितवर्ण, महान् और मित्रके समान दर्शनीय सोम शब्द करते और सूर्यके साथ प्रदीप्त होते हैं ।

७ इन्दु, जिन स्तुतियोंसे मत्तताके लिये तुम अलङ्कृत होते हो, वे ही कर्मेच्छा-सम्बन्धी स्तुतियाँ तुम्हारे बलके प्रतापसे संशोधित होती हैं ।

८ तुम्हारी प्रशंसाएँ महती हैं । तुमने शत्रुओंको रगड़नेवाले यजमानके लिये उत्तम लोककी सृष्टि की है । हम तुम्हारे पास मत्तताकी याचना करते हैं ।

९ इन्दु (सोम), इन्द्रके अभिलाषी होकर, वर्षक मेघके समान, मधुर धारासे हमारे सामने गिरो ।

१० इन्दु, तुम यज्ञकी पुरानी आत्मा हो । तुम गौ, पुत्र, अन्न और अश्व प्रदान करो ।

१ यह अमर सोम द्रोण-कलसके सामने बैठनेके लिये, पक्षीके समान, जाते हैं ।

२ अङ्गुलिके द्वारा अभिषुत यह सोम क्षरित और अभिषुत होकर जाते हैं ।

३ यज्ञाभिलाषी स्तोता लोग क्षरणशील इन सोमदेवको अश्वके समान युद्धके लिये अलङ्कृत करते हैं ।

एष विश्वानि वार्या शूरो यन्निव सत्वभिः । पवमानः सिषासति ॥४॥
एष देवो रथर्यति पवमानो दशस्यति । अविष्कृणोति वग्वनुम् ॥५॥
एष विप्रैरभिष्टुतोऽपो देवो वि गाहते । दधद्रत्नानि दाशुषे ॥६॥
एष दिवं वि धावति तिरो रजांसि धारया । पवमानः कनिक्रदत् ॥७॥
एष दिवं व्यासरत्तिरो रजांस्यस्पृतः । पवमानः स्वध्वरः ॥८॥
एष प्रत्नेन जन्मना देवो देवेभ्यः सुतः । हरिः पवित्रे अर्षति ॥९॥
एष उ स्य पुरुव्रतो जज्ञानो जनयन्निषः । धारया पवते सुतः ॥१०॥

---

४ सूक्त

पवमान सोम देवता । अङ्गिरोगोत्रीय हिरण्यस्तूप ऋषि । गायत्री छन्द ।

सना च सोम जेषि च पवमान महि श्रव । अथानो वस्यसस्कृधि ॥१॥

४ क्षरणशील यह वीर सोम अपने बलसे गमनकर्त्ताके समान सारे धनोंको बाँटनेकी इच्छा करते हैं ।

५ क्षरणशील यह सोम रथकी इच्छा करते हैं, मनोरथ पूर्ण करते हैं और शब्द करते हैं ।

६ मेधावियोंके द्वारा इस सोमके स्तुति करनेपर यह सोम हव्यदाताको रत्न-दान करते हुए जलके बीच पैठते हैं ।

७ क्षरणशील यह सोम शब्द करके और सारे लोकोंको हराकर स्वर्गको जाते हैं ।

८ क्षरणशील यह सोम सुन्दर, याज्ञिक और अहिंसित होकर सारे लोकोंको पराभूत करते हुए स्वर्गमें जाते हैं ।

९ हरितवर्ण यह सोमदेव प्राचीन जन्मसे देवोंके लिये अभिषुत होकर दशापवित्रमें रहनेके लिये जाते हैं ।

१० यह बहुकर्मा सोम ही उत्पन्न होनेके साथ ही अन्नको उत्पन्न करके और अभिषुत होकर धाराके रूपमें क्षरित होते हैं ।

१ महान् अन्न और पवमान सोम, भजन करो, जय करो और पश्चात् हमारे मङ्गलका विधान करो ।

सना ज्योतिः सना स्वर्विश्वा च सोम सौभगा । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥२॥

सना दक्षमुत क्रतुमप सोम मृधो जहि । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥३॥

पवीतारः पुनीतन सोममिन्द्राय पातवे । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥४॥

त्वं सूर्ये न आ भज तव क्रत्वा तवोतिभिः । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥५॥

तव क्रत्वा तवोतिभिर्ज्योक् पश्येम सूर्यम् । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥६॥

अभ्यर्ष स्वायुध सोम द्विबर्हसं रयिम् । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥७॥

अभ्यर्षानपच्युतो रयिं समत्सु सासहिः । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥८॥

त्वां यज्ञैरवीवृधन् पवमान विधर्मणि । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥९॥

रयिं नश्चित्रमश्विनमिन्दो विश्वायुमा भर । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥१०॥

---

२ सोम ज्योति दो, स्वर्गका दान करो और सारे सौभाग्यका दान करो । अनन्तर हमारे लिये मङ्गल करो ।

३ सोम, बल और कर्मका दान करो, हिंसकोंका बध करो । अनन्तर हमारे लिये कल्याण करो ।

४ सोमका अभिषव करनेवाले तुम लोग इन्द्रके पानके लिये सोमका अभिषव करो। अनन्तर हमारा कल्याण करो ।

५ सोम, अपने कार्य और रक्षणके द्वारा हमें सूर्यकी प्राप्ति कराओ । अनन्तर हमारा कल्याण करो ।

६ तुम्हारे कर्म और रक्षणके द्वारा हम चिरकालतक सूर्यका दर्शन करेंगे । अनन्तर हमारा कल्याण करो ।

७ शोभन अस्त्रवाले सोम, तुम स्वर्ग और पृथिवीपर वर्द्धित धन दो । अनन्तर हमारा कल्याण करो ।

८ लड़ाइयोंमें तुम स्वयं आहत नहीं होते । तुम शत्रुओंको हराते हो । धन दान करो । अनन्तर हमारा कल्याण करो ।

९ क्षरणशील सोम, यजमान लोग रक्षणके लिये तुम्हें यज्ञमें वर्द्धित करते हैं । अनन्तर हमारा कल्याण करो ।

१० इन्द्र, तुम हमें नाना प्रकारके अश्वोंवाले और सर्वगामी धन दो । अनन्तर हमारा कल्याण करो ।

५ सूक्त

आप्री देवता। कश्यपगोत्रीय असित और देवल ऋषि। अनुष्टुप् और गायत्री छन्द।

समिद्धो विश्वतस्पतिः पवमानो वि राजति। प्रीणन्वृषा कनिक्रदत् ॥१॥

तनूनपात् पवमानः शृङ्गे शिशानो अर्षति। अन्तरिक्षेण रारजत् ॥२॥

ईळेन्यः पवमानो रयिर्वि राजति द्युमान्। मधोर्धाराभिरोजसा ॥३॥

बर्हिः प्राचीनमोजसा पवमानः स्तृणन्हरिः। देवेषु देव ईयते ॥४॥

उदातैर्जिहते बृहद्द्वारो देवीर्हिरण्ययीः। पवमानेन सुष्टुताः ॥५॥

सुशिल्पे बृहती मही पवमानो वृषण्यति। नक्तोषासा न दर्शते ॥६॥

उभा देवा नृचक्षसा होतारा दैव्या हुवे। पवमान इन्द्रो वृषा ॥७॥

भारती पवमानस्य सरस्वतीळा मही।

इमं नो यज्ञमा गमन्तिस्रो देवीः सुपेशसः ॥८॥

त्वष्टारमग्रजां गोपां पुरोयावानमा हुवे।

इन्दुरिन्द्रो वृषा हरिः पवमानः प्रजापतिः ॥९॥

---

१ भली भाँति दीप्त, सबके पति और काम-वर्षक पवमान सोम शब्द करके और देवोंको प्रसन्न करके विराजित होते हैं।

२ जल-पौत्र पवमान (क्षरणशील=गिरनेवाले) सोम उन्नत प्रदेशमें तीक्ष्ण होकर और अन्तरीक्षमें प्रदीप्त होकर जाते हैं।

३ स्तुत्य, अभीष्टदाता और दीप्तिमान् पवमान सोम मधु-धाराके साथ तेजोबलसे विराजित होते हैं।

४ हरित-वर्ण सोमदेव यज्ञमें पूर्वाग्रमें कुश-विस्तार करते हुए तेजोबलसे गमन करते हैं।

५ हिरण्मयी द्वार-देवियाँ पवमान सोमके साथ स्तुत होकर विराट् दिशाओंमें बहती हैं।

६ इस समय पवमान सोम सुन्दर-रूपा, बृहती, महती और दर्शनीया दिवारात्रिकी कामना करते हैं।

७ मनुष्योंके दर्शक और देवोंके होता दोनों देवोंको मैं बुलाता हूँ। पवमान सोम दीप्त (इन्द्र) और अभीष्टवर्षक हैं।

८ भारती, सरस्वती और महती इड़ा नामकी तीन सुन्दरी देवियाँ हमारे इस सोम-यज्ञमें पधारें।

९ अग्रजात, प्रजापालक और अग्रगामी त्वष्टाको मैं बुलाता हूँ। हरित-वर्ण पवमान सोम देवेन्द्र, काम-वर्षक और प्रजापति हैं।

वनस्पतिं पवमान मध्वा समङ्धि धारया ।
सहस्रवल्शं हरितं भ्राजमानं हिरण्ययम् ॥१०॥
विश्वे देवाः स्वाहाकृतिं पवमानस्यागत ।
वायुर्बृहस्पतिः सूर्योऽग्निरिन्द्रः सजोषसः ॥११॥

६ सूक्त

पवमान सोम देवता । कश्यप गोत्रीय असित और देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

मन्द्रया सोम धारया वृषा पवस्व देवयुः । अव्यो वारेष्वस्मयुः ॥१॥
अभि त्यं मद्यं मदमिन्दविन्द्र इति क्षर । अभि वाजिनो अर्वतः ॥२॥
अभि त्यं पूर्व्यं मन्दं सुवानो अर्ष पवित्र आ । अभि वाजमुत श्रवः ॥३॥
अनु द्रप्सास इन्दव आपो न प्रवतासरन् । पुनाना इन्द्रमाशत ॥४॥
यमत्यमिव वाजिनं मृजन्ति योषणो दश । वने क्रीळन्तमत्यविम् ॥५॥

---

१० पवमान सोम, हरित-वर्ण हिरण्यवर्ण, दीप्तिमान् और सहस्र शाखाओंवाले वनस्पतिको मधुर धाराके द्वारा संस्कृत करो ।

११ विश्वदेवगण वायु, बृहस्पति, सूर्य, अग्नि और इन्द्र, तुम सब मिलकर सोमके स्वाहा शब्दके पास आओ ।

१ सोम, तुम अभिष्टवर्षक और देवाभिलाषी हो तुम हमारी कामना करते हो । तुम हमारी रक्षा करो और दशापवित्रमें मधुर धारासे गिरो ।

२ सोम, तुम स्वामी हो; इसलिये मदकर सोमका वर्षण करो । बली अश्व प्रदान करो ।

३ अभिषुत होकर उस पुरातन और मदकर रसको दशापवित्रमें प्रेरित करो । बल और अन्नका प्रेरण करो ।

४ जैसे जल निम्न दिशाकी ओर जाता है, वैसे ही द्रुतगति और क्षरणशील सोम इन्द्रका अनुसरण करता और उन्हें व्याप्त करता है ।

५ दश-अङ्गुलि-रूप स्त्रियाँ दशापवित्रको लाँघकर वनमें क्रीड़ा करनेवाले बलवान् अश्वके समान जिस सोमकी सेवा करती हैं—

तं गोभिर्वृषणं रसं मदाय देववीतये । सुतं भराय सं सृज ॥६॥
देवो देवाय धारयेन्द्राय पवते सुतः । पयो यदस्य पीपयत् ॥७॥
आत्मा यज्ञस्य रंह्या सुष्वाणः पवते सुतः । प्रत्नं नि पाति काव्यम् ॥८॥
एवा पुनान इन्द्रयुर्मदं मदिष्ठ वीतये । गुहा चिद्दधिषे गिरः ॥९॥

---

७ सूक्त

पवमान सोम देवता । असित अथवा देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

असृग्रमिन्दवः पथा धर्मन्नृतस्य सुश्रियः । विदाना अस्य योजनम् ॥१॥
प्र धारा मध्वो अग्रियो महीरपो वि गाहते । हविर्हविष्षु वन्द्यः ॥२॥
प्र युजो वाचो अग्रियो वृषाव चक्रदद्वने । सद्माभि सत्यो अध्वरः ॥३॥
परि यत् काव्या कविर्नृम्णा वसानो अर्षति । स्वर्वाजी सिषासति ॥४॥

---

६ पान करनेपर देवोंके मत्त होनेके लिये अभिषुत और अभीष्टवर्षक उसी सोमके रसमें, युद्धके लिये, गव्य मिलाओ ।

७ इन्द्रके लिये अभिषुत सोमदेव धाराके रूपमें क्षरित होते हैं; क्योंकि इन्द्र इनका रस आप्यायित करता है।

यज्ञकी आत्मा और अभिषुत सोम यजमानोंको अभीष्ट देते हुए वेगसे गिरते हैं और अपना पुराना कवित्व (क्रान्तदर्शित्व) की भी रक्षा करते हैं ।

९ मदकर सोम, इन्द्रकी अभिलाषासे उनके पानके लिये क्षरित होकर यज्ञ-शालामें शब्द करो ।

---

१ शोभन श्रीवाले और इन्द्रका सम्बन्ध जाननेवाले सोम कर्ममें, यज्ञ-मार्गमें, बनाये जाते हैं ।

२ सोम हव्योंमें स्तुत्य हव्य हैं । सोम महान् जलमें निमज्जित होते हैं । उन्हीं सोमकी श्रेष्ठ धाराएँ गिरती हैं ।

३ अभीष्टवर्षक, सत्य, हिंसा-शून्य और प्रधान सोम यज्ञ-गृहकी ओर जलसे युक्त शब्द करते हैं ।

४ जिस समय कवि सोम धनको ग्रहण करते हुए काव्य (स्तोत्र) को जानते हैं, उस समय स्वर्गमें इन्द्र बलका प्रकाश करते हैं ।

पवमानो अभि स्पृधो विशो राजेव सीदति । यदीमृण्वन्ति वेधसः ॥५॥

अव्यो वारे परि प्रियो हरिर्वनेषु सीदति । रेभो वनुष्यते मती ॥६॥

स वायुमिन्द्रमश्विना साकं मदेन गच्छति । रणा यो अस्य धर्मभिः ॥७॥

आ मित्रावरुणा भगं मध्वः पवन्त ऊर्मयः । विदाना अस्य शक्मभिः ॥८॥

अस्मभ्यं रोदसी रयिं मध्वो वाजस्य सातये । श्रवो वसूनि संजितम् ॥९॥

८ सूक्त

पवमान सोम देवता । असित अथवा देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

एते सोमा अभि प्रियमिन्द्रस्य काममक्षरन् । वर्द्धन्तो अस्य वीर्यम् ॥१॥

पुनानासश्चमूषदो गच्छन्तो वायुमश्विना । ते नो धान्तु सुवीर्यम् ॥२॥

इन्द्रस्य सोम राधसे पुनानो हार्दि चोदय । ऋतस्य योनिमासदम् ॥३॥

---

५ जिस समय कर्मकर्त्ता इस सोमको प्रेरित करते हैं, उस समय पवमान सोम, राजाके समान, यज्ञ-विघ्नकर्त्ता मनुष्योंकी ओर जाते हैं ।

६ हरित-वर्ण और प्रिय सोम जलमें मिश्रित होकर मेषके लोमों (बालों)पर बैठते और शब्द करते हुए स्तुतिकी सेवा करते हैं ।

७ जो सोमके इस कर्मसे प्रसन्न होता है, वह वायु, इन्द्र और अश्विद्वयको मदके साथ प्राप्त करता है ।

८ जिन यजमानोंके सोमोंकी तरङ्गें मित्र, वरुण और भगदेवकी ओर गिरती हैं, वे सोमका जानते हुए सुख प्राप्त करते हैं ।

९ द्यावापृथिवी, मदकर सोम-रूप अन्नकी प्राप्तिके लिये हमें अन्न, धन और पशु आदि दो ।

१ ये सोम इन इन्द्रके वीर्यको बढ़ाते हुए उनके अभिलषणीय और प्रीतिकर रसका वर्षण करते हैं ।

२ वे सोम अभिषुत होते हैं, चमसमें स्थित होते हैं और वायु तथा अश्विद्वयके पास जाते हैं । वायु आदि हमें सुन्दर वीर्य दें ।

३ सोम, तुम अभिषुत और मनोज्ञ होकर इन्द्रकी आराधनाके लिये यज्ञ-स्थानमें बैठो और इन्द्रको प्रेरित करो ।

मृजन्ति त्वा दश क्षिपो हिन्वन्ति सप्त धीतयः । अनु विप्रा अमादिषुः ॥४॥
देवेभ्यस्त्वा मदाय कं सृजानमति मेष्यः । सं गोभिर्वासयामसि ॥५॥
पुनानः कलशेष्वा वस्त्राण्यरुषो हरिः । परि गव्यान्यव्यत ॥६॥
मघोन आ पवस्व नो जहि विश्वा अप द्विषः । इन्दो सखायमा विश ॥७॥
वृष्टिं दिवः परि स्रव द्युम्नं पृथिव्या अधि । सहो नः सोम पृत्सु धाः ॥८॥
नृचक्षसं त्वा वयमिन्द्रपीतं स्वर्विदम् । भक्षीमहि प्रजामिषम् ॥९॥

९ सूक्त

पवमान सोम देवता । असित अथवा देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

परि प्रिया दिवः कविर्वयांसि नप्त्योर्हितः । सुवानो याति कविक्रतुः ॥१॥
प्रप्र क्षयाय पन्यसे जनाय जुष्टो अद्रुहे । वीत्यर्ष चनिष्ठया ॥२॥

---

४ सोम, दसो अँगुलियाँ तुम्हारी सेवा करती हैं। सात होता तुम्हें प्रसन्न करते हैं और मेधावी लोग तुम्हें प्रमत्त करते हैं।

५ तुम मेष-लोम और जलमें बनाये जाते हो। देवोंकी मत्तताके लिये हम तुम्हें दही आदिमें मिला देंगे।

६ अभिषुत, कलसमें भली भाँति सिक्त, दीप्तियुक्त और हरितवर्ण सोम, वस्त्रके समान, दही आदिको आच्छादित करता है।

७ सोम, हम धनी हैं। तुम हमारे सामने क्षरित होओ। सारे शत्रुओंका विनाश करो। मित्र इन्द्रको प्राप्त करो।

८ सोम, द्युलोकसे तुम पृथिवीके ऊपर वर्षा करो। धनको उत्पन्न करो और युद्धमें हमें बास-स्थान दो।

९ सोम, तुम नेताओंके दर्शक और सर्वज्ञ हो। इन्द्रके पान करनेपर हम तुम्हारा पान करते हैं। हम सन्तान और अन्न प्राप्त करें।

---

१ मेधावी और क्रान्तदर्शी सोम अभिषवण-प्रस्तरके ऊपर निहित और अभिषुत होकर द्युलोकके अतीव प्रिय पक्षियोंके पास जाते हैं।

२ तुम अपने निवास-भूत अद्रोही और स्तोता मनुष्यके लिये पर्याप्त हो। अन्नवाली धाराके साथ आओ।

स सूनुर्मातरा शुचिर्जातो जाते अरोचयत् । महान्मही ऋतावृधा ॥३॥
स सप्त धीतिभिर्हितो नद्यो अजिन्वदद्रुहः । या एकमक्षि वावृधुः ॥४॥
ता अभि सन्तमस्तृतं महे युवानमा दधुः । इन्दुमिन्द्र तव व्रते ॥५॥
अभि वह्निरमर्त्यः सप्त पश्यति वावहिः । क्रिविर्देवीरतर्पयत् ॥६॥
अवा कल्पेषु नः पुमस्तमांसि सोम योध्या । तानि पुनान जङ्घनः ॥७॥
नू नव्यसे नवीयसे सूक्ताय साधया पथः । प्रत्नवद्रोचया रुचः ॥८॥
पवमान महि श्रवो गामश्वं रासि वीरवत् । सना मेधां सना स्वः ॥९॥

---

१० सूक्त

पवमान सोम देवता । असित अथवा देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्र स्वानासो रथाइवार्वन्तो न श्रवस्यवः । सोमासो राये अक्रमुः ॥१॥

---

३ उत्पन्न, पवित्र और महान् वह सोम-रूप पुत्र महती, यज्ञ-वर्द्धयित्री, जनयित्री और माता द्यावापृथिवीको प्रदीप्त करते हैं।

४ नदियोंने जिन अक्षीण और मुख्य सोमको वर्द्धित किया है, वही सोम अङ्गुलि द्वारा निहित होकर द्रोह-शून्य सातो नदियोंको प्रसन्न करते हैं।

५ इन्द्र, तुम्हारे कर्ममें उन अङ्गुलियोंने अहिंसित और वर्तमान सोमको महान् कर्मके लिये धारण किया है।

६ वाहक और अमर देवोंके तृप्तिदाता सोम सातो नदियोंका दर्शन करते हैं। वह कूप-रूपसे पूर्ण होकर नदियोंको तृप्त करते हैं।

७ पुरुष सोम, कल्पनीय दिनोंमें हमारी रक्षा करो। पवमान सोम, जिन राक्षसोंके साथ युद्ध किया जाना चाहिये, उन्हें विनष्ट करो।

८ सोम, तुम नये और स्तुत्य सूक्तके लिये शीघ्र ही यज्ञ-पथसे आओ और पहलेकी तरह दीप्तिका प्रकाश करो।

९ शोधनकालीन सोम, तुम पुत्रवान् महान् अन्न, गौ और अश्व हमें दान करते हो। दान करो और हमें मनोरथ दो।

---

१ रथ और अश्वके समान शब्द करनेवाले सोम, अन्नकी इच्छा करते हुए, यजमानके धनके लिये आये हैं।

हिन्वानासो रथा इव दधन्विरे गभस्त्योः । भरासः कारिणामिव ॥२॥

राजानो न प्रशस्तिभिः सोमासो गोभिरञ्जते ।

यज्ञो न सप्त धातृभिः ॥३॥

परि सुवानास इन्दवो मदाय बर्हणा गिरा । सुता अर्षन्ति धारया ॥४॥

आपानासो विवस्वतो जनन्त उषसो भगम् । सूरा अण्वं वितन्वते ॥५॥

अप द्वारा मतीनां प्रत्ना ऋण्वन्ति कारवः । वृष्णो हरस आयवः ॥६॥

समीचीनास आसते होतारः सप्तजामयः । पदमेकस्य पिप्रतः ॥७॥

नाभा नाभिं न आ ददे चक्षुश्चित् सूर्ये सचा । कवेरपत्यमा दुहे ॥८॥

अभि प्रिया दिवस्पदमध्वर्युभिर्गुहा हितम् । सूरः पश्यति चक्षसा ॥९॥

---

२ रथके समान सोम यज्ञकी ओर जाते हैं। जैसे भार-वाहक भुजाओंपर भारको धारण करता है, वैसे ही ऋत्विक् लोग बाहुके द्वारा उन्हें धारण करते हैं।

३ जैसे स्तुतिसे राजा सन्तुष्ट होते हैं और जैसे सात होताओंके द्वारा यज्ञ संस्कृत होता है, वैसे ही गव्यके द्वारा सोम संस्कृत होता है।

४ अभिषुत सोम महती स्तुतिके द्वारा अभिषुत होकर, मत्त करनेके लिये धारा-रूपसे जाते हैं।

५ इन्द्रके मद-गोष्ठ-रूप, उषाके भाग्यके उत्पादक तथा गिरनेवाले सोम शब्द करते हैं।

६ स्तोता, प्राचीन, अभीष्टवर्षक और सोमका भक्षण करनेवाले मनुष्य यज्ञके द्वारका उद्घाटन करते हैं।

७ उत्तम सात बन्धुओंके समान और सोमके स्थानका एक मात्र पूरण करनेवाले सात होता यज्ञमें बैठते हैं।

८ मैं यज्ञकी नाभि सोमको अपने नाभि-देशमें ग्रहण करता हूँ। चक्षु सूर्यमें संयुक्त होता है। मैं कवि सोमके प्रभावको पूर्ण करता हूँ।

९ गमन-परायण और दीप्त इन्द्र हृदयमें निहित अपने प्रिय पदार्थ सोमको नेत्रसे देख सकते हैं।

११ सूक्त

पवमान सोम देवता । असित अथवा देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे । अभि देवाँ इयक्षते ॥१॥

अभि ते मधुना पयोथर्वाणो अशिश्रयुः । देवं देवाय देवयु ॥२॥

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते । शं राजन्नोषधीभ्यः ॥३॥

बभ्रवे नु स्वतवसेरुणाय दिविस्पृशे । सोमाय गाथमर्चत ॥४॥

हस्तच्युतेभिरद्रिभिः सुतं सोमं पुनीतन । मधावा धावता मधु ॥५॥

नमसेदुप सीदत दध्नेदभि श्रीणीतन । इन्दुमिन्द्रे दधातन ॥६॥

अमित्रहा विचर्षणिः पवस्व सोम शं गवे । देवेभ्यो अनुकामकृत् ॥७॥

इन्द्राय सोम पातवे मदाय परि षिच्यसे । मनश्चिन्मनसस्पतिः ॥८॥

पवमान सुवीर्यं रयिं सोम रिरीहि नः । इन्दविन्द्रेण नो युजा ॥९॥

---

१ नेताओ, यह क्षरणशील सोम देवोंका यज्ञ करना चाहता है । इसके लिये गाओ ।

२ सोम, अथर्वा ऋषियोंने तुम्हारे दीप्तिवाले और देवाभिलाषी रसको इन्द्रके लिये, गोदुग्धमें संस्कृत किया है ।

३ राजन्, तुम हमारी गायके लिये सरलतासे गिरो । पुत्र आदिके लिये भी सुखसे गिरो । अश्वके लिये सरलतासे गिरो । ओषधियोंके लिये सुखसे गिरो ।

४ स्तोताओ, तुम लोग पिङ्गलवर्ण, स्वबलरूप, अरुणवर्ण और स्वर्गको छूनेवाले सोमके लिये शीघ्र गाथाका उच्चारण करो ।

५ ऋत्विको, हाथके अभिषव-पाषाण द्वारा अभिषुत सोमको पवित्र करो । मदकर सोममें गोदुग्ध डालो ।

६ नमस्कारके साथ सोमके पास जाओ । उसमें दही मिलाओ, इन्द्रके लिये सोम दो ।

७ सोम, तुम शत्रुविनाशक हो । तुम विचक्षण और देवोंके मनोरथ-पूरक हो । तुम हमारी गायके लिये सरलतासे क्षरित होओ ।

८ सोम, तुम मनके ज्ञाता और मनके ईश्वर हो । तुम पात्रोंमें इसलिये सींचे जाते हो कि, तुम्हें पीकर इन्द्र प्रमत्त होंगे ।

९ माँगे हुए और गिरते हुए सोम, इन्द्रके साथ तुम हमें सुन्दर वीर्यसे युक्त धन दो ।

१२ सूक्त

पवमान सोम देवता। असित अथवा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

सोमा असृग्रमिन्दवः सुता ऋतस्य सादने। इन्द्राय मधुमत्तमाः ॥१॥

अभि विप्रा अनूषत गावो वत्सं न मातरः। इन्द्रं सोमस्य पीतये ॥२॥

मदच्युत् क्षेति सादने सिन्धोरूर्मा विपश्चित्।
सोमो गौरी अधि श्रितः ॥३॥

दिवो नाभा विचक्षणोऽव्यो वारे महीयते। सोमो यः सुक्रतुः कविः ॥४॥

यः सोमः कलशेष्वाँ अन्तः पवित्र आहितः। तमिन्दुः परि षस्वजे ॥५॥

प्र वाचमिन्दुरिष्यति समुद्रस्याधि विष्टपि। जिन्वन् कोशं मधुश्चुतम् ॥६॥

नित्यस्तोत्रो वनस्पतिर्धीनामन्तः सबर्दुघः। हिन्वानो मानुषा युगा ॥७॥

---

१ अभिषुत और अतीव मधुर सोम इन्द्रके लिये यज्ञगृहमें प्रस्तुत हो रहा है।

२ जैसे गायें बछड़ोंके सामने बोलती हैं, वैसे ही मेधावी लोग सोमपानके लिये इन्द्रके पास शब्द करते हैं।

३ मदस्रावी सोम नदी-तरङ्ग (वसतीवरी) के यहाँ रहते हैं। विद्वान् सोम माध्यमिकी वाक् (वचन) में आश्रय पाते हैं।

४ सुन्दर-प्रज्ञ, क्रान्तकर्मा और सूक्ष्मदर्शक सोम अन्तरीक्षके नाभि-स्वरूप मेषलोममें पूजित होते हैं।

५ जो सोम कुम्भमें है और दशापवित्रके बीच जो निहित है, उस अपने अंशमें सोमदेव प्रवेश करते हैं।

६ सोम मदस्रावी मेघको प्रसन्न करते हुए अन्तरीक्षके रोकनेवाले स्थान (दशापवित्र) में शब्द करते हैं।

७ सदा स्तोत्रवाले और अमृतको दूहनेवाले वनस्पति (सोम) मनुष्योंके लिये एक दिन कर्मके बीच प्रसन्नतासे रहते हैं।

अभि प्रिया दिवस्पदा सोमो हिन्वानो अर्षति । विप्रस्य धारया कविः ॥८॥
आ पवमान धारय रयिं सहस्रवर्चसम् । अस्मे इन्दो स्वाभुवम् ॥९॥

८ कवि सोम अन्तरीक्षसे भेजे जाकर मेधावियोंकी धाराके रूपसे प्रिय स्थानमें जाते हैं।
९ पवमान (क्षरणशील) सोम, तुम हमें बहुदीप्तिवाले और सुन्दर गृहवाले धन दो।

सप्तम अध्याय समाप्त

अष्टम अध्याय

१३ सूक्त

सोम देवता। असित अथवा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

सोमः पुनानो अर्षति सहस्रधारो अत्यविः। वायोरिन्द्रस्य निष्कृतम् ॥१॥

पवमानमवस्यवो विप्रमभि प्र गायत। सुष्वाणं देववीतये ॥२॥

पवन्ते वाजसातये सोमाः सहस्रपाजसः। गृणाना देववीतये ॥३॥

उत नो वाजसातये पवस्व बृहतीरिषः। द्युमदिन्दो सुवीर्यम् ॥४॥

ते नः सहस्रिणं रयिं पवन्तामा सुवीर्यम्। सुवाना देवास इन्दवः ॥५॥

अत्या हियाना न हेतृभिरसृग्रं वाजसातये। वि वारमव्यमाशवः ॥६॥

वाश्रा अर्षन्तीन्दवोभि वत्सं न धेनवः। दधन्विरे गभस्त्योः ॥७॥

जुष्ट इन्द्राय मत्सरः पवमान कनिक्रदत्। विश्वा अप द्विषो जहि ॥८॥

---

१ असीम धाराओंवाले और पवित्र सोम दशापवित्रको लाँघकर, वायु और इन्द्रके पानके लिये, संस्कृत पात्रमें जाते हैं।

२ रक्षाभिलाषियो, तुम लोग पवित्र विप्र और देवोंके पानके लिये अभिषुत सोमके लिये गमन करो।

३ बहु-बल-दाता और स्तूयमान सोम यज्ञ-सिद्धि और अन्नलाभके लिये क्षरित होते हैं।

४ सोम, हमारे अन्न-लाभके लिये दीप्तिमती और सुन्दर वीर्यवाली तथा महती रस-धारा बरसाओ।

५ वह अभिषुत सोम देव हमें सहस्र—सङ्ख्यक धन और सुवीर्य दें।

६ संग्राममें भेजे गये अश्वके समान प्रेरकोंके द्वारा प्रेरित होकर शीघ्रगामी सोम, अन्न-प्राप्तिके लिये, दशापवित्रको लाँघकर, जा रहे हैं।

७ जैसे गायें बोलती हुई बछड़ोंकी तरफ जाती हैं, वैसे ही सोम भी शब्द करके पात्रकी ओर जाते हैं। ऋत्विक् लोग हाथपर सोम धारण करते हैं।

८ सोम इन्द्रके लिये प्रिय और मदकर है। पवमान सोम, तुम शब्द करके सारे शत्रुओंका विनाश करो।

अपघ्नन्तो अराव्णः पवमानाः स्वर्दृशः । योनावृतस्य सीदत ॥९॥

१४ सूक्त

सोम देवता । असित अथवा देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

परि प्रासिष्यदत् कविः सिन्धोरूर्मावधि श्रितः । कारं बिभ्रत् पुरुस्पृहम् ॥१॥

गिरा यदी सबन्धवः पञ्च व्राता अपस्यवः । परिष्कृण्वन्ति धर्णसिम् ॥२॥

आदस्य शुष्मिणो रसे विश्वे देवा अमत्सत । यदी गोभिर्वसायते ॥३॥

निरिणानो वि धावति जहच्छर्याणि तान्वा । अत्रा सं जिघ्रते युजा ॥४॥

नप्तीभिर्यो विवस्वतः शुभ्रो न मामृजे युवा । गाः कृण्वानो न निर्णिजम् ॥५॥

अति श्रिती तिरश्चता गव्या जिगात्यण्व्या । वग्नुमियर्ति यं विदे ॥६॥

अभि क्षिपः समग्मत मर्जयन्तीरिषस्पतिम् । पृष्ठा गृभ्णत वाजिनः ॥७॥

परि दिव्यानि मर्मृशद्विश्वानि सोम पार्थिवा । वसूनि याह्यस्मयुः ॥८॥

---

९ पवमान सोम, तुम अदाताओंके हिंसक और सर्वदर्शक हो । यज्ञ-स्थलमें बैठो ।

---

१ नदी-तरङ्ग (वसतीवरी जल-रस) में आश्रित और कवि सोम अनेकोंके लिये अभिलषणीय शब्दका उच्चारण करके गिर रहे हैं ।

२ पाँच देशोंके परस्पर मित्र मनुष्य कर्मकी अभिलाषासे जिस समय धारक सोमको स्तुति द्वारा अलङ्कृत करते हैं—

३ उस समय, सोमके गोदुग्धमें मिलाये जानेपर, सारे देवगण बलवान् सोम-रसमें प्रमत्त होते हैं ।

४ दशापवित्रके वस्त्रके द्वारको छोड़कर सोम अधोदेशमें दौड़ते हैं । इस यज्ञमें मित्र इन्द्रके लिये सङ्गत होते हैं ।

५ जैसे जवान घोड़ेको साफ किया जाता है, वैसे ही सोम, गव्यमें अपनेको मिलाते हुए परिचर्यावालेके पौत्रों (अङ्गुलियों) के द्वारा, मार्जित होते हैं ।

६ अङ्गुलि द्वारा अभिषुत सोम गव्य (दही आदि) में मिलनेके लिये उसके सामने जाते और शब्द करते हैं । मैं सोमको प्राप्त करूँगा

७ परिमार्जन करती हुई अङ्गुलियाँ अन्नपति सोमके साथ मिलती हैं । वह बली सोमकी पीठपर चढ़ गयीं ।

८ सोम, तुम सारे स्वर्गीय और पार्थिव धनोंको ग्रहण करते हुए हमारी इच्छा करके आओ ।

१५ सूक्त

सोम देवता। असित वा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

एष धिया यात्यण्व्या शूरो रथेभिराशुभिः। गच्छन्निन्द्रस्य निष्कृतम्॥१॥

एष पुरू धियायते बृहते देवतातये। यत्रामृतास आसते॥२॥

एष हितो वि नीयतेऽन्तः शुभ्रावता पथा। यदी तुञ्जन्ति भूर्णयः॥३॥

एष शृङ्गाणि दोधुवच्छिशीते यूथ्यो वृषा। नृम्णा दधान ओजसा॥४॥

एष रुक्मिभिरीयते वाजी शुभ्रेभिरंशुभिः। पतिः सिन्धूनां भवन्॥५॥

एष वसूनि पिब्दना परुषा ययिवाँ अति। अव शादेषु गच्छति॥६॥

एतं मृजन्ति मर्ज्यमुप द्रोणेष्वायवः। प्रचक्राणं महीरिषः॥७॥

एतमु त्यं दश क्षिपो मृजन्ति सप्त धीतयः। स्वायुधं मदिन्तमम्॥८॥

---

१ यह विक्रान्त सोम, अङ्गुलि द्वारा अभिषुत होकर, कर्म-बलके द्वारा शीघ्रगामी रथकी सहायतासे, इन्द्रके बनाये स्वर्गमें जाते हैं।

२ जिस विशाल यज्ञमें देवता लोग रहते हैं, उसी यज्ञमें सोम बहुत कर्मोंकी इच्छा करते हैं।

३ यह सोम हविर्धानमें स्थापित और तदनन्तर नीत होकर आहवनीय देशमें जिस समय [illegible] और सोमवाले मार्गमें दिये जाते हैं, उस समय अध्वर्यु लोग भी प्राप्त होते हैं।

४ यह सोम सींग (ऊँचेके हिस्से) को कँपाते हैं। उनकी सींग दलपति साँड़के तेज हैं। ये बलके द्वारा हमारे लिये धनको धारण करते हैं।

५ यह वेगवान् और शुभ्र अंशोंसे युक्त सोम बहनेवाले सारे रसोंके पति होकर जाते हैं।

६ यह सोम आच्छादन करनेवाले और पीड़ित राक्षसोंको अपने पर्व (अंश) के द्वारा लाँघकर उन्हें जानते हैं।

७ मनुष्य इन मार्जनीय सोमको द्रोण-कलसमें छान रहे हैं। सोम बहुत रस देनेवाले हैं।

८ दस अँगुलियाँ और सात ऋत्विक् शोभन आयुध और मादक सोमको परिमार्जित करते हैं।

१६ सूक्त

सोम देवता । असित वा देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्र ते सोतार ओण्यो रसं मदाय घृष्वये । सर्गो न तक्त्येतशः ॥१॥
क्रत्वा दक्षस्य रथ्यमपो वसानमन्धसा । गोषामण्वेषु सश्चिम ॥२॥
अनप्तमप्सु दुष्टरं सोमं पवित्र आसृज । पुनीहीन्द्राय पातवे ॥३॥
प्र पुनानस्य चेतसा सोमः पवित्रे अर्षति । क्रत्वा सधस्थमासदत् ॥४॥
प्र त्वा नमोभिरिन्दव इन्द्र सोमा असृक्षत । महे भराय कारिणः ॥५॥
पुनानो रूपे अव्यये विश्वा अर्षन्नभि श्रियः शूरो न गोषु तिष्ठति ॥६॥
दिवो न सानु पिप्युषी धारा सुतस्य वेधसः वृथा पवित्रे अर्षति ॥७॥
त्वं सोम विपश्चितं तना पुनान आयुषु अव्यो वारं वि धावसि ॥८॥

---

१ सोम, अभिषव करनेवाले द्यावापृथिवीके बीच शत्रुको हरानेवाली मत्तताके लिये उत्पन्न किया जाकर तुम अश्वके समान जाते हो।

२ हम बलके नेता, जलके आच्छादक, अन्नके साथ वर्तमान और गौओंके प्रसवण सोममें कर्मके द्वारा अँगुलियोंको मिलाते हैं।

३ शत्रुओंके द्वारा अप्राप्त, अन्तरीक्षमें वर्त्तमान और दूसरोंके द्वारा अपराजेय सोमको दशापवित्रमें फेंको और इन्द्रके पानके लिये इसे शोधित करो।

४ स्तुतिके द्वारा पवित्र पदार्थोंमेंसे (एक) सोम दशापवित्रमें जाते और अनन्तर कर्मबलसे द्रोण-कलसमें बैठते हैं।

५ इन्द्र, नमस्कारसे युक्त स्तोताके साथ सोम बली होकर महायुद्धके लिये तुम्हारे पास जाता है।

६ मेष-लोमवाले वस्त्रमें शोधित और सारी शोभाओंसे युक्त सोम, गो-प्राप्तिके लिये वीरके समान वर्त्तमान हैं।

७ अन्तरीक्ष-प्रदेशमें अवस्थित जल जैसे नीचे गिरता है, वैसे ही बलकारक और अभिषुत सोमको आप्यायित करनेवाली धारा दशापवित्रमें गिरती है।

८ सोम, मनुष्योंमें तुम स्तोताकी रक्षा करते हो। बलके द्वारा शोधित होकर तुम मेष-लोमके प्रति जाते हो।

---

१७ सूक्त

सोम देवता। असित वा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र निम्नेनेव सिन्धवो घ्नन्तो वृत्राणि भूर्णयः। सोमा असृग्रमाशवः ॥१॥
अभि सुवानास इन्दवो वृष्टयः पृथिवीमिव। इन्द्रं सोमासो अक्षरन् ॥२॥
अत्यूर्मिर्मत्सरो मदः सोमः पवित्रे अर्षति। विघ्नन्रक्षांसि देवयुः ॥३॥
आ कलशेषु धावति पवित्रे परि षिच्यते। उक्थैर्यज्ञेषु वर्धते ॥४॥
अति त्री सोम रोचना रोहन्न भ्राजसे दिवम्। इष्णन्त्सूर्यं न चोदयः ॥५॥
अभि विप्रा अनूषत मूर्धन्यज्ञस्य कारवः। दधानाश्चक्षसि प्रियम् ॥६॥
तमु त्वा वाजिनं नरो धीभिर्विप्रा अवस्यवः। मृजन्ति देवतातये ॥७॥
मधोर्धारामनु क्षर तीव्रः सधस्थमासदः। चारुर्ऋताय पीतये ॥८॥

१ जैसे नदियाँ निम्न देशकी ओर जाती हैं, वैसे ही शत्रु-विघातक, शीघ्रगामी और व्याप्त सोम द्रोण-कलसकी ओर जाते हैं।

२ जैसे वर्षा पृथिवीपर गिरती हैं, वैसे ही अभिषुत सोम इन्द्रकी प्राप्तिके लिये गिरते हैं।

३ अतीव प्रवृद्ध और मदकर सोम, राक्षसोंका विनाश करते हुए, देव-भिलाषी होकर दशा-पवित्रमें जाते हैं।

४ सोम कलसमें जाते हैं। वह दशापवित्रमें सिक्त होते हैं और उक्थ मन्त्रोंके द्वारा वर्द्धित होते हैं।

५ सोम, तुम तीनों लोकोंको लाँघकर और ऊपर चढ़कर स्वर्गको प्रकाशित करते हो और गतिपरायण हो। सूर्यको प्रेरित करते हो।

६ मेधावी स्तोतालोग अभिषव-दिवसमें परिचारक और सोमके प्रिय होकर सोमकी स्तुति करते हैं।

७ सोम, नेता मेधावी लोग अन्नाभिलाषी होकर कर्म द्वारा यज्ञके लिये अन्नवाले तुम्हें ही शोधित करते हैं।

८ सोम, तुम मधुर धाराकी ओर प्रवाहित होओ, तीव्र होकर अभिषव-स्थानमें बैठो और मनोहर होकर यज्ञमें पानके लिये बैठो।

१८ सूक्त

सोम देवता। असित वा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

परि सुवानो गिरिष्ठाः पवित्रे सोमो अक्षाः। मदेषु सर्वधा असि ॥१॥

त्वं विप्रस्त्वं कविर्मधु प्र जातमन्धसः। मदेषु सर्वधा असि ॥२॥

तव विश्वे सजोषसो देवासः पीतिमाशत। मदेषु सर्वधा असि ॥३॥

आ यो विश्वानि वार्या वसूनि हस्तयोर्दधे। मदेषु सर्वधा असि ॥४॥

य इमे रोदसी मही सं मातरेव दोहते। मदेषु सर्वधा असि ॥५॥

परि यो रोदसी उभे सद्यो वाजेभिरर्षति। मदेषु सर्वधा असि ॥६॥

स शुष्मी कलशेष्वा पुनानो अचिक्रदत्। मदेषु सर्वधा असि ॥७॥

---

१ यही सोम दशापवित्रमें गिरते हैं। यही सोम सवन-कालमें प्रस्तरपर अवस्थित हैं। सोम, तुम मादक पदार्थोंमें सबके धारक हो।

२ सोम, तुम मेधावी और कवि हो। तुम अन्नसे उत्पन्न मधुर रस दो। मादक पदार्थोंमें तुम सबके धारक हो।

३ समान प्रीतिवाले होकर सारे देवता तुम्हारा पान करते हैं। मादक पदार्थोंके बीच तुम सबके धाता हो।

४ सोम सारे वरणीय धनोंको स्तोताके हाथमें देते हैं। तुम सारे मादक पदार्थोंमें सबके धाता हो।

५ एक शिशुको दो माताओंके समान तुम महती द्यावापृथिवीका दोहन करते हो।

६ वह अन्नके द्वारा तुरत द्यावापृथिवीको व्याप्त करते हैं। तुम मादक पदार्थोंमें सबके धारक हो।

७ वह सोम बली हैं। शोधित होनेके समय वह कलसके बीच शब्द करते हैं।

१६ सूक्त

सोम देवता। असित वा देवल ऋषि, गायत्री छन्द।

यत् सोम चित्रमुक्थ्यं दिव्यं पार्थिवं वसु। तन्नः पुनान आभर ॥१॥

युवं हि स्थः स्वर्पती इन्द्रश्च सोम गोपती। ईशाना पिप्यतं धियः ॥२॥

वृषा पुनान आयुषु स्तनयन्नधि बर्हिषि। हरिः सन्योनिमासदत् ॥३॥

अवावशन्त धीतयो वृषभस्याधि रेतसि। सूनोर्वत्सस्य मातरः ॥४॥

कुविद्वृषण्यन्तीभ्यः पुनानो गर्भमादधत्। याः शुक्रं दुहते पयः ॥५॥

उप शिक्षापतस्थुषो भियसमा धेहि शत्रुषु। पवमान विदा रयिम् ॥६॥

नि शत्रोः सोम वृष्ण्यं नि शुष्मं नि वयस्तिर। दूरे वा सतो अन्ति वा ॥७॥

१ जो कुछ स्तुत्य, पार्थिव और स्वर्गीय विचित्र धन है, शोधित होनेके समय तुम हमारे लिये वह ले आओ।

२ सोम, तुम और इन्द्र सबके स्वामी, गौओंके पालक और ईश्वर हो। तुम हमारे कर्मको वर्द्धित करो।

३ अभिलाषादाता सोम शोधित होकर, मनुष्योंमें शब्द करके और हरित-वर्ण होकर बिछे हुए कुशपर, अपने स्थानपर, बैठते हैं।

४ पुत्र-रूप सोमकी मातृ-रूपिणी वसतीवरी (आदि), सोम द्वारा पीत होकर, मनोरथ-दाता सोमकी सारवत्ताकी कामना करती है।

५ मिलाये जानेके समय सोम सोमाभिलाषिणी वसतीवरी (आदि)को गर्भ उत्पन्न करते हैं। सोम इन जलोंसे दीप्त दुग्धका दोहन करते हैं।

६ पवमान सोम, जो हमारा अभिमत दूरस्थ है, उसे पासमें करो। शत्रुओंमें भय उत्पन्न करो उनके धनको जानो।

७ सोम चाहे तुम दूर हो वा समीप, शत्रुके वर्षक बलका विनाश करो। उसके शोषक तेजका विनाश करो।
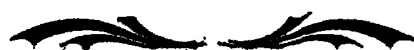
२० सूक्त

सोम देवता। असित वा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र कविर्देववीतयेऽव्यो वारेभिरर्षति। साह्वान्विश्वा अभि स्पृधः ॥१॥
स हि ष्मा जरितृभ्य आ वाजं गोमन्तमिन्वति। पवमानः सहस्रिणम् ॥२॥
परि विश्वानि चेतसा मृशसे पवसे मती। स नः सोम श्रवो विदः ॥३॥
अभ्यर्ष बृहद्यशो मघवद्भ्यो ध्रुवं रयिम्। इषं स्तोतृभ्य आभर ॥४॥
त्वं राजेव सुव्रतो गिरः सोमा विवेशिथ। पुनानो वह्ने अद्भुत ॥५॥
स वह्निरप्सु दुष्टरो मृज्यमानो गभस्त्योः। सोमश्चमूषु सीदति ॥६॥
क्रीळुर्मखो न मंहयुः पवित्रं सोम गच्छसि। दधत् स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥७॥

---

१ कवि सोम, देवोंके पानके लिये मेष-लोमोंके द्वारा जाते हैं। शत्रुओंके अभिभव-कर्त्ता सोम सारे हिंसकोंको नष्ट करते हैं।

२ वही पवमान सोम स्तोताओंको गोयुक्त सहस्र-सङ्ख्यक अन्न प्रदान करते हैं।

३ सोम, तुम अपने मनसे सारा धन देते हो। सोम, वही तुम हमें अन्न प्रदान करो।

४ सोम, तुम महती कीर्तिको प्रेरित करो। हव्यदाताको निश्चित धन दो। स्तोताओंको अन्न दो।

५ सोम, तुम सुन्दर कर्मवाले हो। पवित्र (शोधित) होकर तुम राजाके समान हमारी स्तुतिको स्वीकार करो। तुम अद्भुद और वाहक हो।

६ वही सोम वाहक और अन्तरीक्षमें वर्त्तमान हैं। वह हाथोंके द्वारा कठिनतासे रगड़े जाकर पात्रमें स्थित होते हैं।

७ सोम, तुम क्रीड़ापरायण और दानेच्छुक हो। स्तोताको सुन्दर वीर्य देकर, दानके समान, दशापवित्रमें जाते हो।

२१ सूक्त

सोम देवता । असित वा देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

एते धावन्तीन्दवः सोमा इन्द्राय घृष्वयः । मत्सरासः स्वर्विदः ॥१॥

प्रवृण्वन्तो अभियुजः सुष्वये वरिवोविदः । स्वयं स्तोत्रे वयस्कृतः ॥२॥

वृथा क्रीळन्त इन्दवः सधस्थमभ्येकमित् । सिन्धोरूर्मा व्यक्षरन् ॥३॥

एते विश्वानि वार्या पवमानास आशत । हिता न सप्तयो रथे ॥४॥

आस्मिन् पिशङ्गमिन्दवो दधाता वेनमादिशे । यो अस्मभ्यमरावा ॥५॥

ऋभुर्न रथ्यं नवं दधाता केतमादिशे । शुक्राः पवध्वमर्णसा ॥६॥

एत उ त्ये अवीवशन् काष्ठां वाजिनो अक्रत । सतः प्रासाविषुर्मतिम् ॥७॥

---

१ भिंगोनेवाले, दीप्त, अभिभव करनेवाले, मदकर और लोक-पालक सोम इन्द्रकी ओर जाते हैं।

२ यह सोम अभिषवका विशेष आश्रय करते हैं। सबके साथ मिलते हैं। अभिभव करनेवालेको धन प्रदान करते हैं। स्तोताको अन्न देते हैं।

३ सरलतासे क्रीड़ा करनेवाले सोम वसतीवरीमें गिरते हुए एकमात्र द्रोण-कलसमें क्षरित होते हैं।

४ यह सोम संशोधित होकर रथमें योजित अश्वोंके समान, सारे वरणीय धनोंको व्याप्त करते हैं।

५ सोम, इस यजमानकी नाना प्रकारकी कामनाएं पूर्ण करनेके लिये उसे धन दो। यह यजमान दान देते समय हमें (ऋत्विकोंको) चुपचाप दान करता है।

६ जैसे ऋभु रथवाहक और प्रशस्य सारथिको प्रज्ञा प्रदान करते हैं, वैसे ही तुमलोग, हे सोम, इस यजमानको प्रज्ञा दो। जलसे दीप्त होकर गिरो।

७ यह सोम यज्ञकी इच्छा करते हैं। अन्नवान् सोमोंने निवास-स्थान बनाया। बली सोमने यजमानकी बुद्धिको प्रेरित किया।

२२ सूक्त

सोम देवता । असित वा देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

एते सोमास आशवो रथा इव प्र वाजिनः । सर्गाः सृष्टा अहेषत ॥१॥
एते वाता इवोरवः पर्जन्यस्येव वृष्टयः । अग्नेरिव भ्रमा वृथा ॥२॥
एते पूता विपश्चितः सोमासो दध्याशिरः । विपा व्यानशुर्धियः ॥३॥
एते मृष्टा अमर्त्याः ससृवांसो न शश्रमुः । इयक्षन्तः पथो रजः ॥४॥
एते पृष्ठानि रोदसोर्विप्रयन्तो व्यानशुः । उतेदमुत्तमं रजः ॥५॥
तन्तुं तन्वानमुत्तममनु प्रवत आशत । उतेदमुत्तमाय्यम् ॥६॥
त्वं सोम पणिभ्य आ वसु गव्यानि धारयः । ततं तन्तुमचिक्रदः ॥७॥

---

१ सोम बनाये जाकर दशापवित्रके पास शीघ्र जाते हैं, जिस प्रकार युद्ध-प्रेरित अश्व और रथ ।

२ सोम महान् वायु, मेघ और अग्नि-शिखाके समान सब व्याप्त करते हैं ।

३ यह सोम शुद्ध, प्राज्ञ और दधि-युक्त होकर प्रज्ञा-बलसे हमें व्याप्त करते हैं ।

४ यह सब सोम शोधित और अमर हैं । यह जाते समय और मार्गमें लोकोंमें भ्रमण करते समय नहीं थकते ।

५ यह सब सोम द्यावापृथिवीकी पीठोंपर नाना प्रकारसे विचरण करके व्याप्त होते हैं । यह उत्तम द्युलोकमें भी व्याप्त होते हैं ।

६ जल यज्ञ-विस्तारक और उत्तम सोमको व्याप्त करता है । सोमके द्वारा इस कार्यको उत्तम बना लिया जाता है ।

७ सोम, तुम पणियों (असुरों) के पाससे गो-हितकर धनको धारण करते हो । जिस प्रकार यज्ञ विस्तृत हो, ऐसा शब्द करो ।

२३ सूक्त

सोम देवता । असित या देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

सोमा असृग्रमाशवो मधोर्मदस्य धारया । अभि विश्वानि काव्या ॥१॥
अनु प्रत्नास आयवः पदं नवीयो अक्रमुः । रुचे जनन्त सूर्यम् ॥२॥
आ पवमान नो भरार्यो अदाशुषो गयम् । कृधि प्रजावतीरिषः ॥३॥
अभि सोमास आयवः पवन्ते मद्यं मदम् । अभि कोशं मधुश्चुतम् ॥४॥
सोमो अर्षति धर्णसिर्दधान इन्द्रियं रसम् । सुवीरो अभिशस्तिपाः ॥५॥
इन्द्राय सोम पवसे देवेभ्यः सधमाद्यः । इन्दो वाजं सिषासिस ॥६॥
अस्य पीत्वा मदानामिन्द्रो वृत्राण्यप्रति । जघान जघनच्च नु ॥७॥

---

१ मधुर मदकी धारासे शीघ्रगामी सोम स्तोत्र-समयमें सृष्ट होते हैं ।

२ कोई पुराने अश्व (सोम) नये पदका अनुसरण करते और सूर्यको दीप्त करते हैं ।

३ शोधित सोम, जो हव्यदाता नहीं है, उसका गृह हमें दे दो । हमें प्रजासे युक्त धन दो ।

४ गति-शील सोम मदकर रसको क्षरित करते और मधुस्रावीकी (अभिश्रित) रसको भी क्षरित करते हैं ।

५ संसारके धारक सोम इन्द्रिय-वर्द्धक रसको धारण करते हुए उत्तम वीरसे युक्त और हिंसासे बचानेवाले हुए हैं ।

६ सोम, तुम यज्ञके योग्य हो । तुम इन्द्र और अन्यान्य देवोंके लिये गिरते हो और हमें अन्न-दान करनेकी इच्छा करते हो ।

७ मदकर पदार्थोंमें अत्यन्त मदकर इस सोमका पान करके अपराजेय इन्द्रने शत्रुओंको मारा था । वह अब भी मार रहे हैं ।

२४ सूक्त

सोम देवता। असित वा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र सोमासो अधन्विषुः पवमानास इन्दवः। श्रीणाना अप्सु मृञ्जत ॥१॥

अभि गावो अधन्विषुरापो न प्रवता यतीः। पुनाना इन्द्रमाशत ॥२॥

प्र पवमान धन्वसि सोमेन्द्राय पातवे। नृभिर्यतो वि नीयसे ॥३॥

त्वं सोम नृमादनः पवस्व चर्षणीसहे। सस्निर्यो अनुमाद्यः ॥४॥

इन्दो यदद्रिभिः सुतः पवित्रं परिधावसि। अरमिन्द्रस्य धाम्ने ॥५॥

पवस्व वृत्रहन्तमोक्थेभिरनुमाद्यः। शुचिः पावको अद्भुतः ॥६॥

शुचिः पावक उच्यते सोमः सुतस्य मध्वः। देवावीरघशंसहा ॥७॥

---

१ शोधित और दीप्त होकर सोम जाते हैं और मिश्रित होकर जल (वसतीवरी)में मार्जित होते हैं।

२ गमनशील सोम निम्नाभिमुखगामी जलके समान जाते हैं और अनन्तर इन्द्रको व्याप्त करते हैं।

३ शोधित सोम, मनुष्य तुम्हें जहाँसे ले जाते हैं, तुम वहींसे इन्द्रके पानके लिये जाते हो।

४ सोम, तुम मनुष्योंके लिये मदकर हो। शत्रुओंको दबानेवाले इन्द्रके लिये सोम, तुम क्षरित होओ।

५ सोम, तुम जिस समय प्रस्तरके द्वारा अभिषुत होकर दशापवित्रकी ओर जाते हो, उस समय इन्द्रके उदरके लिये पर्याप्त होते हो।

६ सर्वापेक्षा वृत्रघ्न इन्द्र, क्षरित होओ। तुम उकथ मन्त्रके द्वारा स्तुत्य, शुद्ध, शोधक और अद्भुत हो।

७ अभिषुत और मदकर सोम शुद्ध और शोधक कहे जाते हैं। वह देवोंको प्रसन्न करनेवाले और शत्रुओंके विनाशक हैं।

२ अनुवाक । २५ सूक्त

पवमान सोम देवता । अगस्त्यके पुत्र दृढच्युत ऋषि । गायत्री छन्द ।

पवस्व दक्षसाधनो देवेभ्यः पीतये हरे । मरुद्भ्यो वायवे मदः ॥१॥
पवमान धिया हितो भि योनिं कनिक्रदत् । धर्मणा वायुमा विश ॥२॥
सं देवैः शोभते वृषा कविर्योनावधि प्रियः । वृत्रहा देववीतमः ॥३॥
विश्वा रूपाण्याविशन्पुनानो याति हर्यतः । यत्रामृतास आसते ॥४॥
अरुषो जनयन् गिरः सोमः पवत आयुषक् । इन्द्रं गच्छन् कविक्रतुः ॥५॥
आ पवस्व मदिन्तम पवित्रं धारया कवे । अर्कस्य योनिमासदम् ॥६॥

२६ सूक्त

सोम देवता । दृढच्युत ऋषिके पुत्र इध्मवाह ऋषि । गायत्री छन्द ।

तममृक्षन्त वाजिनमुपस्थे अदितेरधि । विप्रासो अण्व्या धिया ॥१॥

१ पाप-हर्त्ता सोम, तुम बल-साधक और मदकर हो तुम देवों, मरुतों और वायुके पानके लिये क्षरित होओ ।

२ शोधनकालीन सोम, हमारे कर्मसे धृत होकर शब्द करते हुए अपने स्थानमें प्रवेश करो । कर्म द्वारा वायुमें प्रवेश करो ।

३ यह सोम अपने स्थानमें अधिष्ठित, काम-वर्षक, क्रान्त प्रज्ञ, प्रिय, वृत्रघ्न और अतीव देवाभिलाषी होकर शोधित होते हैं ।

४ शोधित और कमनीय सोम सारे रूपोंमें प्रवेश करते हुए, जहाँ देवता रहते हैं, वहाँ जाते हैं ।

५ शोभन सोम शब्द करते हुए क्षरित होते हैं । निकटवर्त्ती इन्द्रके पास जाकर प्रज्ञासे युक्त होते हैं ।

६ सर्वापेक्षा मदकर और कवि सोम, पूजनीय इन्द्रके स्थानको प्राप्त करनेके लिये दशापवित्रको लाँघकर धाराके रूपमें प्रवाहित होओ ।

१ पृथिवीकी गोदमें उस वेगवान् सोमको मेधावी लोग अङ्गुलि और स्तुतिके द्वारा मार्जित करते हैं ।

तं गावो अभ्यनूषत सहस्रधारमक्षितम् । इन्दुं धर्तारमा दिवः ॥२॥

तं वेधां मेधयाह्यन् पवमानमधि द्यवि । धर्णसिं भूरिधायसम् ॥३॥

तमह्यन् भुरिजोर्धिया संवसानं विवस्वतः । पतिं वाचो अदाभ्यम् ॥४॥

तं सानावधि जामयो हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । हर्यतं भूरिचक्षसम् ॥५॥

तं त्वा हिन्वन्ति वेधसः पवमान गिरावृधम् । इन्दविन्द्राय मत्सरम् ॥६॥

२७ सूक्त

पवमान सोम देवता । अङ्गिराके पुत्र नृमेध ऋषि । गायत्री छन्द ।

एष कविरभिष्टुतः पवित्रे अधि तोशते । पुनानो घ्नन्नप स्रिधः ॥१॥

एष इन्द्राय वायवे स्वर्जित् परिषिच्यते । पवित्रे दक्षसाधनः ॥२॥

---

२ स्तुतियाँ बहुधाराओंवाले, अक्षीण, दीप्त और स्वर्गके धारक सोमकी स्तुति करती हैं ।

३ सबके धारक, बहु-कर्म-कारी, सबके विधाता और शुद्ध सोमको प्रज्ञाके द्वारा लोग स्वर्गके प्रति प्रेरित करते हैं ।

४ सोम पात्रमें अवस्थित, स्तुति-पति और अहिंसनीय हैं । परिचर्या-कारी ऋत्विक् दोनों हाथोंकी अँगुलियोंसे सोमको प्रेरित करते हैं ।

५ अँगुलियाँ उन हरित-वर्ण सोमको उन्नत प्रदेशमें प्रेरित करती हैं । वह कमनीय और बहु-दर्शक हैं ।

६ शोधक सोम, तुम्हें ऋत्विक् लोग इन्द्रके लिये प्रेरित करते हैं । तुम स्तुतिके द्वारा वर्द्धित, दीप्त और मदकर हो ।

---

१ यह सोम कवि और चारो ओरसे स्तुत हैं । यह दशापवित्रको लाँघकर जाते हैं । यह शोधित होकर शत्रु विनाश करते हैं ।

२ सोम सबके जेता और बलकारक हैं । इन्द्र और वायुके लिये इन्हें दशापवित्रमें सिक्त किया जाता है ।

एष नृभिर्वि नीयते दिवो मूर्धा वृषा सुतः । सोमो वनेषु विश्ववित् ॥३॥

एष गव्युरचिक्रदत् पवमानो हिरण्ययुः । इन्दुः सत्राजिदस्तृतः ॥४॥

एष सूर्येण हासते पवमानो अधि द्यवि । पवित्रे मत्सरो मदः ॥५॥

एष शुष्म्यसिष्यदद्न्तरिक्षे वृषा हरिः । पुमान इन्दुरिन्द्रमा ॥६॥
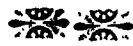
२८ सूक्त

सोम देवता । प्रियमेध ऋषि । गायत्री छन्द ।

एष वाजी हितो नृभिर्विश्वविन्मनसस्पतिः । अव्यो वारं वि धावति ॥१॥

एष पवित्रे अक्षरत् सोमो देवेभ्यः सुतः । विश्वा धामान्याविशन् ॥२॥

एष देवः शुभायतेधि योनावमर्त्यः । वृत्रहा देववीतमः ॥३॥

एष वृषा कनिक्रदद्दशभिर्जामिभिर्यतः । अभि द्रोणानि धावति ॥४॥

---

३ यह सोम मनुष्यों (ऋत्विकों) के द्वारा नाना प्रकारोंसे रखे जाते हैं। सोम द्युलोकके सिर हैं। यह मनोहर पात्रमें अवस्थित हैं। यह अभिषुत और सर्वज्ञ हैं।

४ यह सोम शोधित होकर शब्द करते हैं। यह हमारी गौ और हिरण्यकी इच्छा करते हैं। यह दीप्त, महाशत्रु-जेता और स्वयं अहिंसनीय हैं।

५ यह शोधक सोम, सूर्यके द्वारा पवित्र द्युलोकमें परित्यक्त होते हैं। सोम अतीव मदकर हैं।

६ यह बलवान् सोम अन्तरीक्ष (दशापवित्र) में जाते हैं। यह काम-वर्षक, हरित-वर्ण, पवित्र-कर्त्ता और दीप्त हैं। यह इन्द्रकी ओर जाते हैं।

१ यह सोम गमनशील, पात्रमें स्थापित, सर्वज्ञ और सबके स्वामी हैं। यह मेषलोमपर दौड़ते हैं।

२ यह सोम देवोंके लिये अभिषुत होकर उनके सारे शरीरोंमें प्रवेश पानेके लिये दशा-पवित्रमें जाते हैं।

३ यह अमर वृत्रघ्न और देवाभिलाषी सोम अपने स्थानमें शोभा प्राप्त करते हैं।

४ यह अभिलाषा-दाता, शब्दकर्ता और अंगुलियोंके द्वारा धृत सोम द्रोण-कलसकी ओर जाते हैं।

एष सूर्यमरोचयत् पवमानो विचर्षणिः । विश्वा धामानि विश्ववित् ॥५॥
एष शुष्म्यदाभ्यः सोमः पुनानो अर्षति । देवावीरघशंसहा ॥६॥

---

२९ सूक्त

सोम देवता । अङ्गिराके पुत्र नृमेध ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्रास्य धारा अक्षरन्वृष्णः सुतस्यौजसा । देवाँ अनु प्रभूषतः ॥१॥
सप्तिं मृजन्ति वेधसो गृणन्तः कारवो गिरा । ज्योतिर्जज्ञानमुक्थ्यम् ॥२॥
सुषहा सोम तानि ते पुनानाय प्रभूवसो । वर्धा समुद्रमुक्थ्यम् ॥३॥
विश्वा वसूनि संजयन् पवस्व सोम धारया । इनु द्वेषांसि सध्र्यक् ॥४॥
रक्षा सु नो अररुषः स्वनात् समस्य कस्य चित् । निदो यत्र मुमुच्महे ॥५॥

५ शोधनकालीन, सबके द्रष्टा और सर्वज्ञ सोम सूर्य और समस्त तेजःपदार्थोंको शोधित करते हैं।

६ यह शोधनकालिक सोम बलवान् और अहिंसनीय हैं। यह देवोंके रक्षक और पापियोंके घातक हैं।

---

१ वर्षक, अभिषुत और देवोंके ऊपर प्रभाव डालनेकी इच्छावाले इन सोमकी धारा क्षरित होती है।

२ स्तोता, विधाता और कर्मकर्ता अध्वर्यु लोग दीप्तिमान, प्रवृद्ध, स्तुत्य और सर्पण-स्वभाव सोमको मार्जित करते हैं।

३ प्रभूत धनवाले सोम, शोधन-समयमें तुम्हारे वे सब तेज शोभन होते हैं; इसलिये तुम समुद्रके समान और स्तुत्य द्रोण-कलसको पूर्ण करो।

४ सोम, सारे धनोंको जीतते हुए धारा-प्रवाहसे गिरो और सारे शत्रुओंको एक साथ दूर देशमें भेज दो।

५ सोम, जो दान नहीं करते, उनसे और अन्यान्य निन्दकोंकी निन्दासे हमारी रक्षा करो। ताकि हम मुक्त हो सकें।

एन्दो पार्थिवं रयिं दिव्यं पवस्व धारया । द्युमन्तं शुष्ममा भर ॥६॥

३० सूक्त

सोम देवता । अङ्गिराके पुत्र बिन्दु ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्र धारा अस्य शुष्मिणो वृथा पवित्रे अक्षरन् । पुनानो वाचमिष्यति ॥१॥
इन्दुर्हियानः सोतृभिर्मृज्यमानः कनिक्रदत् । इयर्ति वग्नुमिन्द्रियम् ॥२॥
आ नः शुष्मं नृषाह्यं वीरवन्तं पुरुस्पृहम् । पवस्व सोम धारया ॥३॥
प्र सोमो अति धारया पवमानो असिष्यदत् । अभि द्रोणान्यासदम् ॥४॥
अप्सु त्वा मधुमत्तमं हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । इन्दविन्द्राय पीतये ॥५॥
सुनोता मधुमत्तमं सोममिन्द्राय वज्रिणे । चारुं शर्धाय मत्सरम् ॥६॥

---

६ सोम, तुम धारा-रूपसे क्षरित होओ । पृथिवीस्थ और स्वर्गीय धन तथा दीप्तिमान् बलको ले आओ ।

१ बली इन सोमकी धारा अनायास दशापवित्रमें गिर रही है। शोधन-समयमें यह अपनी ध्वनिको प्रेरित करते हैं ।

२ यह सोम, अभिषवकारियोंके द्वारा प्रेरित होकर, शोधन-समयमें शब्द करते हुए इन्द्र-सम्बन्धी शब्द प्रेरित करते हैं ।

३ सोम, तुम धारा-रूपसे क्षरित होओ । उससे मनुष्योंके अभिभवकर, वीरवान् और अनेकोंके द्वारा अभिलषणीय बल प्राप्त हो ।

४ शोधन-कालमें यह सोम धारा-रूपसे द्रोण-कलसमें जानेके लिये दशापवित्रको लाँघकर क्षरित होते है ।

५ सोम, तुम जल (वसतीवरी)में सबसे अधिक मधुर और हरित-वर्ण (हरे रंगके) हो । इन्द्रके पानके लिये तुम्हें पत्थरसे पीसा जाता हैं ।

६ ऋत्विको, तुम लोग अत्यन्त मधुर रसवाले, मनोहर और मदकर सोमको हमारे बलार्थ, इन्द्रके पानके लिये, अभिषुत करो ।

३१ सूक्त

सोम देवता। रहूगणके पुत्र गोतम ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र सोमासः स्वाध्यः पवमानासो अक्रमुः। रयिं कृण्वन्ति चेतनम् ॥१॥

दिवस्पृथिव्या अधि भवेन्दो द्युम्नवर्धनः। भवा वाजानां पतिः ॥२॥

तुभ्यं वाता अभिप्रियस्तुभ्यमर्षन्ति सिन्धवः। सोम वर्धन्ति ते महः ॥३॥

आ प्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम्। भवा वाजस्य सङ्गथे ॥४॥

तुभ्यं गावो घृतं पयो बभ्रो दुदुह्रे अक्षितम्। वर्षिष्ठे अधि सानवि ॥५॥

स्वायुधस्य ते सतो भुवनस्य पते वयम्। इन्दो सखित्वमुश्मसि ॥६॥

३२ सूक्त

सोम देवता। आत्रेय श्यावाश्व ऋषि गायत्री छन्द।

प्र सोमासो मदच्युतः श्रवसे नो मघोनः। सुता विदथे अक्रमुः ॥१॥

आदीं त्रितस्य योषणो हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः। इन्दुमिन्द्राय पीतये ॥२॥

---

१ उत्तम कर्मवाले और शोधनकालीन सोम जा रहे हैं। वह हमें प्रज्ञापक धन दे रहे हैं।

२ सोम, तुम अन्नोंके स्वामी हो। तुम द्यावापृथिवीके प्रकाशक धनके वर्द्धक होओ।

३ सारे वायु तुम्हारे लिये तृप्तिकर होते हैं; नदियाँ तुम्हारे लिये जाती हैं। वह तुम्हारी महिमाको बढ़ावें।

४ सोम, तुम वायु और जलके द्वारा प्रवृद्ध होओ। वर्षक बल तुममें चारो ओरसे मिले। तुम संग्राममें अन्नके प्रापक होओ।

५ पिङ्गलवर्ण सोम, गो-समूह तुम्हारे लिये घृत और अक्षीण दुग्ध दोहन करता है। तुम उन्नत प्रदेशमें अवस्थित हो।

६ भुवनके पति सोम, हम तुम्हारे बन्धुत्वकी कामना करते हैं। तुम उत्तम आयुधवाले हो।

१ सोम मदस्रावी और अभिषुत होकर यज्ञमें हव्यदाताके अन्नके लिये जाते हैं।

२ इन्द्रके पानके लिये इन हरित-वर्ण सोमको त्रित ऋषिकी अङ्गुलियाँ पत्थरसे प्रेरित करती हैं।

आर्द्री हंसो यथा गणं विश्वस्यावीवशन्मतिम् । अत्यो न गोभिरज्यते ॥३॥
उभे सोमावचाकशन्मृगो न तक्तो अर्षसि । सीदन्नृतस्य योनिमा ॥४॥
अभि गावो अनूषत योषा जारमिव प्रियम् । अगन्नाजिं यथा हितम् ॥५॥
अस्मे धेहि द्युमद्यशो मघवद्भ्यश्च मह्यं च । सनिं मेधामुत श्रवः ॥६॥
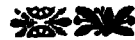
३३ सूक्त

सोम देवता। त्रित ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र सोमासो विपश्चितोऽपां न यन्त्यूर्मयः । वनानि महिषा इव ॥१॥
अभि द्रोणानि बभ्रवः शुक्रा ऋतस्य धारया । वाजं गोमन्तमक्षरन् ॥२॥
सुता इन्द्राय वायवे वरुणाय मरुद्भ्यः । सोमा अर्षन्ति विष्णवे ॥३॥
तिस्रो वाच उदीरते गावो मिमन्ति धेनवः । हरिरेति कनिक्रदत् ॥४॥

---

३ जैसे हंस जलमें प्रवेश करता है, वैसे ही सोम सारे स्तोताओंके मनको वशमें करते हैं। यह सोम गव्यके द्वारा स्निग्ध होते है।

४ सोम, तुम यज्ञ-स्थानको आश्रय करते हुए, मिश्रित होकर, मृगके समान, द्यावा-पृथिवीको देखते हो।

५ जैसे रमणी जारकी स्तुति करती है, वैसे ही, हे सोम, शब्द तुम्हारी स्तुति करते हैं। वह सोम, मित्रके समान, अपने हितार्थ गन्तव्य स्थानको जाते हैं।

६ सोम, हम हविवाले और मुझ स्तोताके लिये दीप्तिशाली अन्न प्रदान करो। धन मेधा और कीर्ति दो।

---

१ मेधावी सोम पात्रोंके प्रति, जल-तरङ्गके समान, जाते हैं, वृद्ध मृग जैसे वनमें जाते हैं, वैसे ही सोम जाते हैं।

२ पिङ्गल-वर्ण और दीप्त सोम, गोमान् अन्न प्रदान करते हुए, धारा-रूपसे द्रोण-कलसमें झरते हैं।

३ अभिषुत सोम इन्द्र, वायु, वरुण, मरुद्गण और विष्णुके प्रति गमन करते हैं।

४ ऋक् आदि तीन वाक्य (स्तुतियाँ) उच्चारित हो रहे हैं। दूध देनेके लिये गायें शब्द कर रही हैं। हरित-वर्ण सोम शब्द करते हुए गमन करते हैं।

अभि ब्रह्मीरनूषत यह्वीर्ऋतस्य मातरः । मर्मृज्यन्ते दिवः शिशुम् ॥५॥
रायः समुद्रांश्चतुरोऽस्मभ्यं सोम विश्वतः । आ पवस्व सहस्रिणः ॥६॥

३४ सूक्त

सोम देवता । त्रित ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्र सुवानो धारया तनेन्दुर्हिन्वानो अर्षति । रुजद्दृह्ला व्योजसा ॥१॥
सुत इन्द्राय वायवे वरुणाय मरुद्भ्यः । सोमो अर्षति विष्णवे ॥२॥
वृषाणं वृषभिर्यतं सुन्वन्ति सोममद्रिभिः । दुहन्ति शक्मना पयः ॥३॥
भुवत्त्रितस्य मर्ज्यो भुवदिन्द्राय मत्सरः । सं रूपैरज्यते हरिः ॥४॥
अभीमृतस्य विष्टपं दुहते पृश्निमातरः । चारु प्रियतमं हविः ॥५॥
समेनमह्रुता इमा गिरो अर्षन्ति सस्रुतः । धेनुर्वाश्रो अवीवशत् ॥६॥

---

५ स्तोताओं (ब्राह्मणों) के द्वारा प्रेरित, यज्ञकी मातृ-स्वरूपा और महती स्तुतियाँ उच्चारित हो रही हैं और द्युलोकके शिशु-समान सोम मर्जित हो रहे हैं।

६ सोम, धन-सम्बन्धी चारो समुद्रों (अर्थात् चारो समुद्रोंसे वेष्टित निखिल भूमण्डलके स्वामित्व) को चारो दिशाओंसे हमारे पास ले आओ और असीम अभिलाषाओंको भी ले आओ।

---

१ अभिषुत सोम प्रेरित होकर धारा-रूपसे दशापवित्रमें जाते हैं और सुदृढ़ शत्रु-पुरियोंको भी ढीली करते हैं।

२ अभिषुत सोम इन्द्र, वायु, वरुण, मरुद्गण और विष्णुके अभिमुख जाते हैं।

३ अध्वर्यु लोग, रसके सेचक और नियत सोमको वर्षक प्रस्तरके द्वारा अभिषुत करते हैं। वे कर्म-बलसे सोम-रूप दुग्धको दूहते हैं।

४ त्रित ऋषिका मदकर सोम उनके लिये और इन्द्रके पानके लिये शुद्ध हो रहा है। वह हरित-वर्ण सोम अपने रूपसे प्राप्त हुए हैं।

५ पृश्निके पुत्र मरुद्गण यज्ञाश्रय, होमसाधक और रमणीय सोमका दोहन करते हैं।

६ अकुटिल स्तुतियाँ उच्चारित होकर सोमके साथ मिल रही हैं। सोम भी शब्द करते हुए प्रीतिकर स्तुतियोंकी कामना करते हैं।

३५ सूक्त

सोम देवता। अङ्गिरा के पुत्र प्रभूवसु ऋषि। गायत्री छन्द।

आ नः पवस्व धारया पवमान रयिं पृथुम्। यया ज्योतिर्विदासि नः ॥१॥

इन्दो समुद्रमीङ्खय पवस्व विश्वमेजय। रायो धर्ता न ओजसा ॥२॥

त्वया वीरेण वीरवोऽभि ष्याम पृतन्यतः। क्षरा णो अभि वार्यम् ॥३॥

प्र वाज मिन्दुरिष्यति सिषासन्वाजसा ऋषिः। व्रता विदान आयुधा ॥४॥

तं गीर्भिर्वाचमीङ्खयं पुनानं वासयामसि। सोमं जनस्य गोपतिम् ॥५॥

विश्वो यस्य व्रते जनो दाधार धर्मणस्पतेः। पुनानस्य प्रभूवसोः ॥६॥

३६ सूक्त

सोम देवता। प्रभूवसु ऋषि। गायत्री छन्द।

असर्जि रथ्यो यथा पवित्रे चम्वोः सुतः। कार्ष्मन्वाजी न्यक्रमीत् ॥१॥

---

१ प्रवाह-शील सोम, तुम धारा-रूपसे हमारी चारो ओर क्षरित होओ। विस्तीर्ण धन और प्रकाशमान यश हमें दो।

२ जल-प्रेरक और शत्रुओंको कँपानेवाले सोम, अपने बलसे तुम हमारे धनके धारक होओ।

३ वीर सोम, तुम्हारे बलसे हम संग्रामाभिलाषी शत्रुओंको हरावेंगे। हमारे सामने स्वीकारके योग्य धन भेजो।

४ यजमानोंका आश्रय करनेकी इच्छासे अन्नदाता, सर्वदर्शी तथा कर्म और आयुधको जाननेवाले सोम अन्न प्रेरित करते हैं।

५ मैं स्तुति-वचनोंसे उन्हीं सोमकी स्तुति करता हूँ, जो गो-पालक हैं। हम स्तुति-प्रेरक और पवित्र सोमको वासित करेंगे।

६ सारे मनुष्य कर्मपति, पवित्र और प्रभूत धनवाले सोमके कर्ममें मन लगाते हैं।

---

१ रथमें जोते गये अश्वके समान दोनों चमुओं (स्रुकों)में अभिषुत सोम दशापवित्रमें बनाये गये वेगवान सोम युद्धमें विचरण करते हैं।

स वह्निः सोम जागृविः पवस्व देववीरति । अभि कोशं मधुश्चुतम् ॥२॥
स नो ज्योतींषि पूर्व्य पवमान वि रोचय । क्रत्वे दक्षाय नो हिनु ॥३॥
शुम्भमान ऋतायुभिर्मृज्यमानो गभस्त्योः । पवते वारे अव्यये ॥४॥
स विश्वा दाशुषे वसु सोमो दिव्यानि पार्थिवा । पवतामान्तरिक्ष्या ॥५॥
आ दिवस्पृष्ठमश्वयुर्गव्ययुः सोम रोहसि । वीरयुः शवसस्पते ॥६॥

३७ सूक्त

सोम देवता । रहूगण ऋषि । गायत्री छन्द ।

स सुतः पीतये वृषा सोमः पवित्रे अर्षति । विघ्नन्रक्षांसि देवयुः ॥१॥
स पवित्रे विचक्षणो हरिरर्षति धर्णसिः । अभि योनिं कनिक्रदत् ॥२॥

---

२ सोम, तुम वाहक, जागरूक और देवाभिलाषी हो। तुम मधुस्रावी दशापवित्रको लाँघकर क्षरित होओ ।

३ प्राचीन क्षरणशील सोम, तुम हमारे दिव्य स्थानोंको प्रकाशित करो और हमें यज्ञ तथा बलके लिये प्रेरित करो ।

४ यज्ञाभिलाषी ऋत्विकोंके द्वारा अलङ्कृत और उनके हाथोंसे परिमार्जित सोम मेषलोममय दशापवित्रमें शोधित होते हैं ।

५ वह अभिषुत सोम हविर्दाताको द्युलोक, भूलोक और अन्तरीक्षके सारे धनोंको दें ।

६ बलाधिपति सोम, तुम स्तोताओंके लिये अश्व, गौ और वीरपुत्रके अभिलाषी होकर स्वर्गपृष्ठपर चढ़ो ।

---

१ इन्द्र आदिके पानके लिये अभिषुत सोम काम-वर्षक, राक्षसनाशक और देव-कामी होकर दशापवित्रमें जाते हैं ।

२ वह सोम सबके दर्शक, हरित-वर्ण और सबके धारक होकर दशापवित्रमें जाते हैं । अनन्तर शब्द करते हुए द्रोण-कलसमें जाते हैं ।

स वाजी रोचना दिवः पवमानो वि धावति । रक्षोहा वारमव्ययम् ॥३॥
स त्रितस्याधि सानवि पवमानो अरोचयत् । जामिभिः सूर्यं सह ॥४॥
स वृत्रहा वृषा सुतो वरिवोविददाभ्यः । सोमो वाजमिवासरत् ॥५॥
स देवः कविनेषितो भि द्रोणानि धावति । इन्दुरिन्द्राय मंहना ॥६॥

---

३८ सूक्त

सोम देवता । रहूगण ऋषि । गायत्री छन्द ।

एष उ स्य वृषा रथोऽव्यो वारेभिरर्षति । गच्छन्वाजं सहस्रिणम् ॥१॥
एतं त्रितस्य योषणो हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । इन्दुमिन्द्राय पीतये ॥२॥
एतं त्यं हरितो दश मर्मृज्यन्ते अपस्युवः । याभिर्मदाय शुम्भते ॥३॥

---

३ वेगशाली, स्वर्गके दीप्ति-प्रद और क्षरणशील सोम राक्षस-विनाशक होकर मेषलोममय दशापवित्रको लाँघकर जा रहे हैं।

४ उन सोमने त्रित ऋषिके उन्नत यज्ञमें पवित्र होकर अपने प्रवृद्ध तेजोंसे सूर्यको प्रकाशित किया ।

५ जैसे अश्व युद्ध-भूमिमें जाता है, वैसे ही वृत्रघ्न, अभिलाषादाता अभिषुत अहिंसनीय सोम कलसमें जाते हैं ।

६ वह महान्, भींगे हुए, कविके द्वारा प्रेरित सोम, इन्द्रके लिये द्रोण-कलसमें जाते हैं ।

--**--

१ वह सोम अभिलाष-प्रद और रथस्वभाव (गति-परायण) होकर यजमानको बहुत अन्न देनेके लिये मेषलोमोंसे दशापवित्रसे होकर द्रोण-कलसमें जाते हैं ।

२ इन्द्रके पानके लिये त्रित ऋषिकी अँगुलियाँ इन क्लेदवाले और हरित-वर्ण सोमको पत्थरसे पीस रही हैं ।

३ दस हरित-वर्ण अँगुलियाँ, कर्माभिलाषिणी होकर, इन सोमको मार्जित करती हैं । इनकी सहायतासे इन्द्रके मदके लिये सोम शोधित होते हैं ।

एष स्य मानुषीष्वा श्येनो न विक्षु सीदति । गच्छञ्जारो न योषितम् ॥४॥
एष स्य मद्यो रसोऽव चष्टे दिवः शिशुः । य इन्दुर्वारमाविशत् ॥५॥
एष स्य पीतये सुतो हरिरर्षति धर्णसिः । क्रन्दन्योनिमभि प्रियम् ॥६॥

३९ सूक्त

आङ्गिरस बृहन्मति ऋषि । गायत्री छन्द ।

आशुरर्ष बृहन्मते परि प्रियेण धाम्ना । यत्र देवा इति ब्रवन् ॥१॥
परिष्कृण्वन्ननिष्कृतं जनाय यातयन्निषः । वृष्टिं दिवः परि स्रव ॥२॥
सुत एति पवित्र आ त्विषिं दधान ओजसा । विचक्षाणो विरोचयत् ॥३॥
अयं स यो दिवस्परि रघुयामा पवित्र आ । सिन्धोरूर्मा व्यक्षरत् ॥४॥

४ यह सोम मानव-प्रजाके बीच श्येन पक्षीके समान, बैठते हैं । जैसे उपपत्नीके पास जार जाता है, वैसे ही सोम जाते हैं ।

५ सोमके यह मादक रस सारे पदार्थको देखते हैं । वह सोम स्वर्गके पुत्र हैं । जिन सोम दशा-पवित्रमें प्रवेश करते हैं ।

६ पानके लिये अभिषुत, हरितवर्ण और सबके धारक सोम शब्द करते हुए अपने प्रिय स्थान (द्रोण-कलसमें) जाते हैं ।

१ महामति सोम, देवोंके प्रियतम शरीरसे युक्त होकर शीघ्र गमन करो । "देवता लोग जहाँ हैं उसी दिशाको जाता हू"—ऐसा सोम कह रहे हैं।

२ असंस्कृत स्थान वा यजमानको संस्कृत कहते हुए और याज्ञिकको अन्न देते हुए अन्तरीक्षसे, हे सोम, वृष्टि करो ।

३ अभिषुत सोम दीप्ति धारण करके और सारे पदार्थोंको देख और दीप्त करके बलसे शीघ्र दशापवित्रमें जाते हैं ।

४ यह सोम दशापवित्रमें सिञ्चित होकर जल-तरङ्गसे क्षरित होते हैं । यह स्वर्गके ऊपर शीघ्र गमन करते हैं ।

आविवासन् परावतो अथो अर्वावतः सुतः । इन्द्राय सिच्यते मधु ॥५॥
समीचीना अनूषत हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । योनावृतस्य सीदत ॥६॥

४० सूक्त

सोम देवता । बृहन्मति ऋषि । गायत्री छन्द ।

पुनानो अक्रमीदभि विश्वा मृधो विचर्षणिः । शुम्भन्ति विप्रं धीतिभिः ॥१॥
आ योनिमरुणो रुहद्गमदिन्द्रं वृषा सुतः । ध्रुवे सदसि सीदति ॥२॥
नू नो रयिं महामिन्दोऽस्मभ्यं सोम विश्वतः । आ पवस्व सहस्रिणम् ॥३॥
विश्वा सोम पवमान द्युम्नानीन्द्वाभर । विदाः सहस्रिणीरिषः ॥४॥
स नः पुनान आ भर रयिं स्तोत्रे सुवीर्यम् । जरितुर्वर्धया गिरः ॥५॥

५ दूर और पासके देवोंकी सेवाके लिये अभिषुत सोम, इन्द्रके लिये, मधुके समान सिञ्चित होते हैं।

६ भली भाँति मिले हुए स्तोता स्तुति करते हैं। वे हरित-वर्ण सोमको, पत्थरकी सहायतासे, प्रेरित करते हैं। अतएव देवो, यज्ञस्थानमें बैठो।

१ क्षरणशील और सर्वदर्शक सोम सारे हिंसकोंको लाँघ गये। उन मेधावी सोमको स्तुति द्वारा सब अलङ्कृत करते हैं।

२ अरुण-वर्ण (कृष्ण-लोहित ?) सोम द्रोण-कलसमें जा रहे हैं। अनन्तर अभिलाषा-दाता और अभिषुत होकर इन्द्रके पास जाते हैं और निश्चित स्थानमें बैठते हैं।

३ हे इन्दु (दीप्त) सोम, तुम अभिषुत होकर हमारे लिये शीघ्र महान् और बहुत धन, चारों ओरसे, दो।

४ क्षरणशील और दीप्त सोम, तुम बहुविध अन्न ले आओ और सहस्र-सङ्ख्यक अन्न प्रदान करो।

५ सोम, तुम हमारे स्तोताओंके लिये पवित्र और अभिषुत होकर सुपुत्रवाला धन ले आओ और स्तोताकी स्तुतिको वर्द्धित करो।

पुनानः इन्द्वा भर सोम द्विबर्हसं रयिम्। वृषन्निन्दो न उक्थ्यम् ॥६॥

४१ सूक्त

सोम देवता। कण्वगोत्रीय मेध्यातिथि ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र ये गावो न भूर्णयस्त्वेषा अयासो अक्रमुः। घ्नन्तः कृष्णामप त्वचम् ॥१॥
सुवितस्य मनामहेऽति सेतुं दुराव्यम्। साह्वांसो दस्युमव्रतम् ॥२॥
शृण्वे वृष्टेरिव स्वनः पवमानस्य शुष्मिणः। चरन्ति विद्युतो दिवि ॥३॥
आ पवस्व महीमिषं गोमदिन्दो हिरण्यवत्। अश्वावद्वाजवत् सुतः ॥४॥
स पवस्व विचर्षण आ मही रोदसी पृण। उषाः सूर्यो न रश्मिभिः ॥५॥
परि णः शर्मयन्त्या धारया सोम विश्वतः। सरा रसेव विष्टपम् ॥६॥

---

६ सोम, तुम शोधन-समयमें हमारे लिये द्यावापृथिवीमें परिवृद्ध धन ले आओ। वर्षक इन्दु (सोम), हमें स्तुत्य धन दो।

---

१ जो अभिषुत सोम, जलके समान, शीघ्र दीप्तियुक्त और गतिशील होकर काले चमड़ेवालोंको मारकर विचरण करते हैं, उन सोमोंकी स्तुति करो।

२ व्रत-शून्य और दुष्टमतिको दबाकर हम सुन्दर सोमकी राक्षस-बन्धन और राक्षस-हननवाली इच्छाकी स्तुति करेंगे।

३ अभिषव-समयमें बली सोमकी दीप्तियाँ अन्तरीक्षमें विचरण करती हैं। वृष्टिके समान सोमका शब्द सुनाई देता है।

४ सोम, तुम अभिषुत होकर गौ, अश्व और बलसे युक्त महान्न हमारे सामने प्रेरित करो।

५ सर्वदर्शक सोम, तुम प्रवाहित होओ। जैसे सूर्य अपनी किरणोंसे दिनोंको पूर्ण करते हैं, वैसे ही तुम द्यावापृथिवीको पूर्ण करो।

६ सोम, हमारी सुखकरी धाराके द्वारा चारो ओर वैसे ही पूर्ण करो, जैसे नदियाँ भूमण्डलको पूरित करती हैं।

४२ सूक्त

सोम देवता। मेध्यातिथि ऋषि। गायत्री छन्द।

जनयन्रोचना दिवो जनयन्नप्सु सूर्यम्। वसानो गा अपो हरिः ॥१॥
एष प्रत्नेन मन्मना देवो देवेभ्यस्परि। धारया पवते सुतः ॥२॥
वावृधानाय तूर्वये पवन्ते वाजसातये। सोमाः सहस्रपाजसः ॥३॥
दुहानः प्रत्नमित् पयः पवित्रे परिषिच्यते। क्रन्दन्देवाँ अजीजनत् ॥४॥
अभि विश्वानि वार्याभि देवाँ ऋतावृधः। सोमः पुनानो अर्षति ॥५॥
गोमन्नः सोम वीरवदश्वावद्वाजवत् सुतः। पवस्व बृहतीरिषः ॥६॥

४३ सूक्त

सोम देवता। मेध्यातिथि ऋषि। गायत्री छन्द।

यो अत्य इव मृज्यते गभिर्मदाय हर्यतः। तं गीर्भिर्वासयामसि ॥१॥
तन्नो विश्वा अवस्युवो गिरः शुम्भन्ति पूर्वथा। इन्दुमिन्द्राय पीतये ॥२॥

---

१ यह हरित-वर्ण सोम द्युलोक-सम्बन्धी नक्षत्रादि और अन्तरीक्षमें सूर्यको उत्पन्न करके अधोगामी जलोंसे ढक कर जाते हैं।

२ यह सोम प्राचीन स्तोत्रसे युक्त और अभिषुत होकर देवोंके लिये धारा-रूपसे गिरते हैं

३ वर्द्धमान अन्नकी शीघ्र प्राप्तिके लिये असङ्ख्यात-वेग सोम क्षरित होते हैं।

४ पुराण रसवाले सोम दशापवित्रमें होते और शब्द करते हुए देवोंको प्रादुर्भूत करते हैं

५ यह सोम अभिषव-समयमें सारे स्वीकरणीय धनों और यज्ञ-वर्द्धक देवोंके सामने जाते हैं।

६ सोम, तुम अभिषुत होकर हमें गौ, अश्व, वीर और संग्रामसे युद्ध धन तथा बहुत अन्न दो।

१ जो सोम निरन्तर गमनवाले अश्वके समान देवोंके मदके लिये गव्य द्वारा मिश्रित होते हैं और जो कमनीय हैं, हम उन्हीं सोमको स्तुति द्वारा प्रसन्न करेंगे।

२ रक्षणाभिलाषिणी स्तुतियाँ, पहलेके समान, इन्द्रके पानके लिये इन सोमको दीप्त करती हैं।

पुनानो याति हर्यतः सोमो गीर्भिः परिष्कृतः । विप्रस्य मेध्यातिथेः ॥३॥
पवमान विदा रयिमस्मभ्यं सोम सुश्रियम् । इन्दो सहस्रवर्चसम् ॥४॥
इन्दुरत्यो न वाजसृत् कनिक्रन्ति पवित्र आ । यदक्षारति देवयुः ॥५॥
पवस्व वाजसातये विप्रस्य गृणतो वृधे । सोम रास्व सुवीर्यम् ॥६॥

३ मेधावी मेध्यातिथिके लिये, शोधन-समयमें, कमनीय सोम स्तुतियोंके द्वारा अलङ्कृत होकर कलसकी ओर जाते हैं ।

४ क्षरणशील (पवमान) शोधनकालीन अथवा अभिषवकालिक इन्दु (सोम), हमें उत्तम दीप्तिवाले और बहु-श्री-सम्पन्न धन दो ।

५ संग्रामगामी अश्वके समान जो सोम दशापवित्रमें शब्द करते हैं, वह जब देवाभिलाषी होते हैं, तब अत्यन्त (ध्वनि) करते हैं ।

६ सोम, हमें अन्न देने और स्तोता मेध्यातिथिको (मुझे) बढ़ानेके लिये प्रवाहित होओ । सोम, सुन्दर वीर्यवाला पुत्र भी दो ।

अष्टम अध्याय समाप्त

षष्ठ अष्टक समाप्त

वेद क्यों पढ़ना चाहिये ?

इसलिये कि—

१ वेद हिन्दूधर्मकी मूल पुस्तक है।

२ वेद मनुष्यजातिकी सबसे प्राचीन पुस्तक है।

३ सदाचार, वीरता, परोपकार, देशसेवा, सत्य, त्याग आदि मनुष्यजातिकी जितनी उच्चतम गुणावली है, सबका वेदमें बड़ा ही सुन्दर विवरण है।

४ वेद हमारी जातिके प्राचीन इतिहास, कला, विज्ञान, धर्म-प्रेम, समाज-व्यवस्था, राष्ट्रधर्म, यज्ञ रहस्य आदिको दर्पणकी तरह दिखाता है।

इसलिये जिस प्रकार हर एक ईसाई बाइबिलको और हर एक मुसलमान क़ुरानको, गाड और खुदाकी विमल वाणी समझकर, अपने पास रखता है, उसी प्रकार ईश्वरका पवित्र उपदेश जानकर वेदको अपने पास रखना हर एक हिन्दूका आवश्यक कर्त्तव्य है।

लज्जाकी बात है कि, जर्मनी, फ्रांस, अमेरिका, इंगलैंड आदिके विद्वानोंने तो वेदकी सारी पुस्तकोंको छपा डाला और हिन्दीमें एक भी ऋग्वेदका सस्ता अनुवाद नहीं! इसी अभावकी पूर्तिके लिये हमने "वैदिक-पुस्तकमाला" द्वारा सरस–सरल हिन्दीमें चारो वेदोंका अनुवाद कराना निश्चित किया है। अबतक ऋग्वेदके छ अष्टक निकल चुके हैं। छहो अष्टकोंका मूल्य १२) रु० है।

॥) देकर "वैदिक-पुस्तकमाला"के स्थायी ग्राहक बननेवालोंको कभी भी डाक खर्च नहीं देना होता और पुस्तक निकलते ही वी० पी० से भेज दी जाती है।